Text Dark And Light Within The Book Only

UNIVERSAL LIBRARY
OU_182351
UNIVERSAL LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

जोधराज

हम्मीररासो 1949.

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

1.

2.

3.

OUP—707—25-4-81— 10,000.

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. [illegible] Accession No. [illegible]

Author [illegible]

Title [illegible]

This book should be returned on or before the date last marked below

नागरीप्रचारिणी ग्रंथमाला—११

हम्मीररासो

कवि जोधराज कृत

संपादक

श्यामसुंदरदास बी० ए०

प्रकाशक : नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

मुद्रक : देवताप्रसाद गहमरी, संसार प्रेस, काशी

संशोधित और प्रवर्धित चतुर्थ संस्करण: २००० प्रतियाँ

संवत् २००६ वि० : मूल्य २।)

तृतीय संस्करण का वक्तव्य

सभा द्वारा जोधराजकृत 'हम्मीररासो' का प्रथम संस्करण संवत् १९६५ में प्रकाशित हुआ था। उसमें मूल के अतिरिक्त पादटिप्पणी में कुछ पाठांतर भी दिए गए थे। ग्रंथ किस हस्तलेख के आधार पर संपादित किया गया और पाठांतर देने में किस दूसरे हस्तलेख से सहायता ली गई इसका उल्लेख ग्रंथ के संपादक स्वर्गीय बाबू श्यामसुंदरदासजी ने अपनी भूमिका में नहीं किया है। वहाँ इतना ही संकेत है कि कुँअर कृष्णसिंहजी वर्मा से यह काव्य प्राप्त हुआ था। 'खोज' में हम्मीररासो का कोई हस्तलेख आज तक नहीं मिला। सभा के आर्यभाषा-पुस्तकालय में अलबत एक आधुनिक हस्तलेख है जो सं० १८९४ की 'असल प्रति' की अनुलिपि है और संवत् १९६१ में प्रस्तुत हुआ है। सभा से हम्मीररासो का प्रथम संस्करण इस अनुलिपि के चार वर्ष बाद प्रकाशित हुआ। अतः उसके संपादन के लिये ही कदाचित् यह अनुलिपि कराई गई होगी और इसका उपयोग भी किया गया होगा। फिर भी इस अनुलिपि में अनेक पाठांतर मिलते हैं और एकाध स्थल पर कुछ पंक्तियाँ भी अधिक हैं। इसमें दो पृष्ठ (१७५-१७६) नहीं हैं। पूरी अनुलिपि १७९ पृष्ठों में समाप्त हुई है।

प्रथम संस्करण में एकरूपता नहीं थी। कुछ ऐसे कठिन शब्द भी थे जिनका अर्थ देना आवश्यक जान पड़ा। अतः इस संस्करण (तृतीय आवृत्ति) में यह पूर्ति कर दी गई है। यह कार्य बहुत मनोयोगपूर्वक संपन्न किया है 'नागरीप्रचारिणी पत्रिका' के सहायक संपादक श्री शिवनाथ, एम्० ए० ने जो नई पीढ़ी के अच्छे आलोचक

संस्करण में एकरूपता लाने के लिये जिस वर्तनी का व्यवहार किया गया है उसका विस्तार करने की यहाँ कोई विशेष आवश्यकता नहीं। यह संस्करण संपादन की थोड़ी सामग्री के होते हुए भी जहाँ तक हो सका है उपयोगी बना दिया गया है। द्वितीय आवृत्ति बहुत दिनों पूर्व समाप्त हो गई थी। इस आवृत्ति के प्रकाशित होने में कुछ देर सुसंपादन के कारण ही हुई है। आशा है कि यह संस्करण विशेष लाभदायक प्रतीत होगा।

वासंतिक नवरात्र
सं० २००५ वि०

विश्वनाथप्रसाद मिश्र
(साहित्य-मंत्री)

चतुर्थ संस्करण के सम्बन्ध में

जोधराज-कृत 'हम्मीररासो' का चतुर्थ संस्करण प्रस्तुत है। इसके तृतीय संस्करण में जो त्रुटियाँ रह गयी थीं, उनका सुधार करने की चेष्टा इस संस्करण में की गयी है, इसीसे इसके प्रकाशन में कुछ विलम्ब हुआ है।

विजयादशमी, २००६ वि०
नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

काशीनाथ उपाध्याय 'भ्रमर'
प्रकाशन-मन्त्री

भूमिका

यह ऐतिहासिक काव्य कवि जोधराज का बनाया हुआ है। नीमराणा के राजा चन्द्रभान की आज्ञा से जोधराज ने इस काव्य को संवत् १७८५ में रचा। इसमें रणथंभौर के वीरशिरोमणि महाराज हम्मीरदेव का चरित्र और विशेष कर अलाउद्दीन के साथ उनके विग्रह का वर्णन है। भारतवर्ष के इतिहास में हम्मीर का नाम प्रसिद्ध है और उसके चरित्र पढ़ और सुनकर लोग अब तक मनोमुग्ध और उत्साहित होते हैं। कवियों और लेखकों ने भी उसके चरित्र का गान करने में कोई बात उठा नहीं रखी है। अब तक कविता में इस विषय के तीन ग्रंथ प्राप्त हुए हैं। एक तो चन्द्रशेखर का हम्मीर-हठ है जो छपकर प्रकाशित हो चुका है। दूसरा ग्वाल कवि का ग्रंथ है जो अब तक छपा नहीं। उसकी कविता-शैली भी ऐसी उत्तम नहीं है। तीसरा ग्रंथ यह जोधराज का है। और भी अनेक ग्रंथ इस विषय के होंगे, इसमें कोई सन्देह नहीं। गद्य में भी अनेक ग्रंथ लिखे गए हैं परंतु दुःख के साथ कहना पड़ता है कि उनमें ऐतिहासिक खोज का बहुत कुछ अभाव देख पड़ता है। राजपूताने में दो हम्मीर हो गए हैं। एक उदयपुर के और दूसरे रणथंभौर के। लेखकों ने प्रायः दोनों के चरित्रों को मिलाकर एक कर डाला है और इसी भ्रम में पड़कर इतिहास के विरुद्ध बातें लिख डाली हैं। जिन हम्मीर की इतनी प्रसिद्धि है और जिनके गुण गाने से अब तक लोग उत्साहित होते हैं तथा जिन्होंने अलाउद्दीन से रार ठानी थी वे रण-थंभौर के चौहान थे, न कि उदयपुर के सिसोदिया हम्मीर। अतएव इस काव्य के विषय में कुछ लिखने के पहले अथवा इसके संबंध की ऐतिहासिक बातों का उल्लेख करने के पहले मैं जोधराज-कृत इस काव्य में चौहान हम्मीर का जो कुछ चरित्र वर्णन किया गया है उसे

दे देना उचित समझता हूँ। इस सारांश के लिये, जो आगे दिया जाता है, मैं कुँवर कन्हैयाजी का अनुगृहीत हूँ।

भारतवर्ष के अंतिम सम्राट् भृगु[१]-कुलोत्पन्न महाराज पृथ्वीराज के वंश में चंद्रभान नाम का एक वीर पुरुष था। यद्यपि नीमराणा अब एक छोटी सी रियासत अलवर राज्य के अंतर्गत है, पर यहाँ के अधिपति चौहानों के मुकुटमणि माने जाते हैं। ये राजा अपने को महाराज पृथ्वीराज का वंशधर बताते हैं। महाराज चन्द्रभान को उनके वीरत्व, दातृत्व, औदार्य्य, पराक्रम, बुद्धिमत्ता और सर्वप्रियता के कारण लोग राठ[२] का महाराज कहा करते थे, और सब लोग उसी भाँति उसका आदर भी करते थे। उक्त चंद्रभान के दरबार में आदि-गौड़-कुलोत्पन्न अत्रिगोत्रीय ब्राह्मण, बालकृष्ण का पुत्र जोधराज था। इस वंश के लोग डिडवरिया राव कहे जाते थे।

एक समय चंद्रभान ने जोधराज से हम्मीर रासो के सुनने की इच्छा प्रकट की और कहा कि इस काव्य में महाराज हम्मीर की वंशावली, उनका अलाउद्दीन से वैर, उनकी वीरता और उनके युद्ध-कौशल इत्यादि का यथाक्रम संक्षेप में वर्णन होना चाहिए। तब जोधराज ने इस काव्य "हम्मीर रासो" की रचना की।

सृष्टिरचना—प्रथम कल्प के आदि में संसार रूपी उपवन के जीव-निर्जीव, प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष सब पदार्थ वीर्य्यस्वरूप से उस परम प्रभु परमात्मा अनादि जगदीश्वर के स्वरूप में स्थित थे और वह प्रभु योगनिद्रा में निमग्न था। एक समय वह अपनी शक्ति का आप ज्ञान करके निद्रा से उठा और उसके इच्छा करते ही माया उत्पन्न

---

१ चहुआनों के भृगुवंशी होने का वर्णन आगे इसी पुस्तक में है।

२ पुस्तक में मूल पाठ "राठ पतिशाह" है जिसका अर्थ "राठ का बादशाह" होता है। 'राठ' उस भूभाग का नाम है जो अलवर और जयपुर राज्य के बीच में है और जहाँ नीमराणा राज्य स्थित है।

हुई। जिस समय शेषशायी भगवान् के नाभि-कमल से ब्रह्मा उत्पन्न हुए वह वाराह-कल्प का आदि था।

मानवसृष्टि—जलज से उत्पन्न हुआ ब्रह्मा बहुत समय पर्य्यंत इसी विचार में मुग्ध रहा कि मैं क्या करूँ। इसी प्रकार जब बहुत समय बीत गया तब उसे आपसे आप अनुभव हुआ कि तप करके सृष्टि उत्पन्न करनी चाहिए और उसने वैसा ही किया। पहले तो उसने अप, तेज, वायु, पृथ्वी, आकाशादि पंच महातत्त्वों की रचना की, तदनंतर बीज वृक्षादि जड़ वस्तुओं की रचना करके उसने सनक, सनंदन, सनत्कुमारादि चार पुत्र रचकर मानव जाति की वृद्धि करनी चाही; किंतु जब सनकादि कुमारों ने अखंड ब्रह्मचर्य्य धारण कर सांसारिक विषय-भोगादि से अरुचि प्रगट की तब ब्रह्मा ने उसी प्रकार से अन्यान्य मुनिवरों को उत्पन्न किया। ब्रह्मा के मन से मरीचि, कानों से पुलस्त्य, नाभि से पुलह, हाथों से कृतब्रह्म, त्वचा से नारद, छाया से कर्दम, पीठ से अर्द्धम, कंठ से धर्म्म और ओष्ठ से लोम ऋषि उत्पन्न हुए। इन्हीं ऋषियों से मनुष्यों की भिन्न भिन्न जातियों की वृद्धि हुई।

चंद्रवंश और सूर्यवंश—ब्रह्मा के पुत्र मरीचि के १२ स्त्रियाँ थीं जिनमें से एक का नाम कला था। कला के कश्यप और धर्म दो पुत्र हुए। अत्रि ऋषि के तीन पुत्र हुए जिनमें से बड़े का नाम सोम था और कनिष्ठ का नाम दुर्वासा। उक्त सोम का पुत्र बुध और बुध का पुत्र पुरूरवा हुआ। इस पुरूरवा के ६ पुत्र हुए जिनसे चंद्रवंशियों के ६ कुल प्रख्यात हैं।

इसी प्रकार भृगु मुनि से चहुआन क्षत्रियों का वंश चला जिसका वर्णन इस प्रकार से है कि भृगु मुनि की पहली स्त्री से धाता और विधाता नाम के उनके दो पुत्र हुए। भृगु की दूसरी स्त्री से दैत्यगुरु का और च्यवन ऋषि का जन्म हुआ। च्यवन के ऋचीक, इनके जमदग्नि और जमदग्नि के परशुराम नामक क्षात्र वृत्तिधारी पुत्र हुए जिन्होंने क्षात्र धर्म्म से च्युत विषयलोलुप सहस्रों क्षत्रिय राजाओं

को मारकर उनका वंश पर्य्यंत नाश कर डाला और उनके रुधिर से पितृ-देवताओं का तर्पण किया। इस प्रकार परशुराम के पराक्रम से प्रसन्न हुए पितृ-देवताओं ने परशुराम को शांत होकर तप करने की आज्ञा दी।

आबूराज पर्वत पर यज्ञ और चहुआनों की उत्पत्ति—इधर सृष्टि के शासनकर्ता क्षत्रियों के समूल उन्मूल हो जाने से जब परस्पर अन्याय आचरण के कारण प्रजा पीड़ित हो उठी और दैत्य और राक्षसों के उपद्रव से ऋषि लोगों के यज्ञादि कर्मों में भी विघ्न पड़ने लगा तब ऋषिगण संसार की रक्षा और उसके उचित शासन के निमित्त फिर क्षत्रियों के उत्पन्न करने की अभिलाषा से यज्ञ करना विचार कर अर्बुद गिरि अर्थात् आबू के पहाड़ पर गए। वहाँ पर सब ऋषियों ने शिव की आराधना की। तब शिव ने भी वहाँ आकर मुनिवरों की प्रार्थना स्वीकार की और वे उक्त पर्वत पर अचल रूप से विराजमान हुए। तब मुनिवरों ने भी सुंदर वेदिका रचकर यज्ञ-कर्म्म आरंभ किया। इस यज्ञ में द्वैपायन, वशिष्ठ, लोम, दालिभ, जैमिनि, हर्षन, धौम्य, भृगु, घटयोनि, कौशिक, वत्स, मुद्गल, उद्दालक, मातंग, पुलह, अत्रि, गौतम, गर्ग, शांडिल्य, भरद्वाज, जावालि, मारकंडेय, जरत्कारु, जाजुल्य, पराशर, च्यवन और पिप्पलाद आदि मुनियों का समारोह हुआ था। इसके अतिरिक्त शिव और ब्रह्मा भी स्वयं वहाँ उपस्थित थे। इस प्रकार समुचित ढंग से जिस समय यज्ञ हो रहा था और वेदिका से उत्पन्न हुई अग्निशिखाएं आकाश स्पर्श कर रही थीं, उसी समय उस वेदिका में से चालुक्य, प्रमार और परिहार क्षत्रिय क्रम से निकले। इन्होंने मुनिवरों की आज्ञा पाकर दैत्यों से युद्ध भी किया; किंतु उन्हें परास्त करने में वे समर्थ न हो सके। तब ऋषियों ने उक्त यज्ञस्थल त्याग कर उसी पहाड़ पर नैऋत्य दिशा में दूसरा अग्निकुंड निर्माण किया। इस बार के यज्ञ में ब्रह्मा ने ब्रह्मा, भृगु मुनि ने होता, वशिष्ठ ने आचार्य, वत्स ने ऋत्विक और परशुराम ने यजमान का कार्य संपादन किया।

निदान इस यज्ञ से जो अग्नि के समान तेजवाला पुरुष उत्पन्न हुआ उसका नाम चहुआन जी हुआ; क्योंकि इनके चार बाहु थे और प्रत्येक बाहु खड्ग, धनुष, शूल और चक्र इन चारों आयुधों को धारण किए हुए था। इस पुरुष ने ऋषिवरों के आशीर्वाद और निज कुलदेवी आशापूरा के प्रसाद से संपूर्ण दैत्यों का वध कर ऋषि और देवताओं को प्रसन्न किया।

कथामुख—इस प्रकार यज्ञकुंड से उत्पन्न चहुआन जी के वंश में बहुत दिनों पीछे विक्रमीय १२वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध के आरंभ में राव जैतराव चहुआन जन्मे। एक समय जैतराव जंगल में शिकार खेलने गए। वहाँ उन्होंने एक बलवान बाराह को देखकर उसके पीछे घोड़ा डाल दिया। बहुत दूर निकल जाने पर एक गंभीर वन में बाराह तो अदृष्ट हो गया और राव जी संगी-साथियों से छूटकर चकित चित्त अकेले उस वन में भटकते फिरने लगे। ऐसे समय में वहाँ उन्हें एक ऋषि का आश्रम देख पड़ा। वहाँ जाकर वे देखते क्या हैं कि परम रमणीय पर्णकुटी में कुशासन पर बैठे हुए पद्म ऋषि जी ध्यान में मग्न हैं। राव जी ने उनके निकट जाकर साष्टांग प्रणाम किया और उनके दर्शन से अपने को कृतार्थ जानकर वे उनकी स्तुति करने लगे। निदान तब ऋषि ने भी प्रसन्न होकर राव जी को आशीर्वाद दिया, और कुछ दिवस पर्य्यंत उसी स्थान पर रहकर उन्हें शिवार्चन करने का भी उपदेश दिया। राव जी ने वैसा ही करके शिव को प्रसन्न किया। तब ऋषि ने पुनः आज्ञा दी कि राव जी, तुम यहाँ एक गढ़ भी निर्माण करो। अतः राव जी ने उसी समय अपने मित्र, मंत्री और सुहृदों को बुलाकर संवत् ११९० वैशाख सुदी अक्षय तृतीया, शनिवार को पाँच घटी सूर्य्योदय में रणथंभ गढ़ की नींव डाली और उसी के पार्श्व में एक रमणीक नगर भी बसाया।

ऋषि का तप भंग होना—उस पर्वतावेष्टित प्रच्छन्न एवं दृढ़ दुर्ग की रम्य भूमि को पद्म ऋषि ने राव जी से अपने रहने के लिये माँग लिया और उसी में रहकर वे तप करने लगे। जब उनके उग्र

एवं पवित्र तप की सूचना इंद्र को मिली तब भीरुहृदय इंद्र ने अपने श्रीभ्रष्ट होने के भय से आशंकित होकर पद्म ऋषि का तप भ्रष्ट करना चाहा और इसीलिये उसने इस कर्म के लिये कुकर्मी मकरकेतु को उपयुक्त जान कर उसे आज्ञा दी कि हे मित्र, तू अपने सच्चे सहचर वसंत के सहित जाकर रणथंभ गढ़ में तप करते हुए तेजस्वी पद्म ऋषि की श्री नष्ट कर दे। इस प्रकार इंद्र से उत्तेजित किया हुआ कामदेव अपनी सहकारी षड् ऋतुओं सहित रणथंभ गढ़ में ध्यानमग्न पद्म ऋषि को जाग्रत करने की इच्छा से ऋतुओं के उपचार का प्रयोग करने लगा, किंतु ग्रीष्म का प्रचंड मार्तंड और मलय समीर, पावस के पपीहा, शरद की स्वच्छ चाँदनी, शिशिर के दुशाला और हेमंत के पाला को पराजित करनेवाले मसाले भी जब ऋषि की समाधि भंग न कर सके, तब उस कुसुमायुध ने साक्षात् शिव को रसिक बनानेवाले वसंत का प्रयोग किया अर्थात् उस जनशून्य वन में नाना प्रकार के पुष्प प्रस्फुटित हुए और उनपर मधुप गुंजार करते हुए आनंद से मकरंद पान करने लगे, जहाँ तहाँ नाना वर्ण के पक्षी-शावक कलरव करते हुए कल्लोल करने लगे। उसी समय इंद्र द्वारा प्रेरित अप्सराओं ने आकर नृत्य और गान करते हुए उस शिखरशैला को इंद्र का अखाड़ा बना दिया, तब उपयुक्त समय जानकर कामदेव ने भी अपने शरों से मुनिवर के शरीर को बेध दिया। इस प्रकार समाधि भंग होने पर जब मुनि ने आँखें उठाकर देखा तो देखते क्या हैं कि उस रणथंभ के अभेद्य दुर्ग में शांत रस को पराजित कर शृंगार रस ने पूर्णतया अपना अधिकार जमा लिया है और एक चंद्रमुखी, मृगलोचनी, गयंद-गामिनी, नवयौवना सम्मुख खड़ी हुई मुनि की ओर कटाक्ष-सहित देख रही है। यह देखकर पद्म ऋषि के शरीर से शांति और तप इस प्रकार बिदा हो गए जैसे तुषाराहत वृक्ष सुकोमल पल्लवों को त्याग देते हैं एवं जिस प्रकार फल के लगते ही वृक्षगण सूखे पुष्प का अनादर कर देते हैं। इस प्रकार कामातुर होकर पद्म ऋषि समाधि छोड़ सुंदरी

का आलिंगन करने को उत्सुक हो उठे। उधर उस रमणी ने भी ऋषि के मनोगत भाव जानकर उनका हाथ पकड़ लिया और तब वे दोनों आनंद से रस-क्रीड़ा करने लगे।

पद्म ऋषि का शोक और शरीर-त्याग—इस प्रकार जब अधिक समय व्यतीत हो गया तब सुंदरी तो अंतर्हित होकर स्वर्ग चली गई और पद्म ऋषि की भी मोहनिद्रा खुली। तब वे मन ही मन विचार और पश्चात्ताप करके विलाप करते हुए आप ही आप कहने लगे—हाय! मैं कैसा दुर्बुद्धि हूँ कि मैंने क्षणिक सुख के लिये अपना सर्वनाश किया और फिर भी जिसके लिये सर्वस्व का त्याग किया वह भी पास नहीं। हा! यह मैंने अब जाना कि पाप का परिणाम केवल संताप होता है और संतप्त हृदय मनुष्य जो कुछ कर डाले सब थोड़ा है। हाय, मैं तप से भी गया, भोग से भी गया, अब मैं इस शरीर को रखकर क्या करूं? इस प्रकार शोकातुर होकर मुनि ने एक वेदिका रचकर उसमें अपने शरीर के पाँच खंड करके होम कर दिए। जिस समय पद्म ऋषि ने शरीर-त्याग किया उस दिन माघ शुक्ल १२ सोमवार आर्द्रा नक्षत्र था। पद्म ऋषि के मस्तक से अलाउद्दीन बादशाह, वक्षस्थल से राव हम्मीर, भुजाओं से महिमा-शाह और मीर गभरू, चरणों से उर्वशी अर्थात् अलाउद्दीन की उस बेगम का अवतार हुआ जो इस आख्यान की नायिका है।

हम्मीर का जन्म—पद्म ऋषि के उपर्युक्त रीति से शरीर त्यागने के पश्चात् अर्थात् संवत् ११४१, शाका १००६ दक्षिणायन शरद ऋतु कार्तिक शुक्ला १२ रविवार को उत्तर भाद्रपद नक्षत्र में उक्त रणथंभ गढ़ के चहुआन राव जैतराव जी के हम्मीर नाम का एक पुत्र जन्मा। पुत्र का प्रफुल्लित मुख देखकर जैतराव के आनंद का ठिकाना न रहा। उन्होंने ज्योतिषियों को बुलाकर लग्न-कुंडली बनवाई। सहस्रों ब्राह्मणों, भिक्षुकों और बंदीजनों को यथायोग्य संमान सहित अन्नदान, गोदान, हेमदान, गजदान देकर सबको संतुष्ट किया गया।

जिस समय रणथंभ गढ़ में हम्मीर का जन्म हुआ उसी समय गजनी में शहाबुद्दीन के पुत्र अलाउद्दीन का तथा मीणा के घर महिमा-मंगोल दोनों भाइयों का और गभरू के घर उक्त स्त्री का अवतार हुआ।

हम्मीर और अलाउद्दीनशाह का वैर—एक समय वसंत ऋतु के आरंभ में अलाउद्दीन ने सहस्रों सैनिक और अमीर उमराओं तथा बेगमों को साथ लेकर शिकार के लिये यात्रा की। उसने एक परम रमणीक वन प्रांत में शिविर लगवा दिए और वह उसी वन में इतस्ततः आखेट करके जंगली जंतुओं के प्राण संहार करने लगा। इसी प्रकार जब बसंत का अंत होकर ग्रीष्म के आतप से भूमि उत्तप्त हो रही थी, अलाउद्दीन सब सर्दारों-सहित शिकार खेलने चला गया। इधर बेगमें भी अपनी सखी सहेली और अगनित खोजाओं को लेकर एक कमल वन-संपन्न निर्मल सरोवर पर जाकर जलक्रीड़ा करने लगीं। दैवयोग से उसी समय सहसा वायु का वेग बढ़ते बढ़ते इतना प्रचंड हो गया कि बड़े बड़े मेघस्पर्शी वृक्ष टूट टूट कर गिरने लगे; धूलि के आकाश में आच्छादित हो जाने के कारण घोर अंधकार छा गया। इस आकस्मिक घटना से भयभीत होकर सब लोग तीन तेरह होकर अपने अपने प्राणों की रक्षा करने के लिये जहाँ तहाँ भागने लगे। जलक्रीड़ा करती हुई बेगमों में से 'रूपविचित्रा' नामक एक बेगम जो स्वरूप और गुण में सब बेगमों में श्रेष्ठ थी, भटककर एक ऐसे निर्जन प्रांत में जा पहुँची जहाँ हिंसक जंतुओं के भीषण नाद के सिवाय अन्य शब्द ही न सुन पड़ता था। जिस समय रूपविचित्रा भय एवं शीत के कारण थर थर काँपती हुई प्राणरक्षा के लिये ईश्वर का स्मरण कर रही थी उसी समय महिमा मीर वहाँ आ पहुँचा। जब उसे पूछने पर ज्ञात हुआ कि उक्त स्त्री बादशाह की बेगम है तब उसने उसे घोड़े पर बैठाकर शिविर में ले जाने का आग्रह किया। इसपर रूपविचित्रा ने मीर महिमाशाह को धन्यवाद देकर कहा कि इस समय मेरा शरीर शीत

से अधिक व्याकुल हो रहा है, इसलिए तू आलिंगन से मुझे संतुष्ट कर। इसपर महिमाशाह ने उत्तर दिया कि एक तो मैं किसी भी पराई स्त्री को अपनी भगिनीवत् मानता हूँ तिसपर आप मेरे स्वामी की स्त्री हैं इसलिये आप मेरी माता समान हैं अतएव मैं यह अकर्तव्य एवं पाप कर्म करने को कदापि सहमत नहीं हूँ। तब रूपविचित्रा ने पुनः उत्तर दिया कि क्या आप यह नहीं जानते कि अपने मुख से माँगती हुई स्त्री को रति-दान न देना भी तो एक ऐसा पाप है कि जिसका कोई प्रायश्चित्त है ही नहीं, और हे वीर युवक, तेरे रूप और गुणों की प्रशंसा पर मोहित हुआ मेरा मन तेरे लिये बहुत दिनों से व्याकुल है। भाग्यवश आज यह संयोग प्राप्त हुआ है। बेगम की ऐसी बातें सुनकर महिमाशाह का भी मन डोल उठा और तब उसने घोड़े को एक समीपवर्ती वृक्ष से बाँध दिया, हथियार खोल-कर पास रख लिए और वहीं उस स्त्री की मनोकामना पूर्ण करने लगा। उसी समय एक गरजता हुआ विकराल सिंह सामने आता देख पड़ा। उसे देखकर रूपविचित्रा थर-थर काँपने लगी, किंतु महिमाशाह ने उसे धैर्य्य देकर कहा कि भय मत करो कोई डर नहीं, और कमान उठाकर एक ही बाण से उसने सिंह को मार डाला।

उपर्युक्त प्राकृतिक उपद्रव के शांत होते ही सहस्रों मनुष्य बेगम की खोज में इधर-उधर फिरने लगे। उनमें से कोई कोई तो बेगम के पास तक आ पहुँचे और उसे शाही शिविर में लिवा ले गए। रूपविचित्रा को पाकर अलाउद्दीन अत्यंत प्रसन्न हुआ। जब ग्रीष्म का अंत हो गया और पावस की घनघोर घटनाएँ घिर-घिर कर आने लगीं तब अलाउद्दीन ने लश्कर-सहित दिल्ली को कूच कर दिया।

दिल्ली के राजमहल में एक दिन आधी रात को जिस समय अलाउद्दीन रूपविचित्रा के पास बैठा था, उसी समय एक चूहा आ निकला। उसे देखते ही बादशाह का काम-ज्वर जीर्ण हो गया, किंतु उसने किसी प्रकार सम्हलकर उस चूहे को लक्ष्य करके एक ऐसा

बाण मारा कि वह वहीं मर गया। चूहे को मारकर अलाउद्दीन की प्रसन्नता का अंत न रहा, इसलिये उसने रूपविचित्रा से कहा कि मैं जानता हूँ कि स्त्रियाँ स्वभाव से ही कायर होती हैं, इसलिये मैंने यह पुरुषार्थ प्रगट किया है। यह सुनकर रूपविचित्रा ने मुस्कराकर कहा—पुरुषार्थी मनुष्य वे होते हैं जो इसी अवस्था में सिंह को सहज ही मारकर शेखी की बात नहीं करते। बेगम की ऐसी बातें सुनकर अलाउद्दीन आश्चर्य और क्रोध के समुद्र में गोते खाने लगा, किंतु उसने अपने को सम्हाल कर कहा कि जो तू ऐसा पुरुष मुझे बतला दे तो मैं उससे बहुत ही प्रसन्नतापूर्वक मिलूँ अथवा उसने मेरा कैसा ही अपराध क्यों न किया हो मैं सर्वथा उसे क्षमा करूँ। तब बेगम ने अपना और मीर महिमाशाह का भूत वृत्तांत कह सुनाया और कहा कि उस वीर पुरुष के ये चिह्न हैं कि न तो वह उकड़ूँ बैठकर भोजन करता है, न शरणागत को त्यागता है और न बिना किसी विशेष कारण के झूठ बोलता है। यह सुनते ही बादशाह का क्रोध इस प्रकार बढ़ उठा जैसे सुचिक्कण पदार्थ की आहुति से अग्नि का तेज बढ़ उठता है। अलाउद्दीन ने उसी समय महिमाशाह को बुलाए जाने की आज्ञा दी। इधर रूपविचित्रा भी अपनी मूर्खता पर पछताने लगी। अंत में उसने साहसपूर्वक बादशाह से कहा कि यदि आप उस वीर पुरुष को कुछ दंड देना चाहते हों तो प्रथम मुझे ही मरवा डालिए क्योंकि इसमें वास्तव में मेरा ही दोष है, न कि उसका। जहाँपनाह, क्या यह अन्याय न होगा कि एक निरपराध पुरुष दंड पावे और अपराधी को आप गलेसे लगावें? बेगम की ऐसी बातें सुनकर बादशाह ने महिमाशाह के आने पर उससे कहा कि "रे मूढ़ कुमार्गगामी अधम, अब मैं तेरा मुख नहीं देखना चाहता, बस अब यदि तुझे अपने प्राण प्यारे हैं तो इसी समय मेरे राज्य से चला जा।"

मीर महिमा और हम्मीर राव—क्रुद्ध अलाउद्दीन से तिरस्कृत होकर महिमाशाह ने घर आकर अपने सहोदर मीर गभरू से सारा

वृत्तांत कह सुनाया और उसी क्षण परिवार-सहित वह दिल्ली से चल दिया। महिमाशाह जिस किसी राजा राव के पास जाता वह उसे शाह अलाउद्दीन का द्वेषी समझकर तुरंत ही अपने यहाँ से बिदा कर देता। इसी प्रकार फिरते-फिरते जब वह राव हम्मीर की ड्योढ़ी पर पहुँचा और उसने अपने आने की इत्तला कराई तो राव जी ने उसे बड़े ही संमानपूर्वक डेरा दिलवाया और दूसरे दिन अपने दरबार में बुलाया। दरबार में पहुँचकर महिमाशाह ने पाँच घोड़े, एक हाथी, दो मुलतानी कमान, एक तलवार, दो बाण, दो बहुमूल्य मोती और बहुत से ऊनी वस्त्र रावजी को नजर किए, जिनको राव जी ने सादर स्वीकार कर लिया। उसी समय मीर महिमाशाह ने अपनी बीती भी राव जी से निवेदन करके सविनय कहा—"मैं अलाउद्दीन के विरोधियों में से हूँ। यदि आपमें मेरी रक्षा करने की शक्ति हो तो शरण दीजिए अथवा मुझे भाग्य के भरोसे पर छोड़ दीजिए।" मीर के ऐसे वचन सुनकर हम्मीर ने कहा कि हे मीर मैं तुझे अभय दान देकर प्रण करता हूँ कि इस मेरे तन-पिंजर में प्राण-पखेरू के रहते एक क्या सहस्रों बादशाह तेरा बाल बाँका नहीं कर सकते; यह रणथंभ का अभेद्य दुर्ग, ये अपने राजपूत वीर अथवा मैं स्वयं अपने को युद्धाग्नि में आहुति देने को प्रस्तुत हूँ परंतु तुझे न जाने दूँगा। इस प्रकार कहकर राव हम्मीर ने उसी समय मीर को पाँच लाख की जागीर का पट्टा कर दिया और तब से मीर आनंद-पूर्वक रणथंभौर के अभेद्य दुर्ग में रहने लगा।

इधर बादशाह के गुप्तचरों ने उसके संमुख यह समाचार जा सुनाया जिसके सुनते ही अलाउद्दीन पूँछ कुचले हुए काले सर्प की तरह क्रुद्ध हो उठा, किंतु वजीर बहराम खाँ ने आगत उपद्रव के टालने अथवा मीर महिमा के पक्षपात की इच्छा से दूत को डाँटकर कहा कि जिस मीर को सात समुद्र पार भी ठिकाना देनेवाला कोई नहीं है उसे हम्मीर क्या रखेगा। इसपर दूत ने पुनः कहा कि यदि मेरी बातों में कुछ भी असत्य हो तो मैं उचित दंड पाने के लिये

प्रस्तुत हूँ। दूत की ऐसी दृढ़ता देखकर अलाउद्दीन ने उसी समय आज्ञा दी कि हम्मीर को एक पत्र इस आशय का लिखा जाय कि वह मेरे अपराधी को स्थान न देवे क्योंकि अब तक वह मेरा मित्र है, न कि शत्रु। यदि वह अपने हठ से न हटे तो उसे उचित है कि वह सम्हल जाय, मैं क्षण मात्र में उसके समस्त दर्प और हठ को धूल में मिला दूंगा। अलाउद्दीन की आज्ञा पाते ही एक दूत को बहुत कुछ समझा बुझा कर रणथंभ की तरफ भेजा गया।

दूत ने रणथंभ जाकर बादशाह का पत्र राव हम्मीर जी को दिया और कहा कि आप बादशाह अलाउद्दीन के बल, पुरुषार्थ और पराक्रम एवं अपने भविष्य के विषय में भी खूब सोच-विचार कर उत्तर दीजिए। इस पत्र का उत्तर राव जी ने इस प्रकार से लिखा कि 'मैं यह भली भाँति जानता हूँ कि आप दिल्ली के बादशाह हैं, परंतु मैं जो प्रण कर चुका हूँ, उसे अपने जीवन-पर्यंत छोड़ने का नहीं। इसलिये उचित यही है कि आप अब मुझसे महिमाशाह के विषय में बात भी न करें, और जो कुछ आपसे बन पड़े उसके करने में विलंब भी न कीजिए।' इस पत्र को पाकर बादशाह का क्रोध और भी बढ़ उठा, परंतु राजमंत्रियों के समझाने-बुझाने पर उसने एक बार फिर राव हम्मीर के पास दूत भेजकर उसके मन की थाह ली। परंतु उस वीर पुरुष ने बड़े धैर्य और साहस के साथ फिर भी वही उत्तर दिया। राव हम्मीर जी के हठ और साहस के सामने बादशाह की बुद्धि भी चक्कर में पड़ गई, उसे भी अपने आगे-पीछे का सोच पड़ गया। उसने विचार किया कि जब राव हम्मीर में इतना साहस है तब उसका कुछ कारण भी होगा, यदि न भी हो तो प्राण की परवाह न करनेवाले के सामने विरले ही माई के लाल खड़े हो सकते हैं। सिंह हाथी से बहुत ही छोटा है किंतु वह अपने साहस और पुरुषार्थ ही से उसे मार डालता है। इसी प्रकार सोच विचार करते हुए बादशाह ने अपने सब दरबारियों को बुला कर हम्मीर के हठ और अपने कर्तव्य की सूचना दी। तब उसके सब सर्दारों ने तो हुजूर ही की 'हाँ'

में 'हाँ' मिला दी, सिर्फ एक वृद्ध पुरुप ने कहा कि उस चहुआन के फेर में न पड़िए, रणथंभ पर चढ़ाई करना सहज नहीं है। परंतु वृद्ध की इस बात पर ध्यान भी न दिया गया। अलाउद्दीन ने उसी समय आज्ञा दी कि यथासम्भव शीघ्र ही फौज तय्यार की जाय। बादशाह की आज्ञा पाते ही जहाँ-तहाँ पत्र भेजकर सोरठ, गिरनार और पहाड़ी देशों के अनेक राजपूत सरदार बुलाए गए। तब तक इधर शाही वैतनिक फौज भी तय्यार हो गई और फौज के लिये आवश्यक रसद बरदास भी इकट्ठी हो गई।

निदान इस प्रकार अरबी, काबुली, रूमी इत्यादि मुसलमान वीरों की सत्ताईस लाख जंगी फौज और अट्ठारह लाख पारिकर कुल ४५ लाख मनुष्य, ५ हजार हाथी और पाँच लाख घोड़ों की भीड़ भाड़ लेकर अलाउद्दीन ने रणथंभ गढ़ पर चढ़ाई करने के लिए चैत्र मास की द्वितीया संवत् ११३८ को कूच किया। जिस समय यह शाही दल-बल राव हम्मीर जी की सरहद में पहुँचा उस समय वहाँ की प्रजा में कोलाहल मच गया। अलाउद्दीन के आज्ञानुसार सब सैनिक सिपाही प्रजा को नाना प्रकार के कष्ट देने लगे। इसलिये सब लोग भाग-भागकर रणथंभ के गढ़ में शरण के लिये पुकारने लगे। इसी प्रकार निरपराध प्रजा का खून करते हुए जब यह दल-बल "नल हारणों गढ़" के किले पर पहुँचा तब वहाँ के किलेदार ने तीन दिन पर्य्यंत शाही फौज का मुकाबिला किया। किंतु अंत में किले पर बादशाही दखल हो गया। इसलिये यहाँ का किलेदार भी रणथंभ को दौड़ गया और उसने बादशाह के अगनित दल-बल का समाचार विधिवत् राव हम्मीर जी के सम्मुख निवेदन किया। इस समाचार के पाते हम्मीर की बंक भृकुटी और भी टेढ़ी हो गई, कमल समान नेत्र अग्नि-शिखा से लाल हो उठे, बाहु और ओठ फड़कने लगे। रावजी का ऐसा ढंग देखकर अभयसिंह प्रमार, भूरसिंह राठौर, हरिसिंह बघेला, रणदूला चहुआन और अजमतसिंह इन पाँच सर्दारों ने २०००० फौज लेकर शाही फौज को रास्ते में रोक लिया

और वे ऐसे पराक्रम से लड़े कि बादशाही सेना के पैर उखड़ गए और बड़े बड़े अमीर उमरा जहाँ तहाँ भागने लगे। उस समय अलाउद्दीन के वजीर महिरज खाँ ने कहा—"मैंने पहले ही अर्ज किया था कि एक तो राजपूत अपनी बात रखने के लिये जान देने की कभी परवाह नहीं करते, फिर भी उस पहाड़ी किले पर फतह पाना बहुत ही मुश्किल काम है।" किंतु बादशाह ने फिर भी उसकी बात यों ही टाल दी और आगे कूच करने की आज्ञा दी। इस युद्ध में अलाउद्दीन के २०००० सिपाही, डेढ़ सौ घोड़े और कई अमीर उमरा काम आए किंतु राव हम्मीर के १२५ सिपाही और १० सर्दार खेत रहे और अभयसिंह प्रमार के सीस में बहुत गहरे गहरे २१ घाव लगे।

अलाउद्दीन ने रणथंभ गढ़ के पास पहुँचकर चारों तरफ से किले को घेरकर फौज का पड़ाव डाल दिया और फिर से एक दूत के हाथ पत्र भेजकर राव हम्मीर जी से कहला भेजा कि अब भी मेरे अपराधी मीर महिमाशाह को मेरे पास हाजिर करके मुझसे मिलो तो मैं तुम्हारे अपराध को क्षमा कर दूँगा। इस बार राव जी ने जो उत्तर दिया वह इस प्रकार था—"मैं जानता हूँ तू बादशाह है, परंतु मैं भी उस चहुआन कुल में से हूँ जिसने सदैव मुसलमानों के दाँत खट्टे किए हैं। ख्वाजा मीराँ पीर का एक लाख अस्सी हजार दल-बल अजमेर में चहुआनों ने ही खपाया था। पुनः बीसलदेव जी ने सोनगरा का शाका किया, उसी वंश के पृथ्वीराज ने शहाबुद्दीन को सात बार पकड़ कर छोड़ दिया। बस मैं उसी चहुआन कुल में हूँ और तू भी उसी पीर मर्द औलिया खानदान का मुसलमान है। देख अब किसकी टेक रहती है। हे यवनराज, तू निश्चय रख, मेरी टेक यह है कि सूर्य्य चाहे पूर्व से पश्चिम में उगने लगे, समुद्र मर्य्यादा छोड़ दे, शेष पृथ्वी को त्याग दे, अग्नि शीतल हो जाय, परन्तु राव हम्मीर का अटल प्रण नहीं टल सकता। देख अलाउद्दीन, संसार में जो जन्म लेता है वह एक दिन मरता अवश्य है; अथवा जिसकी उत्पत्ति है उसका नाश होता ही है। फिर इस क्षणभंगुर शरीर के

लिये शरणागत को त्यागकर अपने कुल में मैं कलंक नहीं लगाना चाहता। तुझे कितना दर्प है जो अपने सामने दूसरे को वीर नहीं गिनता। इस पृथ्वी पर रावण, मेघनाद-सरीखे अभिमानी और अतुल बलशाली वीर पानी के बबूले की तरह बिला गए। यवनराज! मनुष्य नहीं रहता, परंतु उसके कर्तव्य की कहानियाँ अवश्य रहती हैं। अतएव अब मुझे जो सूझे सो कर। मैं भी सब तरह से तैयार हूँ।"

अलाउद्दीन के दूत को इस प्रकार उत्तर देकर राव हम्मीर जी शिवालय में जाकर शिवार्चन करने लगे। धूप, दीप, नैवेद्य संयुक्त विधिवत् पूजा करके जिस समय राव जी ध्यानमग्न थे उसी समय शिवालय में आकाशवाणी हुई कि हे हम्मीर तुमसे और अलाउद्दीन से १२ वर्ष पर्यंत संग्राम होगा। तत्पश्चात आषाढ़ सुदी ११ को तुम्हारा शाका पूर्ण होगा जिससे संसार में चिरकाल तक तुम्हारा यश बना रहेगा। शिवजी से इस प्रकार वरदान पाकर राव जी ने प्रसन्न होकर अपने समस्त शूर वीर सरदारों को युद्ध के लिये सन्नद्ध होने की आज्ञा दी। उसी समय हम्मीर के चाचा राव रणधीर ने, जो कि 'छाड़गढ़' के किले के स्वामी थे, हम्मीर से कहा कि श्रीमान् क्षमा करें इस समय मेरे हाथ देखें।

इधर हम्मीर जी का पत्र पाते ही अलाउद्दीन लाल पीला-सा हो उठा और उसने उसी समय रणथंभ के किले पर चारों ओर से गोले और बाणों की वर्षा करने की आज्ञा दी। बादशाह की आज्ञा पाते ही मुसलमान सेनानायक महम्मद अली रणथंभ के अजेय दुर्ग को पाने के लिये प्रयत्न करने लगा। इधर से राव रणधीर ने भी किले की बुर्जों पर से अग्निवर्षा करने की आज्ञा दी और आप कुछ सैनिकों सहित मुसलमानी सेना में वह इस प्रकार धँस पड़ा जैसे भेड़ों के समूह में भेड़िया धँसता है। निदान पहली वरणी राव रणधीर और मुहम्मद अली की हुई जिसे राव जी ने एक ही हाथ में दो कर दिया। यह देखकर उसका पीठि-नायक अजमत खाँ राव जी के

संमुख आया। किंतु राव रणधीर ने उसे भी मार गिराया। अजमत खाँ के गिरते ही मुसलमानी सेना के पैर उखड़ गए। इस युद्ध में मुसलमान सेना के अस्सी हजार अस्त्रधारी खेत रहे और राव रणधीर के केवल एक हजार जवान मारे गए। मुहम्मद मीर के मारे जाने पर जब मुसलमानी फौज भागने लगी तब अलाउद्दीन ने वादित खाँ को सेनानायक बनाया। वादित खाँ ने बड़े धैर्य्य और दृढ़ता से उत्तेजनाजनक वाक्य कहकर, बिखरी हुई फौज को बटोर कर, राजपूत-वीर राव रणधीर का सामना किया किंतु अंत में उसे भी भूत सेना-नायकों के भाग्य में भाग लेना पड़ा।

वादित खाँ के मरते ही सारी सेना में कुहराम मच गया। अला-उद्दीन स्वयं निस्तेज होकर पीर पैगंबरों को पुकारने लगा। तब वजीर महम्मद खाँ ने कहा कि इस प्रकार संमुख युद्ध करके जय पाना तो कठिन है। इसलिये कुछ सेना यहाँ छोड़कर छाड़गढ़ के किले पर चढ़ाई की जाय। उस किले में राव रणधीर के लोग रहते हैं। निदान अपने परिवार पर भीड़ पड़ी देखकर यदि राव रणधीर शरण में आ जाय तो फिर अपनी जय होने में कोई संदेह नहीं है। निदान वजीर की बात मानकर बादशाह ने वैसा ही किया; किंतु पाँच वर्ष व्यतीत हो गया और छाड़गढ़ का किला हाथ न आया। वरन् इसी में एक नवीन बात यह निकल पड़ी कि दिन भर तो हम्मीर जी युद्ध करते और रात को रणधीर का धावा पड़ता जिससे शाही सेना अत्यन्त व्याकुल हो उठी। बड़े बड़े अमीर-उमरा मिट्टी के मोल मारे जाने लगे। अधिक क्या, आरंभ से अंत तक जितनी लड़ाइयाँ हुई उन सब में राजपूत वीरों की ही जय हुई। निदान जब अलाउद्दीन की तरफ के अब्दुल करीम, करम खाँ, यूसफ जंग इत्यादि बड़े बड़े बुद्धि-मान् योद्धा सर्दार मारे गए और राव रणधीर जी तथा हम्मीर जी का बाल भी न बाँका हुआ तब अलाउद्दीन घबरा उठा और फिर से अमीर उमरावों की सभा करके अपने उद्धार का उचित उपाय विचारने लगा।

इसी समय राव रणधीर जी ने हम्मीर जी से कहा कि यदि चित्तौर से दोनों कुमार बुला लिए जायँ तो अच्छा हो। इसपर राव जी ने भी 'अच्छा' कह दिया। तब राव रणधीर ने रणथंभ का सब समाचार लिखकर चित्तौर भेज दिया। उक्त समाचार के पाते ही दोनों राजकुमार तीस हजार राठौर, आठ हजार चहुआन, और पाँच हजार प्रमार राजपूतों की सेना लेकर रणथंभ को चले आए। दोनों राजकुमारों को देखकर राव हम्मीर जी ने प्रसन्नता-पूर्वक उन्हें गले लगा लिया और मीर महिमा को शरण देने के कारण अलाउद्दीन से रार बढ़ जाने का हाल भी विधिवत् वर्णन कर सुनाया, जिसे सुनते ही दोनों राजकुमारों का मुख प्रसन्नता से प्रफुल्लित हो उठा। उन्होंने वीर रस में उन्मत्त होकर मदांध मृगराज की भाँति झूमते हुए राव जी से कहा कि अब तक आपने परिश्रम किया अब तनिक हमारा भी पराक्रम देख लीजिए। यों कहकर दोनों राजकुमार रनिवास में गए। राव हम्मीर की रानी आसुमती के चरण छूकर वे बोले कि हे माता, आप कृपा कर हमारे मस्तक पर मौर बाँधकर हमें युद्ध करने का आशीर्वाद दीजिए। दोनों राजकुमारों के ऐसे वचन सुनकर आसुमती ने भी सुत-स्नेह से सने हुए वाक्यों से संबोधन करते हुए उन्हें कलेजे से लगा लिया और अपने हाथों उनके शीश पर मौर बाँधा और केशरी बाना पहिनाकर उन्हें युद्ध में जाने के लिए विदा किया।

जिस समय आसुमती कुमारों का शृंगार कर रही थी उस समय छाड़गढ़ के किले में इस प्रकार घनघोर रव हो रहा था कि जिससे दिशाओं के दिग्पाल चौकन्ने हो रहे थे। यह खरभर देखकर अला-उद्दीन ने अपने मंत्री से पूछा कि आज छाड़गढ़ में यह उत्सव किसलिये हो रहा है। तब एक अमीर ने उत्तर दिया कि राव हम्मीर जी के छोटे भाई के पुत्रों ने स्वयं युद्ध के लिये सिर पर मौर बाँधा है। उसी के उत्सव में यह गान-वाद्य हो रहा है। यह सुनकर बाद-शाह ने जमाल खाँ को बुलाकर कहा कि तुमने ही पृथ्वीराज को कैद

किया था; आज भी अगर तुम दोनों राजकुमारों को पकड़ लोगे तो मेरी अत्यंत प्रसन्नता के पात्र होगे। इस प्रकार समझा-बुझाकर उस दिन के युद्ध के लिये अलाउद्दीन ने मीर जमाल को सेनानायक बनाया।

इधर से दोनों राजकुमार केसरिया बाना पहिने, सीस पर मुकुट, हाथों में रणकंकण बाँधे अपने अपने तेज तुरंगों पर सवार सोलह हजार राजपूतों की सेना के बीच में ऐसे भले मालूम देते थे मानों रणबाँकुरे देवताओं के दल इंद्र और कुबेर सुशोभित हो रहे हों। दोनों वीर सेना-सहित उज्ज्वल नेजे और खड्ग चमकाते हुए मुसलमान सेना में इस प्रकार धँस पड़े जैसे काले काले बादलों में बिजली विलीन हो जाती है। इधर अलाउद्दीन से उत्तेजित किए हुए यवन-दल ने उन राजकुमारों को घेर लिया और जमाल खाँ बड़े वेग से उन दोनों राजकुमारों पर टूटा। वे वीर राजकुमार भी बड़ी धीरता से उसका सामना करने लगे। यह देखकर राव हम्मीर जी ने वीर शंखोदर को कुमारों की सहायता के लिये भेजा। इसपर इधर से अरबी फौज का धावा हुआ। राजपूत और मुसलमान सेना में इस प्रकार विकट मार होने लगी कि किसी को अपना-बिगाना न सूझता था। इसी समय जमाल खाँ ने अपना हाथी राजकुमारों के सामने बढ़ाया। तब कुमार ने तलवार का ऐसा हाथ मारा कि एक ही हाथ में लोहे का टोप कटते हुए मीर जमाल की खोपड़ी के दो टूक हो गए। जमाल खाँ को गिरता देखकर वालन्न खाँ ने धावा किया। इधर से वीर शंखोदर ने बढ़कर उसका मुख रोका। निदान सायंकाल तक बराबर लोहा झरता रहा। दोनों कुमार अपनी समस्त सेना के सहित स्वर्गगामी हुए। इस युद्ध में मुसलमानी फौज के ७५००० योधा खेत रहे।

इस प्रकार दोनों राजकुमारों के मारे जाने पर राव रणधीर ने क्रुध होकर किले पर से आग बरसाना आरंभ कर दिया। तब बादशाह ने कहला भेजा कि आप क्यों जान-बूझकर जान देने पर उतारू हुए हैं, आपके लड़कर मर जाने से इस झगड़े का अंत न

होगा। यदि आप राव हम्मीर जी को समझाकर मीर महिमा को मेरे पास भेजवा दें तो आप वा राव हम्मीर जी दोनों सुख से राज्य करें और हम दिल्ली चले जायें। किंतु बादशाह के पत्र का राव रणधीर ने केवल यही उत्तर दिया कि क्षत्रियों का यह धर्म नहीं है कि विषय-सुख-भोग की लालसा अथवा मृत्यु के डर से वे अपने धारण किए हुए धर्म को त्याग दें। राव रणधीर की ओर से इस प्रकार कोरा उत्तर पाकर अलाउद्दीन ने अपनी फौज को भी छाड़ के किले पर आक्रमण करने की आज्ञा दी। अलाउद्दीन की आज्ञा पाते ही मुसलमानी फौज ने टिड्डी दल की तरह उमड़कर किले को चारों ओर से घेर लिया और वे किले पर से चलते हुए गोले, गोली, बाण बर्छों की विषम बौछार की कुछ भी परवाह न करके किले पर चढ़ दौड़े। मुसलमानी सेना जब किले में धंस पड़ी तब राजपूत लोग सर्वथा प्राणों का मोह छोड़कर तलवार से काम लेने लगे। दोनों में अग्न्यस्त्रों का संचालन बिल्कुल बंद हो गया। केवल तबल, तलवार, बरछी, कटार, सेल से काम लिया जाने लगा। इसी रेलापेल में बादशाह के निजी पेशकार (बगली) ने राव हम्मीर की तलवार के सामने आने की हिम्मत की किंतु वीर रणधीर के एक ही वार में उसके जीवन का वारा-न्यारा हो गया, इसलिये उसके सहकारी रूमी सरदार ने अपने ५० बलवान् योद्धाओं सहित रणधीर जी को घेर लिया। राव रणधीर ने इन पचासों सिपाहियों को मारकर रूमी सर्दार को भी दो टूक कर दिया। इसी प्रकार मारकाट होते हुए राव रणधीर सहित जितने राजपूत वीर उस किले में थे सबके सब मारे गए और छाड़-गढ़ का किला बादशाह के हाथ आया। इस युद्ध में शाही फौज के दो बड़े बड़े सर्दार और एक लाख रूमी सैनिक खेत रहे और राव रणधीर के साथी ३०००० राजपूत काम आए। यह छाड़गढ़ का अंतिम युद्ध चैत्र सुदी ९ शनिवार को हुआ। बीस हजार केवल राजपूत मारे गए और एक हजार राजपूतनी स्त्रियाँ स्वयं जलकर भस्म हो गईं।

छाड़गढ़ का किला फतह करके अलाउद्दीन ने अपने लश्कर की बाग रणथंभ गढ़ की ओर मोड़ी और कुवार सुदी ९ शनिवार को किले के चारों तरफ घेरा डालकर दूत के हाथ राव हम्मीर जी के पास कहला भेजा कि अब भी यदि महिमाशाह को मेरे पास भेज दो तो मैं बिना किसी रोक टोक के दिल्ली चला जाऊं। दूत की ऐसी बातें सुनकर राव हम्मीर जी ने कहा—रे मूर्ख दूत, मैं तुझसे क्या कहूँ, तेरे स्वामी अलाउद्दीन का मुझसे बार बार ऐसा कहला भेजना उचित नहीं है। विग्रह का निर्धारण किया जाता है तो केवल इसलिये कि जिससे बंधु-बांधवों का रक्तपात न हो किंतु अब मुझे इस बात का सोच बाकी न रहा। राव रणधीर-सा चाचा और कुलदीपक दोनों कुमार भी जब इस युद्धाग्नि में अपने प्राण होम कर चुके तब मुझे अब सोच ही किस बात का है। जा तू अपने स्वामी से कह दे कि अब कभी मेरे पास संदेसा न भेजे। दूत ने वहाँ से आकर राव जी के वचन ज्यों के त्यों बादशाह से कह सुनाए। यह सुनकर अलाउद्दीन ने उसी समय गोलंदाजों को बुलाकर हुक्म दिया कि यहाँ से ऐसा गोला मारो कि किले के बुर्जों पर रखी हुई तोपें ठस होकर शांत हो जाय। गोलंदाजों ने बादशाह की आज्ञा पालन करने के लिये यथासाध्य चेष्टा की किंतु वह निष्फल हुई। साथ ही किले पर से उतरे हुए गोलों की मार से लश्कर की बहुत सी तोपें ठस होकर चरख पर से गिर पड़ीं। यह देखकर बादशाह की बुद्धि किंकर्तव्यविमूढ़ हो गई। वह नाना प्रकार के तर्क वितर्क करता हुआ अपने कर्तव्य पर पछताने लगा। यह देखकर उसके वजीर ने उसे समझाया और रात्रि को किले की खाई पर पुल बाँधकर किले पर चढ़ जाने का मत पक्का किया, किंतु पानी की बाढ़ अधिक होने के कारण मुसलमान सेना को उससे भी हारना पड़ा। तब तो बादशाह अखंड रूप से डटकर रह गया और किले पर आक्रमण करने के लिये उपयुक्त समय आने की प्रतीक्षा करने लगा।

एक दिन राव हम्मीर जी ने किले के सबसे ऊँचे हिस्से पर सभामंडप सजाया। उस सभामंडप में सगे संबंधियों सहित बैठा हुआ राव हम्मीर ऐसा ज्ञात होता था जैसे देवताओं के बीच इंद्र शोभित होता है। स्वर्ण सिंहासन पर बैठे हुए राव हम्मीर जी के संमुख चंद्रकला नामक वेश्या नृत्य कर रही थी। चंद्रकला के प्रत्येक गीत से अलाउद्दीन की अपमानसूचक ध्वनि निकलती थी। इसके साथ ही बादशाह की ओर पदाघात करके उसने ऐसा विलक्षण कटाक्ष किया कि जिसे देखकर राव जी की सब सभा में आनंद-सूचक एक बड़ी भारी ध्वनि हुई। यह देखकर अलाउद्दीन से न रहा गया। तब उसने कहा कि यदि कोई इस वेश्या को बाण से मारकर राव हम्मीर के रंग में भंग कर दे तो मैं उसे बहुत कुछ पारितोषिक दूँ। यह सुनकर मीर महिमा के भाई मीर गभरू ने कहा कि मैं श्रीमान् की आज्ञा का प्रतिपालन कर सकता हूँ। किंतु स्त्री पर शस्त्र चलाना वीरों का काम नहीं है। इसीलिये उस वेश्या को जीव से न मारकर केवल उसका अहित किए देता हूँ। यों कहकर मीर गभरू ने एक ऐसा बाण मारा कि जिससे उस वेश्या के पाँव में ऐसी चोट लगी कि वह तुरत लोट पोट हो गई। वेश्या को गिरते देखकर राव जी आश्चर्य और क्रोध में आकर चारों ओर देखने लगे। तब मीर ने हाथ बाँधकर अर्ज किया कि यह बाण मेरे भाई मीर गभरू का चलाया हुआ है। श्रीमान् इस पर किसी प्रकार का खेद न करें और तनिक मेरा पराक्रम देखें। यह कहकर मीर महिमाशाह ने एक ऐसा बाण मारा कि अलाउद्दीन के सिर पर से उसका मुकुट उड़ गया।

यह देखकर वजीर महरमखाँ ने अलाउद्दीन से कहा कि अब यहाँ ठहरना उचित नहीं है। इस महिमा के संचालन किए हुए बाण से यदि आप बच गए तो यह उसने पहले नमक का निर्वाह किया है। यदि वह हम्मीर का हुक्म पाकर अब की जो लक्ष्य कर के बाण मारे तो आपके प्राण बचने

कठिन हैं, अतएव मेरा तो यही विचार है कि अब यहाँ से दिल्ली को कूच कर जाना ही भला है। वजीर महरमखाँ की बात मानकर बादशाह ने उसी समय कूच की तय्यारी करने की आज्ञा दी। इधर जिस समय सारे लश्कर में चला-चली का सामान हो रहा था उसी समय राव हम्मीर जी के सामान के कोषाध्यक्ष सुरजनसिंह ने आकर बादशाह के पैरों पर शिर धर दिया और कहा कि यदि श्रीमान् मुझे छाड़गढ़ का राज्य दे देना स्वीकार करें तो मैं सहज ही में रणथंभ के अजेय दुर्ग पर आपकी फतह करवा दूं। इस पर अलाउद्दीन ने उसे बहुत कुछ ऊंची नीची दिखाकर कहा—सुरजनसिंह, यदि मैं रणथंभ पर विजय पा जाऊं तो छाड़ का राज्य तो दूंगा ही, इसके अतिरिक्त तुम्हें इस प्रकार संतुष्ट करूंगा कि जिसमें तुम्हारा मन हर तरह से राजी हो जाय।

बादशाह की बातों में आकर कृतघ्न सुरजन ने रणथंभ को फतह करवाने का बीड़ा उठा लिया। उसने उसी समय राव हम्मीर जी के पास जाकर कहा कि 'श्रीमान् रसद बरदाश्त और गोली बारूद के खजाने चुक गए हैं, इसलिये किले में रहकर अपने हठ एवं मान-मर्य्यादा की रक्षा होनी कठिन है, इसलिये वचन मानकर महिमाशाह को अलाउद्दीन के पास भेजकर उससे सुलह कर लीजिए।' सुरजन की बात पर राव हम्मीर जी ने विश्वास न किया और आप स्वयं "जौंरा भौंरा"[१] (खजाने) के पास जाकर जाँच की तो सुरजन का कहना वास्तव में सत्य पाया। तब तो राव जी को अत्यंत शोक और आश्चर्य

---

१ किंतु "जौंरा, भौंरा" (खजाने) वास्तव में खाली नहीं हुए थे। उनमें का सब माल सामान नीचो तह में ज्यों का त्यों भरा पड़ा था। राव हम्मीर जी को धोखा देने के लिये सुरजन ने ऊपर से सूखा चमड़ा डलवा दिया था जो पत्थर डालने पर खड़क उठा।

ने दबा लिया। यह देखकर महिमाशाह ने कहा कि यदि श्रीमान् आज्ञा दें तो अब मैं स्वयं अलाउद्दीन से जा मिलूँ जिससे वह दिल्ली चला जाय। यह सुनते ही राव जी के नेत्रों से आग की चिनगारियाँ निकलने लगीं। उन्होंने कहा—महिमाशाह क्या फिर यह समय आवेगा? यदि मैं तुझे शाह के पास भेजकर रणथंभ का राज भोग करूँ तो संसार मुझे क्या कहेगा? क्या इस कायर कर्तव्य से मेरा क्षत्रिय कुल सदैव के लिये कलंकित न होगा? अब तो जो कुछ होना था हो चुका।

इधर सुरजन ने बादशाह के पास आकर कहा कि मैं एक ऐसा अद्भुत कुचक्र चला चुका हूँ कि इस समय आप जो कुछ कहेंगे राव जी तुरंत स्वीकार कर लेंगे। यह सुनकर अलाउद्दीन ने हम्मीर जी के यहाँ कहला भेजा कि वह अपनी देवल रानी की बेटी चंद्रकला को मुझे देकर मुझसे क्षमाप्रार्थी हो तो मैं उसपर दया कर सकता हूँ। यह सुनते ही राव हम्मीर जी के क्रोध और शोक का ठिकाना न रहा। उन्होंने इसके उत्तर में अलाउद्दीन के पास कहला भेजा कि यदि उसे अपनी जान प्यारी है तो चार पीरों सहित अपनी प्यारी चिमना बेगम को मेरे पास भेजकर आप दिल्ली चले जावें अन्यथा मेरे हठ को हटाने की आशा न करें। हम्मीर जी के यहाँ से इस प्रकार कड़ाचूर उत्तर पाकर बादशाह ने कुपित होकर सुरजन से कहा—क्यों रे झूठे! तू यही कहता था कि राव हम्मीर अब आजिज आ जायगा। इस अपमान से उस दुष्ट ने कुपित होकर कहा कि अच्छा अब देखिए क्या होता है।

इधर राव जी बादशाह के दूत को उपर्युक्त उत्तर देकर तन क्षीण मन मलिन शोकातुर एवं व्यग्रचित्त अवस्था में रनवास में गए और रानी जी से उक्त बीतक की वार्ता करने लगे—"हे प्रिये! अब क्या करूँ? क्या महिमाशाह को अलाउद्दीन के पास भेजकर ही अपनी प्रजा की रक्षा करूँ?" रावजी के ऐसे वचन सुनकर रानी ने क्रोध, शोक, लज्जा एवं आश्चर्य्य भरे कंठ से कहा—"हे राजन,

वीरकुल-शिरोमणि, आज आपको बादशाह से लड़ते लड़ते १२ वर्ष हो गए। आज आपको यह कुलधर्म के विरुद्ध सलाह देनेवाला कौन है? हे प्राणप्यारे, यह संसार सब झूठा है, अतएव इस संसार-चक्र से चालित दुःख और सुख भी अनित्य हैं, परन्तु एक मात्र कीर्ति ही ऐसी वस्तु है कि जो इस संसार के अप्रतिहत चक्र से कुचली नहीं जा सकती। हे राजन! अपने हाथ से शीश काटकर देनेवाला राजा जगदेव, विद्या-विशारद राजा भोज, परदुःखभंजन राजा विक्रमादित्य, दानवीर कर्ण इत्यादि कोई भी इस संसार में अब नहीं हैं परन्तु उनके यश की पताका अब तक अक्षय स्वरूप से उड़ रही है और सदा उड़ेगी। महाराज! धन-यौवन सदैव नहीं रहता; मनुष्य ही क्या, आकाश में स्थित सूर्य्य और चंद्रमा भी एक-रस स्थिर नहीं रहते। जीवन, मरण, सुख, दुःख यह सब होनहार ही है तब अपने कर्तव्य से क्यों चूकिए। श्रीमान् आप इस समय अपने पूर्व पुरुष सोमेश्वर, पृथ्वीराज, जैतराव इत्यादि की वीरता और उनकी अक्षय कीर्ति का स्मरण कीजिए और तन, धन सब कुछ जाय तो जाय परंतु शरणागत महिमाशाह और अपने धर्म हठ को न जाने दीजिए।"

रानी की इस प्रकार उच्च उत्तम शिक्षा सुनकर राव जी के मुखार-विंद पर प्रसन्नता की झलक पड़ गई। उन्होंने कहा "धन्य प्रिये! बस मैं इतना ही चाहता था, अब मैं निश्चिततापूर्वक रण में प्राण दे सकता हूँ।" इस बात के सुनते ही रानी मूर्च्छित होकर जमीन पर गिर पड़ी, फिर कुछ सम्हलकर मधुर स्वर से बोली—'स्वामी, आप युद्ध कीजिए, मैं आपसे पहले ही शाका करूँगी।"

रानी जी से इस प्रकार बातें करके राव जी ने दरबार में आकर राज्य-कोष को खोलकर याचकों को अयाची करने की आज्ञा दी और सब राजपूत सूर सामंतों के सामने चतुरंग से कहा कि अब मैं अपना कर्तव्य पालन करने पर उद्यत हूँ, रणथंभ की प्रजा और राजकुमार 'रतन' की रक्षा आप कीजिए। उत्तम होगा कि आप

रतन को लेकर चित्तौर चले जाँय। इसपर यद्यपि चतुरंग ने आना-कानी करके अपने को भी राव जी के साथ युद्ध में शामिल रखना चाहा किन्तु रावजी के आग्रह करने पर उसे वही मानना पड़ा अर्थात् ५००० सैनिकों सहित रतन को लेकर वह चित्तौर की तरफ गया।

जब चतुरंग अल्हणपुर तक पहुँच गए तब राव हम्मीर जी ने अपने सब सर्दारों से कहा कि "अब धर्म के लिये प्राण न्योछावर करने का समय निकट आ गया है अतएव जिनको मृत्यु प्यारी हो वे मेरे साथ रहें और जिन्हें जीवन प्यारा हो वे खुशी से घर चले जायं। राव हम्मीर जी के इस प्रकार कह चुकने पर मीर महिमा-शाह ने सब शूर वीर सर्दारों की तरफ से प्रतिनिधि-स्वरूप हो अर्ज किया—हे राव जी ! ऐसा कौन पुरुष कुलांगार होगा जो आपको इस समय रणथंभ में छोड़कर अपने जीवन का सुख चाहेगा। देवता, मनुष्य, शूरवीर पुरुष किसी का भी जीवन स्थिर नहीं है। एक दिन मरेंगे सब, तब फिर ऐसे सुअवसर की मृत्यु को कौन छोड़े ? मरने से सब डरते हैं, संसार में केवल सती स्त्री और शूर वीर पुरुष ही ऐसे हैं जो मृत्यु को सदैव आलिंगन करने के लिये प्रस्तुत रहते हैं एवं उन्हें मृत्यु में ही आनंद आता है।

दूसरे दिन अरुणोदय होते ही राव जी ने शौचादि से निश्चित हो गंगाजल से स्नान कर शरीर में सुगंधित गंधादि लेपन कर केसर-सने पीले वस्त्र धारण किए, माथे पर रत्नजटित मुकुट बाँधा और शूर वीरों के छत्तीसों बाने (हरबे) लगाकर प्रसन्नतापूर्वक ब्राह्मणों को संमान-सहित दान देने लगे। इधर बात की बात में राठौर, कूरम, गौड़, तोंवर, पड़िहार, पारैच, पुंडीर, चहुआन, यादव, गहिलोत, सेंगर, पंवार इत्यादि जाति के कुलीन शूर वीर राजपूत लोग अपने अपने आने बाने से सजे हुए रणरंग में रत मदमाते गयंद की भाँति आकर राव जी के पास इकट्ठे होने लगे। उन आगत शूर वीर राजपूतों के माथे पर टेढ़ी पगड़ी, ललाट में केशर सौंधे गंध की त्रिपुंड, गले में तुलसी और रुद्राक्ष की माला, सिर पर लोहे के टोप,

शरीर पर झिलम-बकतर, हाथों में दस्ताने, और यथा अंग छत्तीसों बाने सजे हुए थे। वे वीर योद्धा लोग साक्षात् शिव के गण से सुशोभित होते थे। इधर तो इन सब शूर वीरों सहित राव जी गणेश, शिव, भगवती इत्यादि देवताओं का पूजन और परिक्रमा कर रहे थे उधर राजमहल के द्वार पर मेघ के समान बड़े दुरद दंतारे मतवारे हाथियों और वायु के वेग को उल्लंघन करनेवाले घोड़ों का घमासान जम रहा था। सूर्य्य निकलते-निकलते राव हम्मीर जी अपने वीर योद्धाओं सहित इष्टदेव का स्मरण करते हुए राजमहल से बाहर हुए। राव जी के आते ही सब सेना व्यूहबद्ध हो गई। सबसे आगे फड़वाली साक्षात् काल की सी बिकराल कालिका का अवतार तोपें, उनके पीछे हथनार ऊँटनार जंबूर, तिनके पीछे हाथी, तिनके पीछे ऊँट, घुड़सवार और फिर तुबकदार पैदल इत्यादि थे। उस समय बाल सूर्य्य की सुनहरी किरणों के पड़ने से सब साज-बाज से सुसज्जित चंचल घोड़े और गंधमय गंडस्थल वाले मतवाले हाथी बड़े ही भले मालूम होते थे। जिस समय राव जी की सवारी संपूर्ण रूप से सुसज्जित हो गई तो नौबत, नगाड़े, शंख, सहनाई, रणतूर, शृंगी, डफ इत्यादि रण-वाद्य बजने लगे, कड़खैत उच्च स्वर से कड़खे गा-गाकर सहज कठोरहृदय शूर वीरों के चित्त को उत्कर्ष देने लगे। इधर ये शूर वीर लोग उमंग में भरे हुए आगे बढ़ते जाते थे उधर आकाश में अप्सराओं के वृंद इस समर में शत्रु के संमुख प्राण को परित्याग करने वाले वीरों को अपने हृदय का हार बनाने के लिये आकाश-मार्ग से आ रहे थे। जिस प्रकार ये वीर लोग इधर झिलम, टोप, बख्तर, दस्ताने, कलगी, तुर्रा, सरपेच, तीर, तुबक, तेगा, तलवार, तबल, तोमर, तोरा, नेत, बरछी, बिछुआ, बाँका, छुरी, पिस्तोल, पेश-कब्ज, कटार, परिघ, फरसा, दाव इत्यादि अस्त्र शस्त्र से सजे हुए थे उसी प्रकार उस तरफ सर्वांगसुंदरी नवयौवना अप्सराएँ भी सीसफूल, दावनी, आड़, तार्टक, हार, बाजूबंद, जोसन, पहुँची, पाजेब इत्यादि गहने और नाना प्रकार की रंग-बिरंगी कंचुकी, चोली, चौबंद

इत्यादि वस्त्रों को धारण किए हुए आकाश-मार्ग में स्थित थीं।

इस प्रकार जंग-रंगराते मदमाते राजपूत इधर से बढ़े और उधर से इसी तरह बाणों की बौछार करती हुई मुसलमान सेना भी पहाड़ों की कंदराओं में से टिड्डी सी निकल पड़ी। दोनों सेनाओं में प्रथम तो धुँआधार तोप, तुबक, झोंका, पिस्तोल इत्यादि अग्न्यस्त्रों से वर्षा हुई, परंतु जब वीरत्व के उत्साह से प्रोत्साहित हुई दोनों सेनाएँ समुद्र की तरह उमड़कर एक दूसरे से खिल्तमिल्त हो गईं उस समय एकदम तेगा, तलवार, तबल, छुरी, बिछुआ, कटार, गुर्ज, फर्सी इत्यादि की मार होने लगी। क्षण मात्र में वह आमोदमय रणभूमि साक्षात् करुणा और बीभत्स रस का समुद्र हो गई। जहाँ तहाँ घायल और मृतक शूर वीर सिपाहियों के शवों के ढेर के ढेर नजर आते थे। मृतक हाथी, घोड़ों के शव जहाँ तहाँ चट्टानों से दीखते थे और बहुतेरे नर-देह-रक्त की नदी में जहाँ तहाँ बह जाते थे। उन पर बैठकर मांस भक्षण करते हुए कौवे, चील्ह, गिद्ध, कुर्हा, बाज, कुर्री और शृगाल इत्यादि जंतु अत्यंत भयानक रव मचाते थे। इस प्रकार कठिन मार मचने पर मुसलमान सेना के पैर उखड़ पड़े। यह देखकर बादशाह ने अपनी सेना को ललकारते हुए वजीर से कहा कि अब क्या किया जाय। तब वजीर ने कहा कि इस समय अपनी सेना की चार अनी करके प्रत्येक का भार दीवान, बाँके बगसी, मैं और आप स्वयं लेकर चार तरफ से आक्रमण करें, तब ठीक होगा। बादशाह ने उसकी संमति मानकर वैसा ही किया। इस बार उपयुक्त व्यूहबद्ध होने के कारण मुसलमान सेना ने बड़ी वीरता दिखाई। बादशाह ने पुकारकर कहा कि मेरा जो उमराव हम्मीर को पकड़कर लावेगा उसको बारह हजार की जागीर और दरबार में सबसे बड़ा मंसब मिलेगा। यह सुनकर अब्दुल नामक एक उमराव अपनी सेना सहित बड़े वेग से आगे बढ़ा। इधर राजपूत सेना ने उसके रोकने का यथासाध्य प्रयत्न किया, इस होड़ होस में बड़ी कड़ी मार हुई, दोनों ओर के कई कमंद खड़े हुए। जब राव जी की तरफ

के २०० सवार, ३० हाथी और ६०० वीर जोधा काम आ चुके तब शेख महिमाशाह ने राव हम्मीर को सिर नवाकर कहा कि श्रीमान् अब बहुत हुआ। अब जरा मेरा भी पराक्रम देखिए। यह कहता हुआ वह बीच समर भूमि में आ खड़ा हुआ और बादशाह को संबोधन करके बोला—मैं महिमाशाह जो आपका अपराधी हूँ यह खड़ा हूँ अब पकड़ते क्यों नहीं! अथवा जो कुछ करना हो करते क्यों नहीं? अब अपनी इच्छा पूर्ण कीजिए।

महिमाशाह के ऐसे सगर्व वचन सुनकर अलाउद्दीन ने खुरासान खाँ की ओर देखकर कहा कि जो कोई इस शेख को जीवित पकड़ लावेगा उसे तीस हजार की जागीर, बारह हजारी मंसब, नौबत निशान और एक तलवार दूंगा। इस पर सहकी फौज के साथ इधर से खुरासान खाँ और राव हम्मीर की जय जयकार बोलते हुए उधर से महिमाशाह ने एक दूसरे पर आक्रमण किया। बादशाह ने अपनी सेना को उत्तेजित करने के लिये कहा इसको शीघ्र पकड़ो। शेख और खुरासान की सेना अनी तो एक दूसरे पर बाणों की वर्षा करने लगी और इधर ये दोनों वीर स्वयं आमने सामने जुटकर एकमात्र खड्ग के सहारे पर खेलने लगे। अंत में महिमाशाह ने खुरासान खाँ को मार गिराया और उसके निशान इत्यादि ले जाकर राव जी को नजर किए। महिमाशाह ने राव हम्मीर जी के संमुख खड़े होकर कहा—'हे शरणागत प्रणरक्षक वीर चहुआन, आपको धन्य है। आप राज्य, परिवार, स्त्री और सब राजसी वैभवों को तिलांजलि देकर जो एक मात्र मेरी रक्षा करने के लिये अपने हठ से न हटे यह अचल कीर्ति आपकी इस संसार में सनातन स्थिर रहेगी। उसने आँसू भर कहा—"हाय! अब वह समय कब आवेगा कि मैं पुनः अपनी माता के गर्भ से जन्म धारण कर आपसे फिर मिलूं।' यह सुनकर राव जी ने कहा—हे वीर मीर, अधीर मत हो। जीवन-मरण यह संसार का काम ही है, इस विषय का पश्चात्ताप ही क्या? फिर हम तुम तो एक ही अंश के अवतार हैं तो हम आप अवश्य एक ही

में लीन होंगे; अतएव इन निःसार बातों का विचार करना तो वृथा ही है परंतु यह अवश्य है कि मनुष्य देह धारण कर इस प्रकार कीर्ति संपादन करने का समय कठिनता से प्राप्त होता है।

राव हम्मीर जी के उपर्युक्त वक्तव्य का अंत होते ही वीरोचित उत्कर्ष से भरा हुआ मीर महिमाशाह रणक्षेत्र के मध्य में आ उपस्थित हुआ। उसकी बरनी पर इधर से उसका छोटा भाई मीर गभरू उसके सामने जा जुटा। जिस समय ये दोनों वीर बांधव एक दूसरे पर प्रहार करने को थे कि अलाउद्दीन ने हँसकर कहा "मीर महिमाशाह, मैं सच्चे दिल से तेरी तारीफ करता हूं। जिस वक्त से तूने दिल्ली छोड़ी उस वक्त से आज तक मुझको सिर न झुकाया, बस अब तुम खुशी से मेरे पास चले आओ। मैं तुम्हारा कुसूर माफ करता हूँ और यह बेगम भी तुमको देना कबूल करता हूँ। साथ ही इसके गोरखपुर का परगना जागीर में दूंगा।" इस पर महिमाशाह ने मुस्कराते हुए सहज स्वभाव से उत्तर दिया कि अब आपका यह कहना वृथा है, आप जरा उन बातों का ख्याल भी तो कीजिए जो आपने उस समय कही थीं। यदि अब फिर से भी उसी माता की कुक्षि से जन्म लूं तब भी राव जी को नहीं छोड़ने वाला हूँ।

मीर महिमाशाह को बादशाह से बातें करते देखकर राव जी ने कुमक भेजी। इधर मीर गभरू ने भी कहा कि 'हे भाई, अब वृथा की दंतकथाओं के क्रंदन करने से क्या लाभ है, आओ इस सुअवसर पर हम और आप दोनों अपने अपने धर्म को पालन करते हुए स्वर्ग की सीढ़ी पर पैर देवें।' यह कहते हुए दोनों भाई अपने अपने स्वामियों की जयकार मनाते हुए एक दूसरे से जुट पड़े। मीर गभरू ने अपने बड़े भाई महिमाशाह के पैर छूकर कहा—'अब मुझे आज्ञा हो।' इसके उत्तर में महिमाशाह ने कहा कि "स्वामिधर्म्म पालन में दोष ही क्या है?" पहले तो दोनों भाई परस्पर खड्ग से लड़ते रहे किंतु जब बहुत देर हो गई तब दोनों अपने अपने घोड़ों पर से उतर कर परस्पर द्वंद्व युद्ध में प्रवृत्त हुए, और दोनों सेनाओं के देखते

ही दोनों वीर भाई स्वर्ग को सिधारे।

जब महिमाशाह मारा जा चुका तब अलाउद्दीन ने राव हम्मीर जी से कहा कि अब आप युद्ध न कीजिए; मैं आपकी अक्षय वीरता से अत्यंत प्रसन्न होकर आपको अपनी तरफ से पाँच परगने और देना स्वीकार करता हूँ और यह भी प्रतिज्ञा करता हूँ कि अब मेरे रहते आप स्वच्छंदतापूर्वक रणथंभ का राज्य कीजिए। इसके उत्तर में हम्मीर जी ने कहा कि अब आपका यह विचार केवल विडंबना है। अब जो कुछ भविष्य में होगा वही होगा। मैं इस क्षणभंगुर जीवन की अभिलाषा वा राज्यसुख के लोभ से अक्षय कीर्ति को त्यागनेवाला नहीं हूँ। रावण, दुर्योधन आदि वीरों ने कीर्ति के लिये ही तन को तिनका-सा त्याग दिया, हम तुम दोनों एक ही पद्म ऋषि के अंश से उत्पन्न हैं, अतएव अब यही उचित है कि इस सुअवसर पर समर भूमि में अनित्य शरीर को विसर्जन करके हम आप स्वर्ग में सदैव के लिये सहवास करें।

राव जी के ऐसे वचन सुनकर अलाउद्दीन ने अपनी सेना को आक्रमण करने की आज्ञा दी। उधर से राजपूत सेना भी प्राण का मोह छोड़कर मदोन्मत्त मातंग की तरह मुसलमानों से जंग करने को वीरत्व के उमंग में भरी हुई उमड़ पड़ी। जिस समय दसों दिग्गजों के हृदय को कंपायमान करने वाले रणवाद्यों को बजाती हुई दोनों सेनाएं परस्पर मिल रही थीं उसी समय भोज नामक भीलों के सर्दार ने राव जी से अपने हरावल में होने की आज्ञा माँगी। रावजी ने कहा कि तुम चित्तौर की रक्षा करो। इसपर उसने उत्तर दिया कि मुझे श्रीमान की आज्ञा मानने में किसी प्रकार की आपत्ति नहीं है, परन्तु मैंने जो आजन्म श्रीमान् की चरण-सेवा की है वह इसी अवसर के लिये: अतएव अब मुझे आज्ञा हो क्योंकि मैं अपने कर्त्तव्य के ऋण से उऋण होऊँ। यों कहकर भोजराज अपनी भील सेना-सहित आगे बढ़ा। उधर से मीर सिकंदर हरावल में हुआ। मुसलमान सेना से तोप की गुरावें छूटती थीं और भील तीरों की वर्षा

करते थे। इसी समय भोजराज और सिकंदर का मुकाबला हुआ; इधर से भोजराज ने सिकंदर पर कटार का वार किया और उसने तलवार चलाई, निदान दोनों वीर एक ही समय धराशायी हुए। इस युद्ध में भोजराज के साथवाले दो हजार भील और सिकंदर की तरफ के तीस हजार कंधारी योद्धा काम आए और शाही सेना भाग उठी।

उसी समय राव हम्मीर जी ने भोजराज की लाश के पास हाथी जा डटाया और उस वीर के शव को देखकर राव जी ने आँसुओं से नेत्र डबडबाई हुई अवस्था में कहा—धन्य हो वीरवर! तुमने स्वामिसेवा में प्राण देकर अतुलित कीर्ति को संपादन किया। राव जी को रणक्षेत्र के बीच अचल भाव से स्थित देखकर अलाउद्दीन ने अपने भागते हुए वीरों से कहा—'रे मूर्ख मनुष्यो, तुमने जिस मेरे कारण आजन्म आनंद से जीविका निर्वाह की, अहर्निश आनंद आमोद में व्यतीत किये, आज तुम्हें लड़ाई का मैदान छोड़कर भागते हुए शर्म नहीं आती।" इतना सुनते ही मुसलमान सेना भूखे बाघ या फुफकारते हुए सर्प की तरह लौट पड़ी। यहाँ राजपूत तो सदैव हथेली पर प्राण रखे बैठे थे, दोनों में इस तरह कड़ाचूर मार पड़ी कि रणभूमि में रक्त की नदी बह निकली। उस वेग से बहती हुई शोणित सरिता में जहाँ तहाँ पड़े हुए हाथियों के शव वास्तविक चट्टानों से भासित होते थे, वीरों के हाथ पाँव जंघा इत्यादि कटे हुए अवयव जलचर जीव-से तैरते ज्ञात होते थे, वीरों के सुचिक्कण केश सिवार और ढाल कच्छप-सी प्रतीत होती थी। नव युवा वीरों के कटे हुए मस्तक कमल-से और उनके आरक्त बड़े बड़े नेत्र खंज-से खिलते हुए नजर आते थे। इस पसर में ७५ हाथी, सवा लाख घोड़े, ७०० निशानवाले और अगनित योधा काम आए। सिकंदर शाह, शेर खाँ, मरहम खाँ, मोहब्बत खाँ, मुदफ्फर या मुजफ्फर खाँ, नूर खाँ, निजाम खाँ, इत्यादि मुसलमान वीर मारे गये और राव जी की तरफ के भी नामी नामी चार सौ योद्धा खेत रहे।

इसी मारामार में राव हम्मीर जी ने अपने हाथी को अलाउद्दीन के संमुख डटाये जाने की आज्ञा दी और कहला भेजा कि अबतक वृथा ही रक्त प्रवाह हुआ है, अब आइए हमारा आपका द्वंद्व युद्ध हो और सब द्वंद्व समाप्त हो। राव जी का यह सँदेसा सुनकर अलाउद्दीन ने मंत्री से पूछा कि अब क्या करें। तब मंत्री ने उत्तर दिया कि उस चहुआन के बल, प्रताप एवं पराक्रम से आप अपरिचित नहीं हैं अतएव मेरे विचार में तो यही आता है कि अब आप संधि कर लें तो सर्वथा भला है। निदान अलाउद्दीन ने वजीर की बात मानकर हम्मीर जी के पास संधि का प्रस्ताव भेजा परन्तु उस वीर हम्मीर ने उत्तर दिया कि युद्धस्थल में उपस्थित होकर मित्रता का प्रस्ताव करना भला कौन-सी नीति और बुद्धिमत्ता का काम है। शत्रु के संमुख विनती करना नितांत कायरता अथवा दंभमय चतुरता का पता देता है।

बादशाह के दूत को इस प्रकार नीतियुक्त उत्तर देकर राव जी ने अपने राजपूत वीरों को आज्ञा दी कि 'हे वीरवर योद्धाओ, अब मेरी यही इच्छा है कि आप तोप, बाण, हथनार, चादर, जंबूर, बंदूक, तमंचा, बरछा, सेल, साँग इत्यादि हथियारों को त्यागकर केवल तलवार, छुरी, कटारी और विषाण से काम लो अथवा मल्लयुद्ध द्वारा ही अपने पराक्रम का परिचय देते हुए स्वर्ग की सीढ़ी पर पैर दो। साथ ही मेरी यह भी आज्ञा है कि बादशाह को न मारना।।"

राव जी के इतना कहते ही राजपूत रावत, महावत से हकारे हुए हाथी की तरह अपने अपने उज्ज्वल शस्त्रों को चमकाते हुए चल पड़े। क्षुधित मृगराज की भाँति रणबाँकुरे राजपूतों का वेग मुसलमानी सेना क्षण भर न सह सकी और बड़े बड़े सैनिक अमीर उमरा भेड़ की भाँति भाग उठे। राजपूत सेना ने अलाउद्दीन के हाथी को घेर लिया और उसे राव हम्मीर जी के संमुख ले आए। राव जी ने विवश हुए बादशाह को देखकर अपने सर्दारों से कहा कि यह पृथ्वी-

पति बादशाह है। यह अवंध्य है। इसलिये आप लोग इसे यों ही छोड़ दीजिए। निदान राजपूत सर्दारों ने राव जी की आज्ञा मानकर अलाउद्दीन को उसकी सेना में पहुँचा दिया और वह भी इसी समय वहाँ से कूचकर दिल्ली को चला आया।

उधर राव हम्मीर जी ने अपने घायलों को उठवाकर और बादशाही सेना से छीने हुए निशान लिवाकर निज दुर्ग की तरफ फेरा किया।

राव जी ने भूलवश, अथवा विजय के उत्साहवश, शाही निशानों को आगे चलने की आज्ञा दी। यह देखकर रानी जी ने समझा कि रावजी खेत हार गए और यह किले पर शाही सेना आ रही है। ऐसा विचार कर रानी जी ने अन्यान्य सब परिवार की वीर महिलाओं सहित प्रज्ज्वलित अग्नि में शरीर होम कर शाका किया। जब राव जी ने किले में आकर यह दृश्य देखा तो सब सर्दारों और सैनिकों को आज्ञा दी कि वे चित्तौर में जाकर कुंवर रतनसेन की रक्षा करें और आप शिव के मंदिर में जाकर नाना प्रकार के पूजन अर्चन करके यह वरदान माँगा कि अब जो मैं पुनः जन्म धारण करूं तो इसी प्रकार वीर क्षत्रिय कुल में। और खड्ग खींचकर अपने ही हाथों से कमल के पुष्प के समान अपना माथा उतार शिव जी को चढ़ा दिया।

जब यह समाचार अलाउद्दीन को कर्णगोचर हुआ तो राव जी के कर्तव्य पर पश्चात्ताप करता हुआ वह फौरन फिर आया और राव जी के संमुख खड़ा होकर अदब से प्रणाम करता हुआ बोला कि अब मुझे क्या आज्ञा है। यह सुनकर राव जी के मस्तक ने उत्तर दिया कि तुम जाकर समुद्र में शरीर छोड़ो तब हम तुम मिलेंगे। राव जी के शीश के वचन मानकर अलाउद्दीन ने वजीर महरम खाँ को आज्ञा दी कि वह सब लश्कर सहित दिल्ली जाकर शाहजादा अलाबृत्त को तख्त पर बिठावे और वह आप उसी क्षण रामेश्वर को चला गया। वहाँ पर उसने रामेश्वर जी की पूजा की और उन्हीं का

ध्यान और स्मरण करते हुए समुद्र में वह कूद पड़ा।

इस प्रकार बादशाह के तन त्यागने पर राव हम्मीर जी और अलाउद्दीन और मीर महिमाशाह परस्पर स्वर्ग में गले मिले और अप्सराओं और देवताओं ने पुष्पवृष्टि की।

इस प्रकार राव हम्मीर जी का यश-कीर्तन सुनकर राव चंद्रभान जी ने कवि जोधराज को बहुत-सा दान दिया, और सब भाँति प्रसन्न किया।

चैत्र सुदी तृतीया बृहस्पतिवार संवत् १८८५ को ग्रंथ पूर्ण हुआ।

यह जोधराज-कृत 'हम्मीररासो' का सारांश हुआ। इसमें दी हुई ऐतिहासिक बातों पर विचार करने के पहले मैं एक दूसरे कवि की लिखी हुई हम्मीर राव की कथा का सारांश देना चाहता हूँ। नयनचंद्र सूरि नामक एक जैन कवि ने 'हम्मीर महाकाव्य' नाम का एक ग्रंथ संस्कृत में लिखा है। नयनचंद्र जयसिंह सूरि का पौत्र था। यह ग्रंथ पंद्रहवीं शताब्दी का लिखा हुआ जान पड़ता है। सन् १८७८ में पंडित नीलकंठ जनार्दन ने इस काव्य का एक संस्करण छपाया जिसकी भूमिका में उन्होंने काव्य का सारांश दिया है। उससे नीचे लिखा वृत्तांत मैं हिंदी में उद्धृत करता हूँ। यहाँ पर इस ग्रंथ में दिया हुआ हम्मीरदेव के वंश का कुछ वृत्तांत दे देना उचित जान पड़ता है।

चौहान वंश में दीक्षित वासुदेव नाम का एक पराक्रमी राजा हुआ। इसका पुत्र नरदेव था। इसके अनंतर हम्मीर का वंशक्रम इस प्रकार है—

चंद्रराज
जयपाल
जयराज
सामंतसिंह
गुयक
नंदन

वप्रराज
हरिराज
सिंहराज—इसने हेतिम नाम के मुसलमान सर्दार को मारा।
भीम—सिंह का भतीजा और उसका दत्तक पुत्र।
विग्रहराज—इसने गुजरात के मूलराज को मारा।
गंगदेव
वल्लभराज
राम
चामुंडराज—हेजम्मुद्दीन को मारा।
दुर्लभराज—शहाबुद्दीन को जीता।
दुशल—कर्णदेव को मारा।
वीसलदेव—शहाबुद्दीन को मारा।
पृथ्वीराज—प्रथम
अल्हण
अनल—अजमेर में तालाब खुदवाया।
जगदेव
वीशल
जयपाल
गंगपाल
सोमेश्वर—कर्पूरादेवी से विवाह किया।
पृथ्वीराज—द्वितीय
हरिराज
गोविंद
वाल्हण—इसके प्रल्हाद और वाग्भट्ट दो पुत्र हुए।
प्रह्लाद
वीरनारायण—प्रह्लाद का पुत्र।
वाग्भट्ट—वाल्हण का पुत्र।
वाग्भट्ट के उत्तराधिकारी उनके पुत्र जैत्रसिंह हुए। उनकी रानी

का नाम हीरादेवी था जो बहुत रूपवती और सर्वथा अपने उच्च पद के योग्य थी। कुछ काल में हीरादेवी गर्भवती हुई। उसकी इस अवस्था की वासनाओं से गर्भस्थित जीव की प्रवृत्ति और उसके महत्त्व का आभास मिलता था। कभी कभी उन्हें मुसलमानों के रक्त से स्नान करने की इच्छा होती। उसके पति उसकी अभिलाषाओं को पूरा करते। अंत में, शुभ घड़ी में, उसको एक पुत्र उत्पन्न हुआ। पृथ्वी की चारों दिशाओं ने सुंदर शोभा धारण की; सुखद समीर बहने लगा; आकाश निर्मल हो गया; सूर्य्य मृदुलता से चमकने लगा; राजा ने अपना आनंद ब्राह्मणों पर सुवर्ण बरसा कर और देवताओं की वंदना करके प्रकट किया। ज्योतिषियों ने बालक के मुहूर्त्त स्थान में पड़े हुए नक्षत्रों के शुभ योग का विचार करके भविष्यद्वाणी की कि कुमार समस्त पृथ्वी को अपने देश के शत्रु मुसलमानों के रक्त से आर्द्र करेगा। बालक का नाम हम्मीर रखा गया। हम्मीर बढ़कर एक सुंदर और बलिष्ठ बालक हुआ। उसने सब कलाओं को सीख लिया और शीघ्र ही वह युद्ध-विद्या में भी निपुण हो गया।

जैत्रसिंह के सुरत्राण और विराम दो और पुत्र थे, जो बड़े योद्धा थे। यह देखकर कि उनके पुत्र अब उनको राज्य के भार से मुक्त करने योग्य हो गए, जैत्रसिंह ने एक दिन हम्मीर से इस विषय में बातचीत की और उन्हें किस रीति से चलना चाहिए इस विषय में उत्तम उपदेश देने के उपरांत, राज्य उनके (हम्मीर के) हवाले कर दिया, और वे आप बनवास करने चले गए। यह बात संवत् १३३९ (१२८३ ई०) में हुई।[1]

छः गुणों और तीन शक्तियों से संपन्न होकर हम्मीर ने युद्ध के

१—ततश्च सवन्नववह्नि .वह्निभूरायने माधवलक्षपक्षे।
पौष्यां तिथौ हेलिदिने सपुष्ये दैवज्ञनिर्दिष्टबलेऽलिलग्ने ॥

—सर्ग ८, श्लोक ५६

हेतु प्रस्थान करने का संकल्प किया। पहले वह राजा अर्जुन की राजधानी सरसपुर में गया। यहाँ एक युद्ध हुआ जिसमें अर्जुन पराजित होकर अधीन हुआ। इसके अनंतर राजा ने गढ़मंडले पर चढ़ाई की, जिसने कर देकर अपनी रक्षा की। गढ़मंडले से हम्मीर धार की ओर बढ़ा। यहाँ एक राजा भोज राज्य करता था जो स्वनामधारी विख्यात राजा भोज के समान ही कवियों का मित्र था। भोज को पराजित करके सेना उज्जैन में आई जहाँ हाथी, घोड़े और मनुष्य क्षिप्रा के निर्मल जल में स्नान किया। राजा ने भी नदी में स्नान किया और महाकाल के मंदिर में जाकर पूजा की। बड़े समारोह के साथ वे उस प्राचीन नगरी के प्रधान मार्गों से होकर निकले। उज्जैन से हम्मीर चित्रकोट (चित्तौर) की ओर बढ़ा और मेढ़वार (मेवाड़) को उजाड़ करता हुआ आबू पर्वत पर गया।

वेद के अनुयायी होकर भी यहाँ हम्मीर ने मंदिर में ऋषभ देव की पूजा की, क्योंकि बड़े लोग विरोधसूचक भेदभाव नहीं रखते। वस्तुपाल के स्तुति-पाठ के समय भी राजा प्रस्तुत थे। वे कई दिन तक वशिष्ठ की कुटी में रहे, और मंदाकिनी में स्नान करके उन्होंने अचलेश्वर की आराधना की। यहाँ अर्जुन की कृतियों को देखकर वे बहुत ही आश्चर्यित हुए।

आबू का राजा एक प्रसिद्ध योद्धा था, किंतु उसके बल ने इस अवसर पर कुछ काम न किया और उसे हम्मीर के अधीन होना पड़ा।

आबू छोड़कर राजा वर्द्धनपुर आए और उस नगर को उन्होंने लूटा तथा नष्ट किया। चंगा की भी यही दशा हुई। यहाँ से अजमेर की राह से हम्मीर पुष्कर को गए जहाँ उन्होंने आदिवाराह की आराधना की। पुष्कर से राजा शाकंभरी को गए। मार्ग में मरहटा[1], खंडिल्ला, चमदा और काँकरौली लूटे गए। काँकरौली में

१—इस नाम का एक स्थान जोधपुर राज्य में है। जोधपुर राज्य में नाडोल नाम का एक गाँव है जहाँ आसापुरा देवी का स्थान है। रणथंभ से यदि नाडोल जाया जाय तो मेड़ता बीच में पड़ेगा।

त्रिभुवनेंद्र उनसे मिलने आए और अपने साथ बहुत सी अमूल्य भेंट लाए।

इन विशद कार्य्यों को पूरा करके हम्मीर अपनी राजधानी को लौट आए। राजा के आगमन से वहाँ बड़ी धूम हुई। राज्य के सब से बड़े कर्मचारी धर्मसिंह के साथ दल बाँधकर अपने विजयी राजा की अगवानी के लिये बाहर आए। मार्ग के दोनों ओर प्रेमी प्रजा अपने राजा के दर्शन के हेतु उत्सुक खड़ी थी।

इसके कुछ दिन पीछे हम्मीर ने अपने गुरु विश्वरूप से कोटियज्ञ का फल पूछा और उनसे यह उत्तर पाकर कि इस यज्ञ के पूरा करने से स्वर्ग लोक प्राप्त होता है राजा ने आज्ञा दी कि कोटियज्ञ की तय्यारी की जाय। चट देश के सब भागों से विद्वान् ब्राह्मण बुलाए गए, और यज्ञ पवित्र शास्त्रों में लिखे विधानों के अनुसार समाप्त किया गया। ब्राह्मणों को खूब भोजन कराकर उन्हें भरपूर दक्षिणा दी गई। इसके उपरांत राजा ने एक महीने तक के लिये मुनिव्रत ठाना।

जब कि रणथंभौर में ये सब बातें हो रही थीं, दिल्ली में, जहाँ अलाउद्दीन राज्य करता था, कई परिवर्त्तन हुए। रणथंभौर में जो कुछ हो रहा था उसका समाचार पाकर उसने अपने छोटे भाई उलुगखाँ[१] को सेना लेकर चौहान प्रदेश पर चढ़ाई करने और उसको उजाड़ देने की आज्ञा दी। उसने कहा है—'जैत्रसिंह हम लोगों को कर देता था; पर यह उसका बेटा न केवल कर ही देता है, वरन् हम लोगों के प्रति अपनी घृणा दिखाने के लिये प्रत्येक अवसर ताकता रहता है। यह उसकी शक्ति को नष्ट करने का अच्छा अवसर है।' ऐसी आज्ञा पाकर उलुगखाँ ने ८०००० सवार लेकर रणथंभौर प्रदेश पर चढ़ाई की। जब यह सेना वर्णनाशा नदी पर पहुँची तब उसने देखा कि सड़कें, जो शत्रु के प्रदेश को गई हैं, सवारों के चलने योग्य नहीं हैं। इससे वह कई दिन वहाँ टिका रहा। इस बीच उसने आस-पास के गाँवों को जलाया और नष्ट किया।

१—मालिक मुईजुद्दीन उलुगखाँ। ब्रिग्स ने अपने फिरिश्ता के अनुवाद में इसको 'अलफखाँ' लिखा है।

यहाँ रणथंभोर में मुनिव्रत पूरा न होनेके कारण राजा स्वयं युद्धक्षेत्र में न जा सकते थे। अतएव उन्होंने अपने सेनापतियों भीमसिंह और धर्म्मसिंह को आक्रमणकारियों को भगाने के लिये भेजा। राजा की सेना वर्णनाशा नदी के किनारे एक स्थान पर आक्रमणकारियों पर टूट पड़ी और उसने शत्रुओं को, जिनके बहुत-से लोग मारे गए, परास्त किया। इस जयलाभ से संतुष्ट होकर भीमसिंह रणथंभोर की ओर लौटने लगा, और उलुगखाँ अपनी सेना का प्रधान अंग साथ लिए छिपकर उसके पीछे-पीछे बढ़ने लगा। अब यह हुआ कि भीमसिंह के सिपाही, जिन्होंने लूट में बहुत-सा धन पाया था, उसको रक्षापूर्वक अपने-अपने घर ले जाने को व्यग्र थे, और इसी व्यग्रता में उन्होंने अपने नायक को पीछे छोड़ दिया जिसके साथ केवल अनुचरों की छोटी-सी मंडली रह गई। जब इस प्रकार भीमसिंह हिंदावत घाटी के बीचोबीच पहुँचा तब उसने विजय के अभिमान में उन नगाड़ों और बाजों को ज़ोर से बजाने की आज्ञा दी जिनको उसने शत्रु से छीना था। इस कार्य्य का फल अचिंत्यपूर्व और आपत्तिजनक हुआ। उलुगखाँ ने अपनी सेना को छोटे छोटे दलों में भीमसिंह का पीछा करने की आज्ञा दे रक्खी थी और बाजा बजाते ही उसे शत्रु के ऊपर जयलाभ की सूचना समझ, उसपर टूट पड़ने का आदेश दे रक्खा था। अतः जब मुसलमानों के पृथक् पृथक् दलों ने नगाड़ों का शब्द सुना तब वे चारों ओर से घाटी में आ पहुँचे, और उलुगखाँ भी एक ओर से आकर भीमसिंह से युद्ध करने लगा। हिंदू सेनापति कुछ काल तक यह बेजोड़ की लड़ाई लड़ता रहा, पर अंत में घायल हुआ और मारा गया। शत्रु के ऊपर यह जयलाभ पाकर उलुगखाँ दिल्ली लौट गया।

यज्ञ पूरा होने के उपरांत हम्मीर ने युद्ध का वृत्तांत और अपने सेनापति भीमसिंह की मृत्यु का समाचार सुना। उन्होंने धर्म्मसिंह को भीमसिंह का साथ छोड़ने के लिए धिक्कारा, उसको अंधा कहा क्योंकि वह यह न देख सका कि उलुगखाँ सेना के पीछे पीछे था।

उन्होंने उसको क्लीव भी कहा क्योंकि, वह भीमसिंह की रक्षा के लिये नहीं दौड़ा। इस प्रकार धर्म्मसिंह को धिक्कार कर ही संतुष्ट न होकर राजा ने उस दोषी सेनापति को अंधा करने और उसको क्लीव करने की आज्ञा दी। सेनानायक के पदपर भी धर्म्मसिंह के स्थान पर भोजदेव हुए, जो राजा के एक प्रकार से भाई होते थे और धर्म्मसिंह को देश निकालने का दंड भी सुनाया जा चुका था पर भोजदेव के बीच में पड़ने से उसका बर्त्ताव नहीं हुआ।

धर्म्मसिंह इस प्रकार अवयवभग्न और अपमानित होकर राजा के इस व्यवहार से अत्यंत दुःखित हुआ और उसने बदला लेने का संकल्प किया। अपने संकल्पसाधन के हेतु उसने राधादेवी नाम की एक वेश्या से, जिसका दरबार में बहुत मान था, गहरी मित्रता की। राधादेवी नित्य प्रति जो कुछ दरबार में होता उसकी रत्ती-रत्ती सूचना अपने अंधे मित्र को देती। एक दिन ऐसा हुआ कि राधादेवी बिलकुल उदास और मलिन घर लौटी, और जब उसके अंधे मित्र ने उसकी उदासी का कारण पूछा तब उसने उत्तर दिया कि आज राजा के बहुत से घोड़े वेधरोग से मर गए, इससे उन्होंने मेरे नाचने और गाने की ओर बहुत थोड़ा ध्यान दिया, और जान पड़ता है कि बहुत दिन तक यही दशा रहेगी। अंधे पुरुष ने उसे प्रसन्न होने को कहा क्योंकि थोड़े ही दिनों में सब फिर ठीक हो जायगा। उसे केवल राजा से यह जताने का अवसर देखते रहना चाहिए कि यदि धर्म्मसिंह अपने पहले पदपर फिर हो जाय तो वह राजा को जितने घोड़े हाल में मरे हैं उनसे दूने भेंट करे। राधादेवी ने अपना काम सफाई से किया, और राजा ने लोभ के वश में होकर धर्म्मसिंह को उसके पहले पद पर फिर आरूढ़ कर दिया।

धर्म्मसिंह इस प्रकार फिर से नियुक्त होकर बदले ही का विचार करने लगा। राजा का लोभ बढ़ता गया और उसने अपने अत्याचार और लूट से प्रजा की ऐसी हीन दशा कर दी कि वह राजा से घृणा करने लगी। वह किसी को, जिससे कुछ—घोड़ा, रुपया, कोई भी रखने

योग्य पदार्थ—मिल सकता था, न छोड़ता। राजा, जिसका कोष वह भरता था, अपने अंधे मंत्री से बहुत प्रसन्न रहता जिसने, सफलता से फूलकर भोजदेव से उसके विभाग का लेखा माँगा। भोज जानता था कि वह उसके पद से कुढ़ता है, अतः उसने राजा के पास जाकर धर्म्मसिंह के समस्त षड्यंत्र की बात कही और मंत्री के अत्याचार से रक्षा पाने के लिये उनसे प्रार्थना की। किंतु हम्मीर ने भोज की बात पर कुछ भी ध्यान नहीं दिया और कहा कि धर्म्मसिंह को पूरा अधिकार सौंपा गया है, वह जो उचित समझे कर सकता है, इसलिये यह आवश्यक है कि और लोग उसकी आज्ञा मानें। भोज ने जब देखा कि राजा का चित्त उसकी ओर से फिर गया है तब उसने अपनी संपत्ति जब्त होने दी और धर्म्मसिंह के आज्ञानुसार उसे लाकर राजा के भांडार में रखा। पर कर्त्तव्य के अनुरोध से वह अपने नायक के साथ अब भी जहाँ कहीं वे जाते जाता रहता था। एक दिन राजा वैजनाथ के मंदिर में पूजन के हेतु गए और भोज को अपने दल में देखकर उन्होंने एक सभासद से, जो पास खड़ा था, व्यंग्यपूर्वक कहा कि 'पृथ्वी अधम जनों से भरी है; किंतु पृथ्वी पर सबसे अधम जीव कौआ है, जो क्रुद्ध उल्लू से अपने पर नोचवाकर भी अपने पुराने पेड़ों पर के घोंसले में पड़ा रहता है।' भोज ने इस व्यंग्य का अर्थ समझा और यह भी जाना कि यह उसी पर छोड़ा गया है। अत्यंत दुखी होकर वह घर लौट गया और उसने अपने अपमान की बात अपने छोटे भाई पीतम से कही। दोनों भाइयों ने अब देश छोड़ने का संकल्प किया, और दूसरे दिन भोज हम्मीर के पास गया और उसने बड़ी नम्रता से तीर्थाटन के हेतु काशी जाने की अनुमति माँगी। राजा ने उसकी प्रार्थना स्वीकार की और कहा कि 'काशी क्या, जी चाहे तो तुम और आगे जा सकते हो; तुम्हारे कारण नगर उजड़ जाने का भय नहीं है।' इस अविनीत वचन का उत्तर भोज ने कुछ न दिया। वह प्रणाम करके चला गया और उसने तुरंत काशी के हेतु प्रस्थान कर दिया। राजा भोजदेव के चले जाने से प्रसन्न हुआ और उसने

कोतवाल का पद, जो (उसके जाने से) खाली हुआ, रतिपाल को प्रदान किया।

जब भोज सिरसा पहुँचा तब उसने अपने दिन के फेर पर विचार किया और संकल्प किया कि इन अपमानों का बिना बदला लिए न रहना चाहिए। चित्त की इसी अवस्था में वह अपने भाई पीतम के साथ योगिनीपुर गया और वहाँ अलाउद्दीन से मिला। मुसलमान सरदार अपने दरबार में भोज के आ जाने से बहुत प्रसन्न हुआ। उसने बड़े आदर से उसके साथ व्यवहार किया और जगरा का नगर तथा इलाका उसे जागीर में दिया। अब से पीतम तथा भोज के परिवार के और लोग यहाँ रहने लगे और वह (भोज) आप दरबार में रहने लगा। अलाउद्दीन का अभिप्राय हम्मीर का वृत्त जानने का था इसलिये भेंट और पुरस्कार से दिन दिन भोज की प्रतिष्ठा बढ़ाने लगा और वह भी धीरे धीरे अपने नए स्वामी के हित-साधन में तत्पर हुआ।

भोज को अपने पक्ष में समझ अलाउद्दीन ने एक दिन उससे अकेले में पूछा कि हम्मीर को दबाने का कोई सुगम उपाय है। भोज ने उत्तर दिया कि हम्मीर ऐसे राजा पर विजय पाना कोई सहज काम नहीं है। जिससे कुंतल, मध्यदेश, अंग और कांची तक के राजा भयभीत रहते हैं, जो छः गुणों और तीन शक्तियों से संपन्न, एक विशाल और प्रबल सेना का नायक है, जिसकी और समस्त राजा शंका करते और आज्ञा मानते हैं, कई राजाओं को दमन करनेवाला पराक्रमी विराम जिसका भाई है, जिसकी सेवा में महिमासाह तथा और दूसरे निःशंक मोगल सर्दार रहते हैं, जिसने उसके भाई को हराकर स्वयं अलाउद्दीन को छकाया। भोज ने कहा कि न केवल हम्मीर के पास योग्य सेनापति ही हैं वरन् वे सबके सब उससे स्नेह रखते हैं। एक और के सिवाय और कहीं लोभ दिखाना असंभव है। हम्मीर की सभा में केवल एक ही व्यक्ति ऐसा है जो अपने को बेच सकता है। जैसे दीपक के लिये वायु का झोंका, कमल के लिये मेघ, सूर्य्य

के लिये रात्रि, यती के लिये स्त्रियों का संग, दूसरे गुणों के लिये लोभ, वैसे ही हम्मीर के लिए अप्रतिष्ठा और नाश का कारण यह एक व्यक्ति है। भोज ने कहा कि वह समय भी हम्मीर के विरुद्ध चढ़ाई करने के लिये अनुपयुक्त नहीं है। इस वर्ष चौहान प्रदेश में खूब अन्न हुआ है। यदि किसी प्रकार अलाउद्दीन उसे रखने के पहले ही किसानों से छीन सके तो वे जो कि अंधे व्यक्ति के अत्याचार से पहले ही से पीड़ित हैं, हम्मीर का पक्ष छोड़ने पर सम्मत हो सकते हैं।

अलाउद्दीन को भोज का विचार पसंद आया और उसने तुरंत उलुगखाँ को एक लाख सवारों की सेना लेकर हम्मीर के देश पर आक्रमण करने की आज्ञा दी। उलुगखाँ की सेना एक प्रबल धारा के समान जिन प्रदेशों से होकर निकलती उनके अधिपतियों को नरकट के समान नवाती चली जाती। सेना इसी ढंग से हिंदावत पहुँच गई। तब उसके आने का समाचार हम्मीर तक पहुँचाया गया। इस पर उस हिन्दू राजा ने एक सभा की और विचार किया कि किन उपायों का अवलंबन करना अच्छा होगा। यह निश्चय हुआ कि वीरम और राज्य के शेष आठ बड़े पदाधिकारी शत्रु से युद्ध करने जाय। तुरंत राजा के सेनानायकों ने सेना को आठ भागों में विभक्त किया और आठों दिशाओं से आकर वे मुसलमानों पर टूट पड़े। वीरम पूर्व से आया और महिमासाह पश्चिम से। जाजदेव दक्षिण से और गर्भारुक उत्तर की ओर से बढ़ा। रतिपाल अग्निकोण से आया और तिचर मोगल ने वायुकोण से आक्रमण किया। रणमल ईशानकोण से आया और वैचर ने नैऋत्य की ओर से आकर आक्रमण किया। राजपूत लोग बड़े पराक्रम के साथ अपने कार्य्य में तत्पर हुए। उनमें से कई एक ने शत्रु की खाइँयों को मिट्टी और कूड़े करकट से भर दिया, कई एक ने मुसलमानों के लकड़ी के घेरों में आग लगा दी। कुछ लोगों ने उनके डेरों (खेमों) की रस्सियों को काट डाला। मुसलमान लोग शस्त्र

लेकर खड़े थे और डींग हाँककर कहते थे कि हम राजपूतों को घास के समान काट डालेंगे। दोनों दल साहसपूर्वक जी खोलकर लड़े, किंतु राजपूतों के लगातार आक्रमण के आगे मुसलमानों को हटना पड़ा। अतएव उनमें से बहुतों ने रणक्षेत्र त्याग दिया और वे अपना प्राण लेकर भागे। कुछ काल पीछे समस्त मुसलमानी सेना ने इसी रीति का अनुसरण किया और वह कायरता से युद्धक्षेत्र से भागी; राजपूतों की पूरी विजय हुई।

जब युद्ध समाप्त हो गया तब सीधे सादे राजपूत लोग युद्धस्थल में अपने मरे और घायल लोगों को उठाने आए। इस खोज में उन्होंने बहुत-सा धन, शस्त्र, हाथी और घोड़े पाए। शत्रु की बहुत सी स्त्रियाँ उनके हाथ आईं। रतिपाल ने आते हुए प्रत्येक नगर में उनसे मट्ठा बेचवाया।

हम्मीर शत्रु के ऊपर अपने सेनापतियों की इस विजयप्राप्ति से अत्यंत प्रसन्न हुए। इस घटना के उपलक्ष में उन्होंने एक बड़ा दरबार किया। दरबार में राजा ने रतिपाल को सोने की सिकरी पहनाई, और उसकी तुलना युद्ध के हाथी से की जो सुवर्ण के पट्टे का अधिकारी होता है। दूसरे सरदार और सिपाही लोग भी अपनी अपनी योग्यता के अनुसार पुरस्कृत किए गए और अनुग्रहपूर्वक उन्हें अपने अपने घर जाने की आज्ञा मिली।

मोगल सरदारों के सिवाय और सब लोग चले गए। हम्मीर ने यह बात देखी और कृपापूर्वक उनसे रह जाने का कारण पूछा। उन्होंने उत्तर दिया कि कृतघ्न भोज को, जो जगरा में जागीर भोग रहा है, दंड देने के पहले हम तलवार म्यान में करना और अपने घर जाना बुरा समझते हैं। उन्होंने कहा कि राजा के संबंध के कारण ही हम लोगों ने उसे अब तक जीता छोड़ा है; किंतु अब वह इस सहनशीलता के योग्य नहीं रहा क्योंकि उसी की प्रेरणा से शत्रु ने रणथंभोर प्रदेश पर चढ़ाई की थी। अतएव उन्होंने जगरा पर चढ़ाई करके भोज पर आक्रमण करने की अनुमति माँगी। राजा ने

प्रार्थना स्वीकार की और दोनों मोगलों ने तुरंत जगरा की ओर प्रस्थान किया। उन्होंने नगर को घेर कर ले लिया और पीतम को कई और मनुष्यों के साथ बंदी बनाकर वे उसे फिर रणथंभोर ले आए।

उलुगखाँ पराजय के पीछे तुरंत दिल्ली लौट गया और जो कुछ हुआ था अपने भाई से उसने सब कह सुनाया। उसके भाई ने उस पर कायरता का दोष लगाया; अपने भागने का दोष उसने यह कहकर मिटाया कि उस अवस्था में मेरे लिये केवल एक यही उपाय था जिससे इस संसार में एक बेर फिर मैं आपका दर्शन करता और चौहान से लड़ने के लिये दूसरा अवसर पाता। उलुगखाँ ने बात गढ़कर छुट्टी भी न पाई थी कि क्रोध से लाल भोज भीतर आया। उसने अपने उपवस्त्र को पृथ्वी पर बिछा दिया और उसपर इस प्रकार लोटने और अंडबंड बकने लगा जैसे उस पर प्रेत चढ़ा हो। अलाउद्दीन को उसका यह विलक्षण आचरण कुछ कम बुरा नहीं लगा; उसने उसका कारण पूछा। भोज ने उत्तर दिया कि मेरे लिये इस विपत्ति को कभी भूलना कठिन है जो आज मुझपर पड़ी है; क्योंकि महिमासाह ने जगरा में जाकर मुझ पर आक्रमण किया और मेरे भाई पीतम को बंदी करके हम्मीर के पास ले गया। भोज ने कहा—'लोग घृणा से मेरी ओर उंगली दिखाकर अब यही कहेंगे कि यह एक ऐसा मनुष्य है जिसने अधिक पाने के लालच से सर्वस्व खो दिया। असहाय और अनाथ होकर मैं पृथ्वी पर अब भी बेखटके नहीं लेट सकता क्योंकि वह समस्त पृथ्वी हम्मीर की है; इसीलिये मैंने अपना वस्त्र बिछा दिया है जिसमें उसी पर मैं उस शोक में छटपटाऊँ जिसने मुझमें खड़े रहने की शक्ति भी नहीं रहने दी है।

अपने भाई की सहायता की कथा से अलाउद्दीन के हृदय में क्रोध की अग्नि पहले ही से जल उठी थी, अब भोज की ये बातें उस अग्नि में आहुति के समान हुईं। हृदय के आवेग में अपनी पगड़ी को पृथ्वी पर पटककर उसने कहा कि हम्मीर की मूर्खता उस मनुष्य

की सी है जो समझता है कि मैं सिंह के कपाल पर पैर रख सकता हूँ, और प्रतिज्ञा की कि मैं चौहानों की समस्त जाति ही को नष्ट कर डालूंगा। उसने तुरंत अनेक देशों के राजाओं के पास पत्र भेजे और हम्मीर के विरुद्ध लड़ाई में योग देने के लिये उन्हें बुलाया। अंग, तैलंग, मगध, मैसूर, कलिंग, बंग, भोट, मेड़पाट, पंचाल, बंगाल, थमिम, भिल्ल, नेपाल तथा दाहल के राजा और कुछ हिमालय के सरदार अपना अपना दल आक्रमणकारी सेना में भरने को लाए। इस बहुरंगिनी सेना में कुछ लोग ऐसे थे जो युद्ध की देवी के प्रेम से आए थे, और कुछ ऐसे थे जो लूट की चाह से आक्रमणकारियों के दल में भरती हुए थे। कुछ लोग केवल उस घमासान युद्ध के दर्शक ही होने के हेतु आए थे जो होनेवाला था। हाथी, घोड़ों, रथों और मनुष्यों की इतनी कसमस थी कि भीड़ में कहीं तिल रखने की जगह नहीं थी। इस भारी समारोह के साथ दोनों भाई नसरतखाँ और उलुगखाँ रणथंभोर प्रदेश की ओर चले।

अलाउद्दीन छोटे से दल के साथ इस अभिप्राय से पीछे रह गया जिसमें राजपूतों को यह भय बना रहे कि अभी बादशाह के पास सेना बची है।

सेना की संख्या इतनी अधिक थी कि मार्ग में नदियों का जल चुक जाता था। इससे यह आवश्यक हुआ कि सेना किसी एक स्थान पर कुछ घंटों से अधिक न ठहरे। कूच पर कूच बोलते दोनों सेनापति रणथंभोर प्रदेश की सीमा पर पहुँच गए। इससे आक्रमणकारियों के हृदयों में भिन्न भिन्न भाव उत्पन्न हुए। वे लोग, जो पहली लड़ाई में संमिलित नहीं हुए थे, कहते थे कि विजय पाना निश्चित है क्योंकि राजपूतों के लिये ऐसी सेना का सामना करना असंभव है। किंतु पहली लड़ाई के योद्धा लोग ऐसा नहीं समझते थे और अपने साथियों से कहते थे कि याद रखना हम्मीर की सेना से सामना करना है अतएव युद्ध के अंत तक डींग हाँकना बंद रखना चाहिए।

जब सेना उस घाटी में पहुंची जहाँ उलुगखाँ की पराजय और

दुर्गति हुई थी तब उसने अपने भाई को शिक्षा दी कि अपनी शक्ति ही पर बहुत भरोसा न करना चाहिए, वरन्, चूंकि स्थान विकट और हम्मीर की सेना बली और निपुण है, इससे यह चाल चलनी चाहिए कि किसी को हम्मीर की सभा में भेज दें जो दो चार दिन तक संधि की बातचीत में उन्हें बहलाए रहे, और इस बीच सेना कुशलपूर्वक पर्वतों को पार करे और अपनी स्थिति दृढ़ कर ले। नसरतखाँ ने अपने भाई की यह अनुभवपूर्ण बात मानी, और मोल्हणदेव उन बातों का प्रस्ताव करने के लिये भेजा गया जिनसे मुसलमान लोग हम्मीर के साथ संधि कर सकते थे। बातचीत होने तक हम्मीर के लोगों ने आक्रमणकारी सेना को उस भयानक घाटी को बे-रोक टोक पार करने दिया। अब खाँ ने अपने भाई को तो उस मार्ग के एक पार्श्व में स्थित किया जो मंडी पथ कहलाता था और उसने स्वयं श्रीमंडप के दुर्ग को छेंका। साथी राजाओं के दल जैत्रसागर के चारों ओर टिकाए गए।

दोनों पक्ष अपनी अपनी घात में थे। मुसलमानों ने समझा कि हम आक्रमण आरंभ करने के लिये धूर्त्तता से उत्तम स्थिति पा गए हैं; उधर राजपूतों ने विचारा कि शत्रु अंतर्भाग में इतनी दूर बढ़ आए हैं कि वे अब हमसे किसी प्रकार भाग नहीं सकते।

रणथंभोर में खाँ के दूत ने राजा की आज्ञा से दुर्ग में प्रवेश पाया; जो कुछ उसने वहाँ देखा उससे उसपर राजा के प्रताप का आतंक छा गया। उसके हेतु जो दरबार हुआ उसमें वह गया, और आवश्यक शिष्टाचार के उपरांत उसने साहसपूर्वक उस संदेसे को कहा जो लेकर वह आया था। उसने कहा 'मैं विख्यात अलाउद्दीन के भाई उलुगखाँ और नसतरखाँ का दूत होकर राजा के दरबार में आया हूँ। मैं राजा के हृदय में, यदि संभव हो, तो यह बात जमाने के लिये आया हूँ कि अलाउद्दीन ऐसे महाविजयी का सामना करना कैसा निष्फल है और उन्हें अपने सरदार से संधि कर लेने की संमति देने आया हूँ।' उसने हम्मीर से संधि के लिये यह चंद शर्तें

बतलाई—"चाहे आप मेरे सरदार को एक लाख मोहर, चार हाथी और तीन सौ घोड़े भेंट करें और अपनी बेटी अलाउद्दीन को ब्याह दें, अथवा उन चार विद्रोही मोगल सरदारों को मेरे हवाले कर दें जो अपने स्वामी के कोपभाजन होकर अब आप की शरण में रहते हैं।" दूत ने फिर कहा—'यदि आप अपने राज्य और प्रताप को शांति-पूर्वक भोगना चाहते हों तो इन दो में से किसी शर्त को मानकर अपना अभिप्राय सिद्ध करने के लिये आपको अच्छा अवसर मिला है; इससे आपको शत्रुओं का नाश करनेवाले बादशाह अलाउद्दीन की कृपा और सहायता प्राप्त होगी जिसके पास असंख्य दृढ़ दुर्ग, सुसज्जित शस्त्रागार और मेगर्जीन हैं, जिसने देवगढ़ ऐसे ऐसे अग-णित अजेय दुर्गों पर अधिकार करके महादेव को भी लज्जित किया क्योंकि उनकी (महादेव की) ख्याति तो अकेले त्रिपुर के गढ़ को सफलतापूर्वक अधिकृत करने से हुई है।'

हम्मीर जो दूत के वचन अधीर होकर सुनता रहा इस अपमान-कारी संदेसे से बहुत ही क्रुद्ध हुआ और उसने श्री मोल्हणदेव से कहा कि यदि तुम भेजे हुए दूत न होते तो जिस जीभ से तुमने ये अपमान-सूचक बातें कही हैं वह काट ली गई होती। हम्मीर ने न केवल इन शर्तों में से किसी को मानना अस्वीकार ही किया वरन् अपनी ओर से उतने खड्ग के आघात स्वीकार करने के लिये अला-उद्दीन से प्रस्ताव किया जितनी मुहर, हाथी और घोड़े माँगने का उसने साहस किया, और दूत से यह भी कहा कि मुसलमान सर-दार का इस रणभिक्षा को अस्वीकार करना सूअर खाने के बराबर होगा। बिना और किसी शिष्टाचार के दूत सामने से हटा दिया गया।

रणथंभोर की सेना युद्ध के लिये सुसज्जित होने लगी। बड़ी योग्यता और पराक्रम के सेनापति भिन्न-भिन्न स्थानों की रक्षा के हेतु नियुक्त हुए। दुर्ग की दीवारों पर रक्षकों को धूप से बचाने के लिये इधर-उधर डेरे गाड़े गए। कई स्थानों पर उबलता हुआ तेल

और राल रखी गई कि यदि आक्रमणकारियों में से कोई निकट आने का साहस करे तो उसके शरीर पर वह छोड़ दी जाय। उपर्युक्त स्थानों पर तोपें चढ़ा दी गईं। अंत में मुसलमानी सेना भी रणथंभोर दुर्ग के सामने आई। कई दिन तक घमासान युद्ध होता रहा। नसरतखाँ अचानक एक गोली के लगने से मर गया और बरसात के आ जाने पर उलुगखाँ को लड़ाई बंद करनी पड़ी। वह दुर्ग से कुछ दूर हट गया और उसने अलाउद्दीन के पास अपनी भयानक स्थिति का समाचार भेजा। उसने नसरतखाँ का शव भी समाधिस्थ करने के निमित्त उसके पास भेज दिया। अलाउद्दीन ने यह समाचार पाकर तुरंत रणथंभोर की ओर प्रस्थान किया। यहाँ पहुँचकर उसने तुरंत अपनी सेना को दुर्ग के द्वार की ओर बढ़ाया और उसे छेंक लिया।

हम्मीर ने इन कार्य्यों की तुच्छता सूचित करने के लिये दुर्ग की दीवारों पर कई जगह सूप के झंडे गड़वा दिए। इससे यह अभिप्राय झलकता था कि दुर्ग के संमुख अलाउद्दीन के आगमन से राजपूतों को कुछ भी बोझ वा कष्ट नहीं मालूम होता था। मुसलमान सरदार ने देखा कि उसे साधारण धैर्य और साहस के मनुष्यों से पाला नहीं पड़ा है, और उसने हम्मीर के पास संदेसा भेजकर यह कहलाया कि मैं तुम्हारी वीरता से बहुत प्रसन्न हूँ, और ऐसा पराक्रमी शत्रु चाहे जिस बात की प्रार्थना करे उसे मानने में मैं प्रसन्न हूँ। हम्मीर ने उत्तर दिया कि यदि अलाउद्दीन जो मैं चाहूँ उसे देने में प्रसन्न है तो मेरे लिये इससे बढ़कर संतोष की बात और कोई नहीं होगी कि वह दो दिन मेरे साथ युद्ध करे, और मुझे आशा है कि मेरी यह प्रार्थना स्वीकृत होगी। मुसलमान सरदार ने इस उत्तर की यह कहकर बड़ी प्रशंसा की कि वह सर्वथा उसके प्रतिद्वंद्वी के साहस के योग्य है और उसने दूसरे दिन युद्ध रोपने का वचन दिया। इसके अनंतर अत्यंत भीषण और कराल युद्ध हुआ। इन दो दिनों में मुसलमानों के कम से कम ८५००० आदमी मारे गए। दोनों योद्धाओं के बीच कुछ दिन विश्राम

करना निश्चित होने पर लड़ाई कुछ काल के लिये बंद हुई।

इस बीच एक दिन राजा ने दुर्ग के प्राचीर पर राधादेवी का नाच कराया; उनके चारों ओर बड़ा जमाव था। यह स्त्री क्रम से क्षण क्षण पर घूमती हुई, जिसे संगीत जाननेवाले ही अच्छी तरह समझ सकते थे, जान-बूझकर अपनी पीठ अलाउद्दीन की ओर फेर लेती थी जो किले से थोड़ी दूर नीचे अपने डेरे में बैठा यह देख रहा था। कोई आश्चर्य नहीं कि वह इस आचरण से रुष्ट हुआ, और क्रोध करके अपने पास के लोगों से उसने कहा कि क्या मेरे असंख्य साथियों में कोई ऐसा है जो इस स्त्री को इतनी दूर से एक तीर से मारकर गिरा सकता है। एक सरदार ने उत्तर दिया कि मैं केवल एक आदमी को जानता हूं जो यह काम कर सकता है, वह उड्डानसिंह है जिसे बादशाह ने कैद कर रखा है। कैदी तुरंत छोड़ दिया गया और अलाउद्दीन के पास लाया गया जिसने उसे उस सुंदर लक्ष्य पर अपना कौशल दिखाने की आज्ञा दी। उड्डानसिंह ने आज्ञानुसार वैसा ही किया, और एक क्षण में उस वीरांगना की सुंदर देह बाण से बिंधकर दुर्ग की दीवार पर से सिर के बल नीचे गिरी।

इस घटना से महिमासाह को अतुल क्रोध हुआ और उसने राजा से अलाउद्दीन के साथ भी वही व्यवहार करने की अनुमति माँगी जो उसने बेचारी राधादेवी के साथ किया था। राजा ने उत्तर दिया कि मुझे तुम्हारी धनुर्विद्या का असाधारण कौशल विदित है, किंतु मैं नहीं चाहता कि अलाउद्दीन इस रीति से मारा जाय क्योंकि उसकी मृत्यु से मेरे साथ शस्त्र ग्रहण करनेवाला कोई पराक्रमी शत्रु न रह जायगा। महिमासाह ने तब प्रत्यंचा चढ़े हुए बाण को उड्डानसिंह पर छोड़ा और उसे मार गिराया। महिमासाह के इस कौशल ने अलाउद्दीन को इतना सशंक कर दिया कि वह तुरंत अपने डेरे को झील के पूर्वीय पार्श्व से हटाकर पश्चिम की ओर ले गया जहाँ ऐसे आक्रमणों से अधिक रक्षा हो सकती थी। जब डेरा हटाया गया तब राजपूतों ने देखा कि शत्रु ने नीचे नीचे सुरंग तैयार कर ली है, और

खाई के एक भाग पर मिट्टी से ढका हुआ लकड़ी और घास का पुल बाँधने का यत्न किया है। राजपूतों ने इस पुल को तोपों से नष्ट कर दिया और सुरंग में खौलता हुआ तेल डालकर उन लोगों को मार डाला जो भीतर काम कर रहे थे। इस प्रकार अलाउद्दीन का गढ़ लेने का सब यत्न निष्फल हुआ। उसी समय वर्षा से भी उसे बहुत कष्ट होने लगा जो मूसलाधार होती थी। अतएव उसने हम्मीर के पास संदेसा भेजा कि कृपा करके रतिपाल को मेरे डेरे में भेज दीजिए क्योंकि मुझे उनसे इस अभिप्राय से बातचीत करने की इच्छा है कि जिसमें हमारे और आपके बीच का झगड़ा शांतिपूर्वक तै हो जाय।

राजा ने रतिपाल को जाकर अलाउद्दीन की बात सुनने की आज्ञा दी। रणमल रतिपाल के प्रभाव से कुढ़ता था और नहीं चाहता था कि वह इस काम के लिये चुना जाय।

अलाउद्दीन रतिपाल से बड़े ही आदर के साथ मिला। उसके दरबार के डेरे में प्रवेश करने पर मुसलमान सरदार अपने स्थान पर से उठा और उसे आलिंगन करके उसने अपनी गद्दी पर बैठाया और वह आप उसकी बगल में बैठ गया। उसने अमूल्य भेंट उसके सामने रखवाई तथा और भी पुरस्कार देने का वचन दिया। रतिपाल इस सुंदर व्यवहार से बहुत प्रसन्न हुआ। उस धूर्त मुसलमान ने यह देखकर और लोगों को वहाँ से हट जाने की आज्ञा दी। जब वे सब चले गए तब उसने रतिपाल से बातचीत आरंभ की। उसने कहा—"मैं अलाउद्दीन मुसलमानों का बादशाह हूँ, और मैंने अब तक सैकड़ों दुर्ग ढहाए और लिए हैं। किंतु शस्त्र के बल से रणथंभोर को लेना मेरे लिए असंभव है। इस दुर्ग को घेरने से मेरा अभिप्राय केवल उसके अधिकार की ख्याति पाना है। मैं आशा करता हूँ (जब कि आपने मुझसे मिलना स्वीकार किया है) कि मैं अपना मनोरथ सिद्ध करूँगा और अपनी इच्छा पूरी करने में मुझे आपसे कुछ सहायता पाने का भरोसा है। मैं अपने लिये और अधिक राज्य और किले नहीं चाहता। जब मैं इस गढ़ को लूँगा तब इसके सिवा और क्या

कर सकता हूँ कि उसे आप ऐसे मित्र को दे दूँ? मुझे तो उसके प्राप्त करने की ख्याति ही से प्रसन्नता होगी।" ऐसी ऐसी फुसलाहटों से रतिपाल का मन फिर गया और उसने इस बात का अलाउद्दीन को निश्चय भी करा दिया। इस पर, अलाउद्दीन अपने लक्ष्य को और भी दृढ़ करने के लिये रतिपाल को अपने हरम में ले गया और वहाँ उसने उसे अपनी सब से छोटी बहिन के साथ खान-पान करने के लिए एकांत में छोड़ दिया। यह हो चुकने पर रतिपाल मुसलमानों के डेरे से निकल कर दुर्ग को लौट आया।

रतिपाल इस प्रकार अलाउद्दीन के पक्ष में हो गया। अतएव जब वह राजा के पास आया तब उसने जो कुछ मुसलमानों के डेरे में देखा था और जो कुछ अलाउद्दीन ने उससे कहा था, उसका सच्चा वृत्तांत नहीं कहा। यह न कहकर कि अलाउद्दीन का बल राजपूतों के लगातार आक्रमण से बिलकुल टूट गया है, और वह गढ़ लेने का नाम मात्र करके लौटना चाहता है, उसने कहा कि वह न केवल राजा से दीनतापूर्वक अधीनता स्वीकार कराने ही पर उतारू है वरंच उसमें अपनी धमकियों को सच्चा कर दिखाने का सामर्थ्य है। रतिपाल ने कहा कि अलाउद्दीन इस बात को मानता है कि राजपूतों ने उसके कुछ सिपाहियों को मारा है किंतु इसकी उसे कुछ परवा नहीं, 'गोजर की एक टाँग टूटने से वह लंगड़ा नहीं कहा जा सकता।' उसने हम्मीर को संमति दी कि ऐसी दशा में आपको स्वयं इसी रात को रणमल से मिलना चाहिए और उसे आक्रमणकारियों को हटाने पर उद्यत करना चाहिए। देश-द्रोही रतिपाल ने कहा कि रणमल एक असाधारण योद्धा है किन्तु वह शत्रुओं को हटाने का पूरा पूरा उद्योग नहीं करता है क्योंकि वह राजा से किसी न किसी बात के लिये दुखी है। रतिपाल बोला कि राजा से मिलने पर सब बातें ठीक हो जायगी।

राजा से मिलने के उपरांत रतिपाल रणमल से मिलने गया और वहाँ जाकर मानों अपने पुराने मित्र को सर्वनाश से बचाने के निमित्त उसने कहा कि न जाने क्यों राजा का चित्त तुम्हारी ओर से

फिर गया है। इनसे युद्ध के पहले ही हल्ले में तुम शत्रु की ओर हो जाना। उसने कहा कि हम्मीर इसी रात को तुम्हें बंदी बनाना चाहता है। उसने उससे वह घड़ी भी बतलाई जब राजा उसके पास इस अभिप्रायसे आवेंगे। यह सब करके रतिपाल चुपचाप अपनी इस शठता का परिणाम देखने की प्रतीक्षा करने लगा।

जब रतिपाल हम्मीर से मिलने गया था तब उनके पास उनका भाई वीरम भी था। उसने अपने भाई से यह विश्वास प्रकट किया कि रतिपाल ने जो कुछ कहा है वह सत्य नहीं है। शत्रुओं ने उसे अपनी ओर मिला लिया है। उसने कहा कि बोलते समय रतिपाल के मुह से मद्य की गंध आती थी और मद्यप का विश्वास करना उचित नहीं। कुल का अभिमान, शील, विवेक, लज्जा, स्वामिभक्ति, सत्य और शौच ये ऐसे गुण हैं जो मद्यपों में नहीं पाए जा सकते। अपनी प्रजा में राजद्रोह का प्रचार रोकने के लिये वीरम ने अपने भाई को रतिपाल के वध की संमति दी। किंतु राजा ने इस प्रस्ताव को यह कहकर अस्वीकार किया कि मेरा दुर्ग इतना दृढ़ है कि वह शत्रु को किसी दशा में भी रोक सकता है; किंतु यदि कहीं संयोगवश रतिपाल के वध के अनंतर यह गढ़ शत्रुओं के हाथ में पड़ जायगा तो लोगों को यह कहने को हो जायगा कि एक निर्दोष मनुष्य के वध के दुष्कर्म के कारण उनका पतन हुआ।

इस बीच रतिपाल ने राजा के रनिवास में यह खबर फैलाई कि अलाउद्दीन केवल राजा की कन्या से विवाह करना चाहता है और यदि उसकी यह इच्छा पूरी हो जाय तो वह संधि करने के लिये प्रस्तुत है, क्योंकि वह और कुछ नहीं चाहता। इस पर रानियों ने राजकन्या से राजा के पास जाकर यह कहने को कहा कि मैं अलाउद्दीन से विवाह करने में सहमत हूं। वह कन्या वहाँ गई जहाँ उसके पिता बैठे थे और उसने उनसे अपने राज्य और शरीर की रक्षा के हेतु अपने को मुसलमान को दे डालने की प्रार्थना की। उस (कन्या) ने कहा 'हे पिता, मैं एक व्यर्थ काँच के टुकड़े के समान

हूँ और आपका राज्य और प्राण चिंतामणि वा पारस पत्थर के समान है; मैं विनती करती हूँ कि आप उनको रखने के लिये मुझको फेंक दीजिए।'

जब वह भोली भाली लड़की इस प्रकार हाथ जोड़कर बोली तब राजा का जी भर आया। उन्होंने उससे कहा, 'तुम अभी बालिका हो इससे जो कुछ तुम्हें सिखाया गया है उसके कहने में तुम्हारा कोई दोष नहीं। किंतु मैं नहीं कह सकता कि उनको क्या दंड मिलना चाहिए जिन्होंने तुम्हारे हृदय में ऐसे ख्याल भर दिए हैं। स्त्रियों का अंग भंग करना राजपूतों का काम नहीं, नहीं तो उनकी जीभ काट ली जाती जिन्होंने ऐसी कुत्सित बात मेरी कन्या के कान में कही।' हम्मीर ने फिर कहा 'पुत्री! तुम अभी इन बातों को समझने के लिये बहुत छोटी हो, इनसे तुम्हें बतलाना व्यर्थ है। किंतु तुम्हें म्लेच्छ मुसलमान को देकर सुख भोगना मेरे लिये ऐसा ही है जैसा अपना ही माँस खाकर जीवन काटना। ऐसे संबंध से मेरे कुल में कलंक लगेगा, मुक्ति की आशा नष्ट होगी, इस संसार में हमारे अंतिम दिन कड़ुए हो जायँगे। मैं ऐसे कलंकित जीवन की अपेक्षा दस हजार बार मरना अच्छा समझता हूँ।' अब वे चुप हुए और दृढ़ता तथा स्नेह-पूर्वक अपनी कन्या को चले जाने को उन्होंने कहा।

राजा रतिपाल की संमति के अनुसार संध्या के समय अपनी शंकाओं को मिटाने के लिए रणमल के डेरे पर जाने को तैयार हुए। साथ में उन्होंने बहुत थोड़े आदमी लिए। जब वे रणमल के डेरे के निकट पहुँचे तब उसको (रणमल को) रतिपाल की बात याद आई। वह यह समझकर कि यदि मैं यहाँ ठहरूँगा तो मेरा बंदी होना निश्चय है, अपने दल के सहित गढ़ से भाग निकला और अलाउद्दीन की ओर जा मिला। यह देखकर रतिपाल ने भी वैसा ही किया।

राजा इस प्रकार ठगे और घबड़ाए हुए कोट में लौट आए। उन्होंने भंडारी को बुलाकर भंडार की दशा पूछी कि कितने दिन तक सामान चल सकता है। भंडारी ने सच्ची बात न कहने में अपने प्रभाव की

हानि समझ कहा कि सामान बहुत दिन तक के लिये काफी है। किंतु ज्योंही यह कहकर वह फिरा त्योंही विदित हुआ कि राजभांडार में कुछ भी अन्न नहीं है। राजा ने यह समाचार पाकर वीरम को उसके मारने और उसकी समस्त संपत्ति पद्मसागर में फेंक देने की आज्ञा दी।

उस दिन की अनेक आपत्तियों को झेलकर राजा शिथिलता से अपनी शय्या पर जा पड़े। किंतु उनकी आँखों में उस भयावनी रात को नींद नहीं आई। जिन लोगों के साथ वे भाई से बढ़कर स्नेह का व्यवहार करते थे उनका उन्हें ऐसी दशा में अकेले छोड़कर एक एक करके चल खड़े होना उनको असह्य जान पड़ता था। जब सवेरा हुआ तब उन्होंने नित्य-क्रिया की और दरबार में बैठकर वे उस समय की दशा पर विचार करने लगे। उन्होंने सोचा कि जब हमारे राजपूतों ही ने हमें छोड़ दिया तब महिमासाह का क्या विश्वास, जो मुसलमान और विजातीय है। इसी दशा में उन्होंने महिमासाह को बुला भेजा और उससे कहा 'सच्चा राजपूत होकर मेरा यह धर्म्म है कि देश की रक्षा में मैं अपना प्राण त्याग दूँ, किंतु मेरे विचार में यह अनुचित है कि वे लोग जो मेरी जाति के नहीं, मेरे हेतु युद्ध में अपने प्राण खोवें। इससे मेरी इच्छा है कि तुम कोई रक्षा का ऐसा स्थान बतलाओ जहाँ तुम सपरिवार जा सकते हो जिससे मैं तुम्हें कुशलपूर्वक वहाँ पहुँचवा दूँ।"

राजा के इस शील से संकुचित होकर, महिमासाह बिना कुछ उत्तर दिए अपने घर लौट गया, और वहाँ तलवार लेकर उसने अपने जनाने के सब लोगों को काट डाला और हम्मीर के पास आकर कहा कि मेरी स्त्री और मेरे लड़के जाने को तैयार हैं किंतु मेरी स्त्री एक बेर अपने राजा का मुह देखना चाहती है जिसकी कृपा से उसने इतने दिनों तक सुख किया। राजा ने यह प्रार्थना अंगीकार की और अपने भाई वीरम के साथ वे महिमासाह के घर गए। किंतु वहाँ जाने पर यह हत्याकांड देख उनके आश्चर्य और शोक का ठिकाना न रहा। राजा महिमासाह को हृदय से लगाकर

बच्चे के समान रोने लगे। उन्होंने उससे चले जाने को कहने के कारण अपने को दोषी ठहराया और कहा कि ऐसी अलौकिक स्वामिभक्ति का बदला नहीं हो सकता। अतः धीरे धीरे वे कोट में लौट आए और प्रत्येक वस्तु को गई हुई समझ, उन्होंने अपने लोगों से कहा कि तुम लोग जो उचित समझो वह करो, मैं तो शत्रु के बीच लड़कर प्राण देने को उद्यत हूँ। इसकी तैयारी में, उनके परिवार की स्त्रियाँ रंगदेवी के साथ चिता पर जलकर भस्म हो गईं। जब राजा की कन्या चिता पर चढ़ने लगी तब राजा शोक के वशीभूत हुए। वे उसे हृदय से लगाकर छोड़ते ही न थे। किंतु उसने अपने को पिता की गोद से छुड़ाकर अग्नि में विसर्जन कर दिया। जब चौहानों की सती साध्वी ललनाओं की राख के ढेर के अतिरिक्त और कुछ न रह गया तब हम्मीर ने मृतक संस्कार किया और तिलांजलि देकर उनकी आत्माओं को शांत किया। इसके अनंतर वे अपनी बची हुई स्वामिभक्त सेना को लेकर गढ़ के बाहर निकले और शत्रुओं पर टूट पड़े। संमुख भीषण युद्ध उपस्थित हुआ। पहले वीरम युद्ध की कसमस के बीच लड़ते हुए गिरे, फिर महिमासाह के हृदय में गोली लगी। इसके पीछे जाज, गंगाधर, ताक और क्षेत्रसिंह परमार ने उनका साथ दिया। सबके अंत में महापराक्रमी हम्मीर सैकड़ों भालों से बिंधे हुए गिरे। प्राण का लेश रहते भी शत्रु के हाथ में पड़ना बुरा समझ उन्होंने एक ही वार में अपने हाथ से सिर को धड़ से जुदा कर दिया और इस प्रकार अपने जीवन को शेष किया। इस प्रकार चौहानों के अंतिम राजा हम्मीर का पतन हुआ। यह शोचनीय घटना उनके राज्य के अठारहवें वर्ष में श्रावण के महीने में हुई।

यहाँ पर यह कथा समाप्त होती है। दोनों के मिलान करने पर मुख्य मुख्य बातों में आकाश-पाताल का अंतर जान पड़ता है। किसमें कहाँ तक सत्यता है इसका निर्णय करना बड़ा कठिन है। दोनों कथाओं में हम्मीर के पिता का नाम जैत्रसिंह लिखा है अतएव इस संबंध में कोई संदेह की बात नहीं जान पड़ती। 'हम्मीर रासो'

में लिखा है कि हम्मीर का जन्म विक्रम संवत् ११४१ शाके १००८ में हुआ। साथ ही यह भी लिखा है कि अलाउद्दीन का जन्म भी इसी दिन हुआ। इस हिसाब से हम्मीर और अलाउद्दीन का जन्म १०८४ ई० में हुआ। पर अन्य ऐतिहासिक ग्रंथों से यह बात ठीक नहीं जान पड़ती। 'हम्मीर महाकाव्य' में हम्मीर के गद्दी पर बैठने का संवत १३३० (सन १२८३ ई०) दिया है। यह ठीक जान पड़ता है। फिर 'हम्मीर महाकाव्य' में लिखा है कि चौहानराज की मृत्यु उनके राज्य के अठारहवें वर्ष में अर्थात् संवत् १३४८ (सन् १३०१ ई०) में हुई। अमीर खुशरू की तारीख अलाई में यह तिथि तीसरी जीलकद: ७०० हिजरी (जुलाई १३०१ ई०) दी है। मुसलमानी इतिहासों से विदित है कि सन १२९६ में सुलतान अलाउद्दीन मुहम्मदशाह अपने चाचा जलालुद्दीन फिरोजशाह को मारकर गद्दी पर बैठा, और सन् १३१६ ई० तक राज्य करता रहा। इसके साथ ही 'हम्मीर रासो' में दिए हुए संवत ठीक नहीं हो सकते। कदाचित् यहां यह कह देना भी अनुचित न होगा कि 'हम्मीर रासो' में हम्मीर की जो जन्म-कुंडली दी है वह भी ठीक नहीं है।

दूसरी बात जो इस काव्य के संबंध में विचार करने की है वह यह है कि हम्मीर की अलाउद्दीन से लड़ाई क्यों हुई। 'हम्मीर रासो' तथा ऐसे ही अन्य हिंदी काव्यों में मीर महिमाशाह की रक्षा के लिये युद्ध का होना लिखा गया है और इसमें कोई संदेह नहीं कि इस अद्भुत कथा से हम्मीर का गौरव बहुत कुछ बढ़ जाता है और कथा में भी एक अद्भुत रस का संचार हो आता है। पर 'हम्मीर महाकाव्य' में इनका कहीं नाम भी नहीं है और न कहीं किसी पुराने इतिहास में इसका वर्णन मिलता है। पर महिमाशाह का हम्मीर के यहां रहना निश्चित है तथा उसके अपने बाल-बच्चों को मारकर लड़ाई में हम्मीर का साथ देने की बात भी ठीक है। यह अवस्था तभी हो सकती है जब महिमाशाह अपने को हम्मीर का किसी बड़े उपकार के लिये ऋणी मानता हो। अलाउद्दीन का साथ न देकर हम्मीर का

साथ देना एक मुसलमान सर्दार के लिये निस्संदेह बड़े आश्चर्य की बात है। हिंदी काव्यों में जिन घटनाओं का उल्लेख है उनका होना तो कोई असंभव बात है ही नहीं। भारतवर्ष में जितने बड़े युद्ध हुए हैं सब स्त्रियों के ही कारण हुए हैं। पृथ्वीराज के समय में तो मानों इसकी पराकाष्ठा हो गई थी। पर मुसलमानों के लिये यह निन्दा की बात थी। इसलिये मुसलमान इतिहासकारों का इस घटना को छोड़कर युद्ध का कुछ दूसरा ही कारण बताना कोई आश्चर्य की बात नहीं है। पर नयनचंद्र सूरि का कुछ न कहना अवश्य संदेह उत्पन्न करता है। अलाउद्दीन ने जिस नीचता से रतिपाल को मिला लिया इसका तो यह कवि पूरा पूरा वर्णन करता है। यहाँ कुछ श्लोक उद्धृत कर देना उचित जान पड़ता है—

> अंतरंतःपुरं नीत्वा शकेशस्तमभोजयत्।
> अपीप्यत्तद्भगिन्या च प्रतीत्यै मदिरामपि ॥ ८१ ॥
> प्रतिपद्य शकेशोक्तं ततः सर्वं स दुर्मतिः।
> विरोधाद्बोधिनीर्वाचो गत्वा राज्ञे न्यरूपयत् ॥ ८२ ॥
>
> [सर्ग १३]

इनसे यह स्पष्ट विदित होता है कि नयनचंद्र कुछ मुसलमानों का पक्षपाती नहीं था। कुछ लोग कह सकते हैं कि जैनी होने से उसका विरोधी होना असंभव नहीं है। मेरा अनुमान तो यह है कि उसने मुसलमानी इतिहासों के आधार पर अपना काव्य लिखा है क्योंकि उसमें कथित घटनाएँ और सन्-संवत सब मुसलमानी इतिहासों से मिलते हैं। जो कुछ हो, इसमें कोई संदेह नहीं कि ऐतिहासिक दृष्टि से नयनचंद्र सूरि का काव्य जोधराज के रासो से अधिक प्रामाणिक है।

तीसरी घटना, जिसपर विचार करना आवश्यक है, वह हम्मीर की मृत्यु है। दोनों काव्यों से यह सिद्ध होता है कि हम्मीर ने आत्महत्या की। 'हम्मीर रासो' में इसका कारण कुछ और ही लिखा है और 'हम्मीर महाकाव्य' में कुछ और है। जोधराज के अनुसार हम्मीर को

विजय प्राप्त हुई और विजय के उत्साह में उनने मुसलमानी झंडे निशानों को आगे करके अपने गढ़ की ओर पयान किया जिसपर रानियों और रनिवास की अन्य महिलाओं ने यह समझा कि हम्मीर की हार हुई और मुसलमानी सेना गढ़ को लेने के लिये आ रही है। इसपर अपनी सतीत्व की रक्षा के निमित्त उन्होंने अग्नि में अपने प्राण दे दिए। इसपर हम्मीर को ऐसी ग्लानि हुई कि उसने भी अपने प्राण देकर अपने संताप को शांत किया। नयनचंद्र के अनुसार रणमल और रतिपाल के विश्वासघात पर विजय की सब आशा जाती रही और हम्मीर ने पहले राजमहिलाओं को अग्निदेव के अर्पण कर रण में वीरोचित मृत्यु से मरना विचारा। अंत में जब उसका शरीर रणक्षेत्र में छिदकर गिर पड़ा तो उसे आशंका हुई कि कहीं मुसलमानों के हाथ से मेरे प्राण न जायँ। इसलिये वहीं उसने अपने मस्तक को अपने हाथ से काटकर इस आशंकित अपमान से अपनी रक्षा की। दोनों बातों में राजमहिलाओं का अग्नि में आत्मसमर्पण करना और हम्मीर का आत्महत्या करना मिलता है और इन घटनाओं के संघटित होने में भी कोई संदेह या आश्चर्य की बात नहीं है। जो कथा इस संबंध में दोनों काव्यों में दी है वह युक्तिसंगत जान पड़ती है। कौन कहाँ तक सत्य है, इसका निर्णय करना तो बड़ा कठिन है, विशेष करके ऐतिहासिक प्रमाणों के अभाव में तो इस संबंध में कुछ कहना व्यर्थ है। जोधराज का यह लिखना कि अलाउद्दीन ने समुद्र में कूदकर अपने प्राण दे दिए, निस्संदेह असत्य जान पड़ता है। इस युद्ध के १५ वर्ष पीछे तक वह जीता रहा, इसके अनेक प्रमाण मिलते हैं।

जो कुछ हो, ऐतिहासिक अंश में गड़बड़ रहने पर भी हम्मीर की कथा बड़ी अद्भुत है और भारतवर्ष के गौरव को बढ़ानेवाली है। कौन ऐसा स्वदेशाभिमानी होगा जो राजमहिलाओं के जौहर और हम्मीर की वीरता तथा उसके साहस का वृत्तांत पढ़कर अपने को धन्य न मानता हो और जिसका हृदय देशगौरव से न भर जाता हो। धन्य

है वह देश जहाँ ऐसे ऐसे वीर हो गए हैं। धन्य हैं वे स्त्रियाँ जो अपने सतीत्व की रक्षा के लिये बिना कुछ सोचे-विचारे इस क्षणभंगुर शरीर को नष्ट कर डालती थीं और धन्य हैं वे लोग जो उनके वृत्तांतों को पढ़कर आनंदित और प्रफुल्लित होते हों और जिन्हें अपने देश के गौरव की रक्षा का उत्साह होता हो।

मैं पहले लिख चुका हूँ कि दो हम्मीर हो गए हैं। एक के विषय में तो मैंने इतना कुछ मसाला इकट्ठा कर दिया है। मेवाड़ के हम्मीर के विषय में भी कुछ कह देना आवश्यक जानकर ठाकुर हनुवंत सिंह लिखित मेवाड़ के इतिहास से इनका वृत्तांत उद्धृत कर देता हूँ। वह इस प्रकार है—

"लखमसी जी के पीछे मुसलमानों से बैर लेनेवाला अब केवल उनका लड़का अजयसिंह था जो कि केलवाड़े में रहता था। यह केलवाड़ा अर्बली पर्वत के उच्च प्रदेश में है। वहाँ उसकी रक्षा करनेवाले भील लोग थे। अजयसिंह जी के बड़े भाई अरसी जी के कुंवर हम्मीरसिंह को अपने पीछे गद्दी पर बिठलाने का वचन लखमसी जी ने अजयसिंह से ले लिया था। इससे तथा अजयसिंह के पुत्र के हम्मीरसिंह के समान पराक्रमी न होने से उनके उत्तराधिकारी हम्मीरसिंह ही थे। इनकी माता के विषय में यह कथा प्रसिद्ध है कि एक दिन अरसी जी युवराजत्व अवस्था में ऊदवा गाँव के जंगल में आखेट को गए थे। वहाँ जब एक सूअर के पीछे इन्होंने घोड़ा दिया तो वह भागकर ज्वार के खेत में घुस गया। ज्योंही अरसी जी सूअर के पीछे खेत में जाने लगे त्योंही एक कन्या ने, जो उस खेत की चौकसी कर रही थी, इनको भीतर जाने से रोका और कहा कि ठहरो सूअर को बाहर निकाल देती हूँ। फिर उस लड़की ने ज्वार के पेड़ को उखाड़ सूअर को दो चार सपाटा लगाकर उसे उनकी ओर खदेड़ दिया। उस लड़की की निर्भयता को देख आखेटकों को बड़ा आश्चर्य्य हुआ। पीछे जब कि वे एक नाले पर विश्राम करने के लिये ठहरे हुए थे तो सनसनाता हुआ दूर से एक पत्थर का टुकड़ा आया और

घोड़े की टाँग में ऐसे जोर से लगा कि उसका पैर टूट गया। बहुत ही छोटे से पत्थर के टुकड़े से घोड़े का पैर टूटा हुआ देख खोजा गया तो उसकी मारनेवाली भी वही खेत की रखवालिन कन्या निकली। पक्षियों के उड़ाने को उसने गोफन में रख कर गिल्ला फेंका था परंतु दैवयोगसे वह घोड़े को आ लगा। जब उसने यह सुना कि घोड़े को चोट लग गई है तो अरसी जी के पास जाकर अपने बिना जाने अपराध की क्षमा बड़ी नम्रता से माँगी। संध्या को लौटते समय अरसी जी को फिर वही कन्या अपने घर को जाती हुई राह में मिली। यह लड़की माथेपर दूध का मटका रखे और दोनों हाथों में दो पड़रे (भैंस के बच्चे) लिए हुए जा रही थी, उस समय अरसी जी के साथियों में से एक ने हँसी में उसके दूध को गिरा देने का विचार किया और वह मनुष्य घोड़ा दौड़ाता हुआ उसके पास होकर निकला। इससे यह लड़की कुछ भी न घबड़ाई और अपने हाथ में का एक पड़रा घोड़े के पिछले पैरों में ऐसा मारा कि घोड़ा और सवार दोनों धरती पर गिर पड़े और हँसी के बदले उलटी अपनी हानि कर ली। अरसी जी ने घर जाकर निश्चय कराया तो वह कन्या चंदाना वंश (चहुवानों की एक शाखा है) के एक राजपूत की पुत्री निकली। अरसी जी ने उसके बाप को बुलवाकर उससे अपना विवाह करने के लिये वह लड़की माँगी, परंतु उस राजपूत ने निषेध कर दिया। घर पहुँचकर जब अपनी स्त्री से उसने सब वृत्तांत कहा तो वह पति के इस कार्य से बहुत अप्रसन्न हुई और लग्न स्वीकार करने के लिये अपने पति को फिर अरसी जी के पास उसने लौटाया। अंत में अरसी जी का उस कन्या के साथ विवाह हुआ, जिसके पेट से अति पराक्रमी हम्मीरसिंह ने जन्म लिया। सिंहनी के पेट में तो सिंह ही जन्म लेता है। हम्मीरसिंह जी बचपन में अपनी ननहाल में रहकर बड़े हुए थे।

"हम्मीरसिंह के काका अजयसिंह जब केलवाड़े में रहते थे तो उनकी मुसलमानों के सिवाय पहाड़ियों में रहनेवाले राजपूत सर्दारों

के साथ भी बड़ी लड़ाई रही। इन पहाड़ियों का मुखिया बालेछा जाति का मूजा नामी एक राजपूत था जिसके साथ लड़ाई करने में एक बार अजयसिंह बहुत घायल हुए। इस समय अजयसिंह के दो पुत्र सजनसी और अजीतसी भी थे जिनकी आयु अनुमानतः १५ वर्ष की थी परंतु वे कुछ भी वीरता लड़ाई में न दिखा सके। इससे उन्होंने अपने भतीजे हम्मीरसिंह को बुला लिया और उनको सब वृत्तांत कह सुनाया। हम्मीरसिंह अपने दोनों चचेरे भाइयों से बड़े न थे परंतु तो भी उन्होंने मूजा बालेछा का सिर काट लाना ऐसा विचार निश्चय करके वे निकले। थोड़े दिनों में उन्होंने मूजा का सिर काट लाकर अपने काका को भेंट किया। अजयसिंह इस बात से बहुत प्रसन्न हुए, और मूजा के ही रुधिर से तिलक करके अपने पीछे हम्मीरसिंह को राज्य का अधिकारी ठहराया। जब अजयसिंह मरे तो उनसे पहले ही अजमाल मर चुके थे। सजनसी गद्दी के लिये हम्मीरसिंह को अधिकारी नियत हुआ देख दक्षिण में चले गये, जिनके वंश में एक ऐसा वीर पुरुष जन्मा जिसने मुसलमानों से पूरा बदला ही न लिया किंतु अपने असामान्य पराक्रम और साहस से मुसलमानी राज्य का मूलोच्छेदन ही कर दिया। यह पुरुष मरहठों के राज्य की नींव जमानेवाला सितारे का राजा शिव जी था जो समस्त भारतवर्ष में विख्यात है। सजनसी से बारहवीं पीढ़ी में यह हिंदू धर्मरक्षक और अतुलित पराक्रमी वीर पुरुष शिव जी हुआ है। सजनसी जी से पीछे दुलीपजी, सीओजी, भोराजी, देवराज, उग्रसेन, माहुल जी, खेलुजी जनकोजी, सतोजी, शाहजी और शिव जी हुए। अजयसिंह के पीछे हम्मीरसिंह सं० १३०१ ई० में मेवाड़ की गद्दी पर बैठे। उस समय मेवाड़ की गिरती दशा होने से आस-पास के राजा लोगों ने मेवाड़ के राजाओं को अपना शिरोमणि मानना छोड़ दिया था। हम्मीरसिंह ने अपने पहाड़ी साथियों को इकट्ठा करके जिन जिन राजाओं ने इनको अधिष्ठाता मानना छोड़ दिया था उन सभों को परास्त करके अपने अधीन किया। इस प्रकार

थोड़े दिनों में ही हम्मीरसिंह ने अपना गौरव आस-पास के राजाओं पर जमा लिया। अब चित्तौर को किस विधि ले इस विचार में हम्मीरसिंह पड़े।

"हम्मीरसिंह ने चित्तौर के आस-पास का सारा देश लूटकर उजाड़ डाला, अकेला चित्तौर ही मुसलमानों के अधीन रह गया था। किसी प्रकार उसे लूं, यही हम्मीरसिंह का दृढ़ विचार था। एक दिन उन्होंने अपने सब मनुष्यों को बुलाकर कहा कि "भाइयो! जिसे जीने की इच्छा हो, जिसे संसार के इन क्षणिक सुखों के बदले स्वर्ग का सुख छोड़ देना हो, जिसे अपनी प्रतिष्ठा की अपेक्षा प्राण प्यारे हों, जिसे अपने उग्र वैरी मुसलमानों का डर हो, जिसे अपनी गई हुई भूमाता को तुर्कों के हाथ में से निकाल लेने की हौंस न हो और जिसको इस अर्बली पर्वत की झाड़ी जंगलों में सदा पड़े रहने की इच्छा हो वह भले ही सुख से इस अर्बली की विकट गुहा गुफाओं में रहे, यह मेरी आज्ञा है। जो मेरी भुजा में बल होगा तो तुम्हारे चले जाने पर भी अपने कुलदेवता की सहायता से अकेला भी चित्तौर को लूंगा। तुम लोग सुख से जाओ और जो ईश्वर-इच्छा से मैं चित्तौर को जल्दी ले सका तो तुमको पीछे बुला लूंगा, उस समय आ जाना।" हम्मीरसिंह के मनुष्यों में राजपूत भी थे परंतु अधिक तो आसपास के भील लोग थे। उन लोगों ने बालकपन से ही हम्मीरसिंह का पराक्रम देख रखा था और निरंतर उनके साथ रहने से वे भी राजपूतों के समान ही साहसी और पराक्रमी हो गए थे और हम्मीरसिंह के चाल-चलन तथा व्यवहार से ही वे लोग ऐसे प्रसन्न थे कि यदि वे कहते तो प्राण देने को वे लोग उद्यत हो जाते। हम्मीरसिंह के उपरोक्त वचनों का उत्तर उन लोगों ने इस प्रकार दिया—"हम मरेंगे अथवा शत्रुओं को मारेंगे परंतु अपने राजा को छोड़कर कभी पीछे न हटेंगे, हम अपने कुल को कलंकित न करेंगे, हम अपने शत्रुओं के हाथ में से अपनी भूमाता को छुड़ाने के लिये अपने प्राण देंगे और इस जगत् के क्षणस्थायी सुखों को छोड़ स्वर्ग

का सदैव सुख भोगेंगे।" इस प्रकार वे एक स्वर होकर बोले कि मानो एक साथ मेघ की गर्जना हुई। हम्मीरसिंह ने इन वीर राजपूतों के ऊपर पुष्पों की वृष्टि करके कहा "धन्य हो मेरे प्यारे! धन्य हो! धन्य हो क्षत्रिय-पुत्रो! धन्य हो! ऐसे ही उत्तर की मैं आशा रखता था और सोही अंत को मिला। तुम लोगों की शुभचिंतकता से मैं अपनी भूमाता को छुड़ा सकूँगा। तुम्हारी राजभक्ति और तुम्हारी एकता देख, तुम्हारा साहस और पराक्रम देख हमारे कुलदेवता हमारे सहायक होंगे और मुझे निश्चय है कि हमारा मनोरथ सिद्ध होगा। इसलिये प्यारे वीर पुरुषो, तैयार हो जाओ। अपने बाल-बच्चों को इस पहाड़ की सुरक्षित गुफा में छोड़ आओ और उनकी सब प्रकार रक्षा होती रहे इसके लिये पाँच सहस्र वीर भीलों को नियत कर चलो।" हम्मीरसिंह के इन वाक्यों को सुनकर सर्वत्र जय जयकार होने लगा। उक्त प्रकार के प्रबंध करके वे सब चित्तौर के लिये पहाड़ों से उतर पड़े।

"इस समय हम्मीरसिंह के पास पाँच हजार से कुछ अधिक मनुष्य थे तथापि, 'एक मराऊ सौ को मारे' इस कहावत के अनुसार वे पाँच लाख के समान थे। उन्होंने चित्तौर के चारों ओर का देश लूट लिया, ग्राम जला दिए, मुसलमानों को पकड़ लिया। चारों ओर अशांति रहने से व्यापारी व्यापार से और किसान खेती करने से रुक गए। मुसलमान लोग अपनी प्रजा का रक्षण न कर सके। इससे प्रजा का समूह हम्मीरसिंह के अधीन हो बसने लगा। इस समय हम्मीरसिंह की रहन-सहन अर्वली पर्वत की चोटियों पर केलवाड़े में थी। वहाँ जाने का मार्ग बड़ा बेड़ा था। शत्रुओं के अधिकार कर लेने योग्य कदापि न था। अर्वली पर्वत के भीतरी गुप्त स्थलों को वहाँ से भाग जाने का मार्ग पृथक् था। ये गुप्त स्थल पहाड़ों की घनी झाड़ियों में होने से बड़े विकट थे। वहाँ इतने फलादि खाने योग्य पदार्थ उत्पन्न होते थे कि वर्षों तक सहस्रों मनुष्यों का निर्वाह हो सकता था। केलवाड़े से पश्चिम ओर का मार्ग खुला था जहाँ

होकर गुजरात और मारवाड़ का माल व्यापारी लाते थे तथा मित्रता रखनेवाले भीलों से भोजन की बड़ी सहायता मिलती थी। बाल-बच्चों की रक्षा के लिये जो पाँच सहस्र भील नियत थे वे आवश्य-कतानुसार रसद पहुँचा जाते थे। अच्छी तरह सोच समझ कर और चतुराई से हम्मीरसिंह ने अपने लिये निर्भय स्थान ढूंढ़ा था, परन्तु हम्मीरसिंह की बुद्धि को भला उनका दुर्दांत शत्रु अलाउद्दीन कैसे सह सकता था। वह सैन्य लेकर स्वयं आया और उसने अर्वली का पूर्व भाग जीत लिया। परंतु इससे हम्मीर की कुछ भी हानि न हुई। बादशाह ने अर्वली का पूर्वी भाग जीत लिया तो वे दक्षिण भाग में धूम मचाने लगे। अंत में अलाउद्दीन थक गया और हम्मीरसिंह को अधीन करने का काम चित्तौर के सूबेदार मालदेव को सौंप आप दिल्ली को लौट गया।

"मालदेव अपने बल से तो हम्मीरसिंह को वश में कर न सका, छल से उनको वश में लाने तथा उनके अपमान करने का विचार कर अपनी पुत्री के विवाह कर देने के बहाने से उसने हम्मीरसिंह के पास नारियल भेजा। हम्मीरसिंह ने अपने संपूर्ण राजपूत लोगों तथा साथियों से इस विषय में संमति ली तो उन सबने इस संबंध के स्वीकार करने का निषेध किया, परन्तु हम्मीरसिंह ने कहा कि "भाइयो, मेरी समझ में तो यही आता है कि तुम सब भूल रहे हो। तुम लोग जो भय बतलाते हो उससे मैं अजान नहीं हूँ परंतु राज-पूत होकर किसी के डर से अपना निश्चय किया हुआ कार्य्य छोड़ देना यह बड़ी कायरता है। यह राजपूत का नहीं किन्तु दासीपुत्र का काम है। राजपूतों को तो सदा दुःख के समय के लिये कटिबद्ध रहना चाहिए। राजपूतों को तो एक बार घायल होकर घर भी छोड़ना पड़ता है, और एक बार बाजे-गाजे के साथ गद्दी पर भी बैठना पड़ता है। जो भेजा हुआ यह टीका न स्वीकार करूं तो मेरी माँ की कोख कलंकित होवे। मेरे शूर वीर भाइयो! मैं यह जानता हूँ कि तुम लोग अपने प्राणों की अपेक्षा मेरे प्राणों की अधिक चिंता

रखते हो परन्तु इसमें तुम्हारी भूल है। घर में बैठे बैठे सवा मन रुई के गद्दे पर सोते-सोते और बातें करते-करते सैकड़ों मनुष्य मर जाते हैं यह हम लोगों से छिपा नहीं है। क्या तुम यह समझते हो कि जो इस संसार का मारने वा जिलानेवाला है वह हम को जो डर-कर घर में छिप जावेंगे तो न मारेगा और जो उसे जीवित रखना होगा तो हमारा नाम मिटानेवाला कौन है? इसलिये घर में निकम्मे पड़े पड़े मर जाने से तो शत्रु को मारते मारते मरना ही श्रेष्ठ है, नहीं तो जीना भी किस काम का है। भला इस बहाने से जिन स्थानों में मेरे बाप दादे रहते थे, जिन किलों के ऊपर मेरे बाप दादों के झंडे फहराते थे, जिन जंगलों में मेरे बाप दादों के शरीर का रुधिर बह चुका है, वे स्थल, वे गढ़ और राजमहल तो देखने को मिलेंगे। मेरे बाप दादे जिन स्थानों में मरे हैं वहीं मै भी मरूँगा, उनके साथ मैं भी स्वर्गधाम पाऊंगा। कहीं हमारे कुलदेवताओं ने ही अथवा हमारी भूमाता ने ही इस बहाने से मुझे वहाँ बुलवाया हो। कदाचित् उनकी इच्छा यही हो कि मैं वहाँ जाऊँ, इसलिये वहाँ जाने से वे भी हमारी सहायता अवश्य करेंगे। भाइयो! मेरी इच्छा है कि नारियल को स्वीकार करना चाहिए।" उनके वचन सुनते ही सब लोगों में वीर-रस उमड़ आया और यह बात सबने स्वीकार कर ली और हम्मीरसिंह ने पाँच सौ सवार लेकर चित्तौर जानेका विचार कर लिया। हम्मीरसिंह अपने छटे छटाए पाँच सौ सवार लेकर चित्तौर के निकट पहुँचे, उस समय मालदेव के पाँच लड़के उनकी अगवानी को आए। द्वार पर तोरण बधा हुआ न देखा तथा नगर में कोई धूमधाम और विवाह की तैयारी न देखी, इससे उन्होंने मालदेव के पुत्रों से पूछा कि क्यों क्या बात है, विवाह की कुछ धूमधाम नहीं दीखती? वे कुछ उत्तर न दे सके। इससे हम्मीरसिंह क्रोध में भरे हुए चित्तौर में जाकर दर्बार में बैठ गए। हम्मीरसिंह का कोप और उनके मनुष्यों के लाल मुख देख मालदेव के देवता कूँच कर गए। उनके पकड़ लेने की तो सामर्थ्य कहाँ थी। पाँच सौ

वीर नंगी तलवारें लिए अडिग जमे हुए थे, वहाँ किसकी सामर्थ्य थी जो हम्मीरसिंह की ओर देख सके। हम्मीरसिंह अकेले भी मालदेव और उसके पाँच पुत्र के लिये काफी थे। मालदेव ने डरकर अपनी पुत्री के साथ हम्मीरसिंह का पाणिग्रहण कर दिया। उस लड़की ने हम्मीरसिंह को चित्तौर लेने की यह युक्ति बतलाई कि आपको जिस समय दहेज दिया जाय, उस समय आप उस वृद्ध महता को जो मेरे पिता का बड़ा चतुर सेवक है अपने लिये माँग लेना। निदान यही हुआ। इस भाँति विवाह करके हम्मीरसिंह अपने घर को लौटे। केलवाड़े में लोग बड़े अधीर हो रहे थे परंतु हम्मीरसिंह को कुशलपूर्वक लौट आया देख लोग आनंद में मग्न हो गए।

"इस रानी से हम्मीरसिंह के खेतसी नामक पुत्र जन्मा। जब खेतसी एक वर्ष का हुआ तो उसकी माता ने अपने बाप को लिखा कि मुझे अपने क्षेत्रपाल देवता के पगों लगना है, इसलिये मुझे वहाँ बुला लो। मालदेव उस समय मेर लोगों के साथ लड़ने को गया हुआ था, इससे उसके भाइयों ने अपनी बहिन को बुला लिया। इस प्रकार हम्मीरसिंह की स्त्री, उनका पुत्र और कुछ मनुष्य चित्तौर में प्रविष्ट हुए। इसी वृद्ध महता के यत्न से जो मालदेव के यहाँ सेना का अध्यक्ष रह चुका था, और अब हम्मीरसिंह के यहाँ रहता था यह परिणाम निकला कि चित्तौर की संपूर्ण राजपूत सेना हम्मीरसिंह के पक्ष में हो गई। हम्मीरसिंह को गद्दी पर बिठाने के समाचार भेजे गए। हम्मीरसिंह आगे से ही सावधान होकर आसपास फिरते रहते थे। यह समाचार पाते ही आ निकले, परंतु इतने ही में शत्रु की सेना भी लड़ने को आ गई। इस समय हम्मीरसिंह के पास थोड़े और शत्रु के पास बहुत से मनुष्य थे परंतु बड़े पराक्रम के साथ अपनी तलवार का स्वाद चखाते हुए हम्मीरसिंह सबको परास्त करके विजय प्राप्त कर चित्तौर में आ गद्दी पर बैठ गए।

"अलाउद्दीन उस समय मर गया था और मुहम्मद तुगलक उस समय बादशाह था। मालदेव यह देखकर कि चित्तौर छिन गया

और बिना बादशाही मदद के फिर मिलना कठिन है, दिल्ली को भाग गया।

"चित्तौर के गढ़ पर राणा जी का झंडा फहराता हुआ देख पहाड़ों में से, आसपास के ग्रामों में से तथा गुप्त स्थानों में से निकल निकलकर टिड्डी दल की भाँति लोग चित्तौर में घुसने लगे। चित्तौर में से मुसलमानों का राज्य उठ गया और राजपूतों का आ गया, यह सुनकर लोग आनंदमग्न हो गए और दूर दूर से वहाँ आने लगे। छोटे और बड़े सब ही लोग मुसलमानों से बदला लेने की उमंग के साथ आ एकत्र हुए। जो इस समय मुसलमानों की सेना चित्तौर लेने को आवे तो उसे कुचल डालो, ऐसा वचन सबके मुख से निकलने लगा। हम्मीरसिंह को सेना की कमी न रही। मुसलमानों से युद्ध करने की उमंग में चित्तौर में झुंड के झुंड सहस्रों मनुष्य फिरने लगे। सब कहने लगे कि जो मुसलमानी सेना ऐसे समय में लड़ने को आ जावे तो उसकी अच्छी दुर्गति हो और वे जो कह रहे थे सो ही हुआ। मुहम्मद अपने छिने हुए राज्य को लौटाने को आया। हम्मीरसिंह के पास बिना बुलाए सहस्रों मनुष्य मुसलमानों के प्राण लेने को आ उपस्थित हुए और उनका उत्साह देख राणाजी तत्काल चित्तौर से बाहर लड़ने के लिये निकले। सिंगोली स्थान के निकट बड़ा संग्राम हुआ। सारांश यह है कि राजपूतों ने इस उत्कटता से युद्ध किया कि मुसलमानों का एक भी मनुष्य दिल्ली को लौटकर न जाने दिया।

"इस लड़ाई में स्वयं मुहम्मद पकड़ा गया। मालदेव का पुत्र हरीसिंह हम्मीरसिंह के साथ द्वंद्व युद्ध करता हुआ मारा गया। मुहम्मद को तीन महीने तक हम्मीरसिंह ने बँधुआ बनाकर रखा। पीछे मुहम्मद ने अजमेर, रणथंभोर, नागौर आदि परगने, सौ हाथी और पचास लाख रुपया देकर छुटकारा पाया।

"हम्मीरसिंह का बड़ा साला वनवीरसिंह उनके पास नौकरी के लिये आया। राणा जी ने उसे सत्कारपूर्वक अपने पास रखा और

उसके निर्वाह के लिये नीमच, जीरण, रतनपुर और कीरार ये परगने जागीर में दिए। जागीर देते समय राणा जी ने उससे कहा कि 'यह जागीर भोगो और प्रामाणिक रीति से चाकरी देते रहो। तुम एक समय तुर्कों के पादसेवी थे परंतु अब तो अपनी ही जाति के, स्वधर्मवाले के तथा अपने सगे संबंधी के नौकर हो। जिस भूमि के लिये मेरे बाप दादों तथा सहस्रों शुभचिंतक पुरुषों ने अपना रुधिर बहाया था उस भूमि को फिर लौटा लेने का मेरे ऊपर ऋण था सो मैंने कुलदेवताओं की कृपा से लौटा लिया। तुम अब से तुर्क के नौकर न रहकर राजपूत के हुए सो ईमानदारी से काम करना।' बनवीर भी वैसा ही ईमानदार निकला। उसने मरते समय तक शुद्ध चित्त से सेवा की और चंबल नदी के ऊपर का भीनोर ग्राम जीतकर मेवाड़ में मिलाया।

"जब से चित्तौर को मुसलमानों ने ले लिया था तभी से मेवाड़ के राणाओं की प्रतिष्ठा घट गई थी। भरतखंड के समस्त देशी राज्यों में मेवाड़ के राणा शिरोमणि गिने जाते थे परंतु चित्तौर के निकल जाते ही इसमें बाधा पड़ गई थी। जो राजा कर देनेवाले थे उन्होंने कर तथा गद्दी पर बैठते समय भेंट और आवश्यकता के समय पर सेना द्वारा सहायता करना आदि सब बंद कर दिया था। उस समय संपूर्ण क्षत्रिय राज्य निर्बल थे। उनको किसी के आश्रय की आवश्यकता थी। जब तक चित्तौर में राणा रहे वे लोग उनके आश्रय में रहे परंतु चित्तौर निकल जाने से वे दिल्ली के बादशाहों के अधीन हो गये, परन्तु राणा हम्मीरसिंह जी ने फिर से इस प्रवाह को फेरा। उन्होंने चित्तौर को मुसलमानों से छीनकर उन फेरफारों को फिर ज्यों का त्यों कर दिया जिन्हें मुसलमानों ने अपने राज्य-समय में कर डाला था। देश के संपूर्ण क्षत्रिय राजा मुसलमानों की अपेक्षा चित्तौर के राजाओं के अधीन रहने से प्रसन्न हुए। ज्यों ही हम्मीरसिंह जी ने चित्तौर ले लिया और मुहम्मद को हराया कि संपूर्ण आर्य वंश के राजा एक के पीछे एक भेंट ले लेकर आए, कर

देने लगे और यथासमय सेना द्वारा युद्ध में सहायता करने लगे। इस भाँति मारवाड़, जयपुर, बूँदी, ग्वालियर, चंदेरी, राजौड़, राज्यसेन, सीकरी, कालपी और आबू आदि ठिकानों के राजा हम्मीरसिंह जी के आज्ञाकारी हुए। हम्मीरसिंह जी भरतखंड के समस्त राजपूत राज्यों में महाराजाधिराज बन गए। मुसलमानों के आने से पहले इस देश में मेवाड़ के राजाओं की शक्ति अधिक थी, मुसलमानों के आते ही वह दिन दिन घटने लगी। हम्मीरसिंह जी ने इस अवनति को केवल रोका ही नहीं किंतु मुसलमानों के आने से पहले मेवाड़ की जो उत्तम दशा थी फिर उसी पर उसे पहुँचा दिया। मुहम्मद के पीछे किसी भी बादशाह ने चित्तौर के लेने का साहस न किया, इसका एक मात्र हेतु हम्मीरसिंह जी के पराक्रम का भय था। इसी से हम्मीरसिंह के राज्यशासन के पिछले पचास वर्षों में मेवाड़ में अटल शांति रही और इस दीर्घकाल की शांति ने मेवाड़ देश को व्यापार, धन, विद्या, सभ्यता, तथा शूर पुरुषों से परिपूर्ण कर दिया। हम्मीरसिंह जी जैसे बलवान थे वैसे ही राज्य चलाने में, न्याय करने में, कला-कौशल को उन्नति देने में प्रवीण थे। उनके राज्य में यह कहावत पूर्णतया चरितार्थ हो गई थी कि "बाघ और बकरी एक घाट पानी पीते हैं"। शांति बढ़ने से संपूर्ण व्यापारी, किसान और कारीगर अपने अपने धंधों में लग गए, इससे देश में संपत्ति बढ़ी जिससे राज्य की आय में अधिकता हुई। उन्होंने उत्तम उत्तम स्थान बनाकर कारीगरी की उन्नति की और प्रजा का न्याय यथोचित करके तथा पुत्रवत् पालन करके सबसे आशीर्वाद प्राप्त किया। इस भाँति चौंसठ वर्ष राज्य भोगकर अति वृद्धावस्था में सन् १३६४ ई० में हम्मीरसिंह जी ने बैकुंठधाम का मार्ग लिया। परम बुद्धिमान और पराक्रमी महाराणा हम्मीरसिंह जी अपने पुत्र खेतसी जी के लिये शांति-संपन्न और विस्तीर्ण राज्य छोड़ गए। मेवाड़पति महाराणा हम्मीरसिंह जी अपनी अक्षय कीर्ति छोड़कर मरे। वहाँ के लोग उन्हें अब तक सराहते हैं।"

इन हम्मीर के विषय में विशेष कुछ लिखना अथवा इनके संबंध की घटनाओं पर विचार करना मैं आवश्यक नहीं समझता। एक तो इनका इस रासो काव्य से कोई संबंध नहीं है, दूसरे यह भूमिका यों ही इतनी बड़ी हो गई है कि अब इसे और बढ़ाना अनुचित जान पड़ता है। केवल कथाभाग मैंने इसलिये दे दिया है कि जिसमें पाठकों को इसके जानने का यहीं अवसर प्राप्त हो जाय और वे स्वयं इसके विषय में और जानने का उद्योग करें। जिन महाशयों को हम्मीर के विषय में कुछ लिखने का अवसर प्राप्त हो उन्हें उचित है कि वे दोनों हम्मीरों को अलग-अलग मानकर उनके संबंध की घटनाओं का उल्लेख करें।

बस, अब मुझे हिंदी के प्रेमियों से क्षमा माँगनी है कि एक तो इस भूमिका के लिखने में इतना विलंब हो गया, दूसरे यह भूमिका इतनी बड़ी हो गई। आशा है कि पहले अपराध का मार्जन दूसरे से हो जाय।

इस भूमिका को समाप्त करने के पहले मैं कुँवर कन्हैया जू और पंडित रामचंद्र शुक्ल को अनेक धन्यवाद देना चाहता हूँ जिन्होंने इसके कई अंशों के लिखने में मुझे बड़ी सहायता दी। साथ ही मैं कुँअर कृष्णसिंह वर्म्मा को भी धन्यवाद दिए बिना नहीं रह सकता। उन्हीं के द्वारा मुझे यह काव्य प्राप्त हुआ। ठाकुर विजयसिंह जी ने इस काव्य को प्राप्त करने और कुंवर कृष्णसिंह जी की सहायता करने में जो कष्ट उठाया उसके लिये मैं उनका भी उपकार मानता हूँ। आशा है कि ये सब महाशय इसी प्रकार मुझपर कृपा बनाए रहेंगे जिससे मैं अन्य अन्य ऐसे काव्यों के संपादन करने में समर्थ होऊँ।

काशी,
६ फरवरी १९०८

श्यामसुंदर दास

हम्मीररासो

*

दोहा

सिंधुर बदन अमंद दुति, बुद्धि सिद्धि वरदाय।
सुमिरत पद-पंकज तुरत, विघ्न अनेक विलाय ॥ १ ॥

छप्पय

दुरद* बदन बुध-सदन चंद्र लल्लाट बिराजै।
भुजा च्यारि आयुद्ध तेज फरसी† कर राजै[1] ॥
इक दंत छबि-धाँम अरुण सिंदुरमय सोहै।
मनो प्रात रबि उदित कहन उपमा कबि को है ॥
कर-कमल माल मोदक लिये उर उदार उपवीत वर।
सिव सिवा सुवन गणराज तुम देहु सदा वरदाँन बर[2] ॥ २ ॥
पुंडरीक सुत सुता तासु पद-कमल मनाऊँ।
बिसद‡ बरण[3] बर बसन बिसद भूषन हिय ध्याऊँ ॥
बिसद जंत्र सुर सुद्ध तंत्र तुंबरजुत सोहै।
बिसद ताल इक भुजा द्वितिय पुस्तक मन मोहै ॥
गति राजहंस हंसह चढ़ी रटी सुरन कीरति बिमल।
जय मात बिमल[4] बरदायिनी देहु सदा बरदाँन बल ॥ ३ ॥

---

१ बर साजै। २ बरदायक बरदान बर। ३ बसन। ४ सदा।

* दुरद = द्विरद। † फरसी = परशु। ‡ बिसद = विमल, सुंदर।

छंद पद्धरी

जय बिघ्नराज गणईसदेव ।
जय जगदंब जननी सएब[1] * ॥
गुरु - पाद - पद्म बंदन सुकीन ।
सब सज्जन पद मन[2] लीन कीन ॥ ४ ॥
प्रथिराज राज जग भौ प्रसिद्ध ।
भृगु बंस मध्य प्रगटे सुसिद्ध ॥
नृप चंद्रभाँन तिहिं बंस मध्य ।
किरवाँन† दाँन दोऊ प्रसिद्ध ॥ ५ ॥
पिच निंबराण जग ग्राँम नाँम ।
जुत बर्णाश्रम निज धर्म्म धाँम ॥
जय कीरति भुवमंडल उदार ।
अरु तेज प्रतापी बल अपार ॥ ६ ॥
सब कहैं राठ कौ पातस्याह ।
जस स्रवन सुनन की सदा चाह ॥
द्विजराज गौड़कुल जग - प्रसिद्ध ।
बिद्या - बिनीत हरि - धर्म्म - बृद्ध ॥ ७ ॥
सब दया दाँन उदार बीर ।
गुण - सागर नागर परम धीर ॥
कुल पंच बृत्त कै मूल जाँन ।
द्विज आदि गौड़[3] जानत जहाँन[4] ॥ ८ ॥
सौ चौदह सै चालीस च्यार ।
जन - मामन-सागर अति उदार ॥
अब सब कौ किंकर मोहिं जानि ।

---

१ सहेब । २ हुलसन । ३ सोइ आदि गोर । ४ जानि ।

* सएब (सहेब) = स्वामिनी । † किरवाँन (किरपान) = कृपाण ।

ऋषि अत्रि गोत्र मैं जन्म मानि ॥ ९ ॥
डिडवरिया गोत्र कहि बिरद ताहिं ।
सुभ राठ देस मैं उदित आहि ॥
तिहिं नाँम ग्राँम भल बीजवार ।
सब प्रजा सुखी जुत बरण च्यार ॥१०॥
जहँ बालकृष्ण सुत जोधराज ।
गुन जोतिष पंडित कवि समाज[1] ॥
नृप करी कृपा तिहिं पर अपार ।
धन धरा बाजि गृह बसन सार ॥११॥
बाहन अनेक सतकार भूरि ।
सब भाँति अजाची कियो मूरि ॥
नृप एक[2] समय दरबार माहिं ।
रासो हमीर कहि[3] सुन्यो नाहिं ॥१२॥
नृप प्रस्न[4] करिय यह उभै बात ।
सब कहो बंस उत्पति सुतात ॥
अरु कहो साहि हम्मीर बैर ।
किहिं भाँति[5] कंक* बढ्यो सु फेर ॥१३॥
तब कही प्रथम यह कल्प आदि ।
जल सेप सैन जब है अनादि ॥
नहिं धरणि चंद्र सूरज अकास ।
नहिं देव दनुज नर वर प्रकास ॥१४॥
सब बीज बृत्त[6] हरि संग मेलि ।
करि आप जोग निद्रा सकेलि ॥
करि सैन अंत निज सक्ति जानि ।

१ उदार । २ वास । ३ इक्क । ४ कह्यौ । ५ प्रष्ण । ६ वत्त । ७ जुक्त ।
*कंक = त्तत्रिय ।

ऊरण* सु तंत्र करि सूत्र मानि ॥१५॥
ह्व माया ईस्वर उभै नाँम।
करि महततत्व+ गुण‡ प्रगट जाँम§ ॥
यह धरि चरित्र[1] लीला अपार।
हरि नाभिकोम पंकज प्रचार[2] ॥१६॥
तिहिं प्रगट भए ब्रह्मा सु आदि।
वाराहकल्प यह कहि अनादि ॥
बहु काल ब्रह्म-चिंता सु कीन।
मैं कौन, करों का, कर्म कीन[3] ॥१७॥
अध उद्ध‖ भ्रम्यो बहु कमलि-नाल।
नहिं पार लह्यौ तदपि मुहाल[4] ॥
करि ध्यॉन स्वयंभू लख्यो आप।
तप कर्यो सृष्टि उपजै अभाप ॥१८॥
तप कर्यो स्वयंभू अति प्रचंड।
तब भयउ प्रजापति बिधि अखंड ॥
मानसी सृष्टि कीनो उदार।
सब बृच्छ बीज किन्ने अपार ॥१९॥
जल गगन तेज भुव बायु मानि।

---

१ धरी चित्त। २ बक्र, पंकज अगार प्रसार। ३ कर्मचीन, कर्महीन। ४ मुआय।

* ऊरण (ऊर्ण) = ऊन। + महततत्व (महत्तत्त्व) — सांख्य के मतानुसार प्रकृति का प्रथम विकार, बुद्धि। ‡ गुण — सांख्य के मतानुसार सत्त्व, रज तथा तम गुण। इस शास्त्र में इन गुणों की साम्यावस्था को प्रकृति कहा गया है। इसी प्रकृति से सृष्टि का विकास होता है। § जॉम = प्रहर, काल। ‖ उद्ध (ऊर्ध्व) = ऊपर।

सनकादि भए सुत च्यारि आनि[1] ॥
तप-पुंज भये नहिं सृष्टि भोग ।
तहँ मध्य भए तब रुद्र जोग ॥२०॥
मन तैं मरीचि भय तब सु आय ।
उपजे पुलस्त ऋपि स्रवण पाय ॥
इमि भए नाभि तैं पुलह और ।
क्रुत भए ब्रह्म कर तैं जु मोर ॥२१॥
भृगु भए स्वयंभू त्वचा थाँन ।
भय प्राण नात बासिष्ट माँन ॥
अंगुष्ट दक्ष उपजे सु ब्रह्म ।
नारद जु भए उतसंग* अब्रह्म ॥२२॥
भय छाया तैं करदम ऋषीस ।
अरु भए प्रष्टि† अद्धरम दीस ॥
अरु हृदय भए कामा उदार ।
करदन तैं भौ धरमावतार ॥२३॥
भय लोभ अधर[2] तैं अति बलिष्ट ।
बानी जु विमल मुख तैं प्रतिष्ट ॥
पद निरत मिंड[3]‡ तैं सिंधु जानि ।
यहिं विधि जु प्रजापति ब्रह्म मानि ॥२४॥
अब सुनहु वंस तिनके अपार ।
यह भइय सृष्टि चहु स्वाँ (चहुधा?) निवार ॥
सिव कै जु सती त्रिय बिन प्रसूत ।
दिय दक्ष श्राप तातैं न पूत ॥२५॥
इक कला नाम त्रिय धर मरीच ।

---

१ मानि । २ अधुर । ३ मींड, मिड्डु ।

*उतसंग (उत्संग) = गोद । †प्रष्टि (पृष्ठ) = पीठ । ‡मिड (मीढ़) = मूत्र ।

द्वै पुत्र भए ताके जु बीच ॥
इक भए प्रथम कस्यप सुजाँन ।
फिर उपजि धरम जहँ पूर्णमाँन ॥२६॥
भय कस्यप के सूरज सु आय ।
सो भयौ बंस सूरज सुगाय ॥
अरु सुनो अत्रि के पुत्र तीन ।
इक दत्त सोम जान्यौ प्रवीन ॥२७॥
अपि भए अपर दुरवास नाँम ।
सोइ[1] सुनो स्रवण तिहिँ बंस जाँम ॥
सुत भयो सोम के बुद्ध आय ।
पुरुरवा पुत्र ताके सुभाय ॥२८॥
पट पुत्र भए ताके प्रसिद्ध ।
भए सोम बंस तिनके जु सिद्ध ॥
भृगु बंस सुनो अतिसै उदार ।
चहुवाँन भए तिनतैं अपार ॥२९॥
इक ख्यात नाँम तिय अति अनूप ।
भय उभै पुत्र ताके जु भूप ॥
इक कह्यो प्रथम धाता जु नाँम ।
फिर भए बिधाता धर्म-धाँम ॥३०॥
इक[2] अपर प्रिया भृगु के कनिष्ठ ।
ए पुत्र भए ताके प्रतिष्ठ ॥
भय सुक्र जेष्ठ गुरु असुर जानि ।
तिहिँ अनुज चिमन[3] तप-पुंज मानि ॥३१॥
भृगु के जु भए जग अति बिख्यात ।
जिहिँ सुक्र नाम बल तेज तात ॥

१ सुई । २ एक । ३ च्यवन ।

तिनके रिचीक भए पुत्र आय।
जमदग्नि भए तिनके सुभाय ॥३२॥
ऋपि जामदग्नि सुत परसराँम।
हनि छत्रि सकल द्विज तेजधाम ॥३३॥

दोहरा छंद

ब्रह्मा कै सुत भृगु भए, भार्गव भृगु के गेह।
ऋपि रिचिक ताके भए, तेज-पुंज तप-देह ॥३४॥
जामदग्नि तिनके भए, परसराँम सुत जाहिं।
छत्रि मेटि विप्रन दइय, भुंमि किती वर ताहिं ॥३५॥
कमलासन कुल मैं प्रकट, परसराँम रणधीर।
सहस्रारजुन वैर तैं, हने जु छत्री वीर ॥३६॥
बार इकीस जुद्धि जिन, दिन्नौं[1] उरवीराज।
बच्यौ न छत्री जगत तब, आए तप के काज[2] ॥३७॥

छंद मुक्तादाम

हने छिति के सब बीर अपार।
भरे बहु कुंड जु स्रोणित धार॥
करे तिहिं पितृन तरपन नीर।
भए सब हरपित पित्र सधीर ॥३८॥
दए तब आसिप प्रेम समेत।
चले ऋपिराज तपःकृत हेत॥
रह्यौ नहिं छत्रिय जाति बिसेप।
भए निरमूल जु छत्रि असेप[3] ॥३९॥
बचे कछु दीन मलीन सुबेस।
कहूं तिनके अब रूप असेप॥

---

१ दीनौ। २ अप्प (आप) गए तप काज। ३ बिसेप।

धरे तृणदंत[1] कि दीन बयन्न[2] ।
किये नियरूप लग्गे जु नयन्न ॥४०॥
नपुंसक बालक बृद्ध सु दीन ।
धरे मुख नक्ख सुबैन महीन ॥
तजे तिन आयुध पिट्ठि दिखाय ।
गहे तिन आय सुभाय सुपाय ॥४१॥
मिले सब पित्र मु[3] दीन असीस ।
भए सुअ निरभय[4] पित्र जगीस ॥
तजो अब उग्ग[5] असेष सुभाव ।
करो सब[6] उप्पर छोभ सु चाव ॥४२॥
तजे तब क्रोध भए सु दयाल ।
चले पद वंदि पिता पद[7] हाल ॥
भई कछु काल छत्री बिन भुंमि ।
नहीं जग रच्छ रह्यो सोइ पुंमि[8] ॥४३॥
बढ़े[9] रजनीचर बृंद अनेक ।
मिटे जप तप्प जु वेद विवेक ॥
करे उतपात सुघात अपार ।
तजे कुल-धर्म्म सु आस्रम च्यार[10] ॥४४॥
मिटी मरजाद रहे सब भीत ।
तबै ऋषिराजन बड्ढत[11] चीत ॥
जुरे ऋषि-बृंद सु अरबुद आय ।
जहाँ ऋषि चाय बसैं सत भाय ॥४५॥
सुर नर नाग मिले सह आय ।

---

१ तनदत । २ नयन्न । ३ जु । ४ अनिरिय । ५ उग्र । ६ बन । ७ पदु, पट्ट । ८ नहीं जग रच्छिक यो जग पूमि । ९ बचे । १० चार । ११ बाढ़त, बाढ़न ।

रचे रजनीचर मेटि उपाय[1] ॥
मिले कमलासन और बसिष्ठ ।
कियों[2] सुचि कुंड अनल्ल[3] सुइष्ट ॥४६॥

दोहरा छंद

चाय आय अरबुद सुनग[4], मिलिय[5] सकल ऋषिराय ।
तब आराधिय संभु तिन, दिन्नों दरसन आय[6] ॥ ४७ ॥
जटा मुकट बिभूति अंग, सीस गंग अहि अंग[7] ।
भूत संग अनभंग मन, हरषित अधिक उमंग ॥ ४८ ॥
ऋषिसमूह अस्तुति करत[8], करव (करो)[9] अचल नग[10] आय ।
बाम करो तिहिं पर अचल, यज्ञ करें तब पाय ॥ ४९ ॥

छप्पय छंद

तब भव भये[11] प्रसन्न बाम अरबुद सिर किन्निव ।
कियव यज्ञ आरंभ बिप्र सम्मूह[12] सुलिन्निव ॥
द्वैपायन, वासिष्ठ, लोम, दालिभ,[13] सब आए ।
जैमिनि हरपन, धौम्य, भृगु, घटयोनि[14], सुभाए ॥
कौसिकह*, वत्स, मुद्गल मिलिउ, उद्दालीक, मातंग, भनि ।
स्वर मिलिय स्वयंभुव संभुजुत लगे करन मख मुदित मन ॥५०॥
पुलह, अत्रि, गौतम्म, गरग, संडिल्यि महामुनि ।
भरद्वाज, जाबालि, मारकंडेय, इष्ट गुनि ॥

---

१ मेटन पाय । २ किये । ३ अनिल्ल । ४ गन । ५ मिले । ६ धाय । ७ संग । ८ करिव, करव्व । ९ करत । १० मन । ११ भयउ । १२ सम्मुहँ सुइ लिन्निव । १३ डालिभ सु । १४ जोनि ।

* पुलह अत्रि गौतमहिं गरग सांडिल्यल्ल महामुनि । भरद्वाज जाबालि मारकंडेय उष्म (उद्म) गुनि । ये दो चरण एक प्रति में अधिक हैं सो दूसरी प्रति मे दूसरे छप्पय में आए हैं ।

जरतकार जाजुल्लिय परासुर परम पुनीतव ।
चिमन[1] चाइ सुर आइ, पिप्पलायनहिं, सुरंचि[2] सब ॥
बोटा अनेक बरनू किते, पंचसिखा पिक्खिय प्रगट ।
तप तेज पुंज झलहलत तहँ, दरसन तैं पातक सुघट ॥५१॥
सिद्धि ओषधिय सकल, सकल[3] तीरथ जल आनिव ।
जिते यज्ञ के योग्य तिते, द्रव[4] सब मन मानिव ॥
जजन[5] जानि[6] अध्याय होम ध्वनि होम सु उट्ठे ।
सकल बेद के मंत्र विप्र मुख सुर जुत जुट्ठे[7] ॥
ध्वनि सुनत असुर आए तुरत करन यज्ञ उच्छिष्ट थल ।
उत्पात अमित किन्ने[8] तबै तहाँ बृष्टि किन्निय सबल ॥५२॥
पवन चलत परचंड घोर घन बारि सु बु(उ) ट्ठे ।
रुहिर[10] माँस त्रण पत्र अग्गि[11] रज देखत उट्ठे ॥
गए तहाँ बासिष्ठ यज्ञ बहु विघ्न सुनायौ ।
करै[12] प्रथम बध असुर होय तब यज्ञ सुभायौ ॥
बासिष्ठ कुंड किन्नौ सुरुचि करन असुर निर्मूल तब ।
धरि ध्याँन होम बेदी विमल बेद मंत्र आहूति जब ॥५३॥

दोहरा छंद

ऋषि वसीष्ठ बेदिय बिमल, साम बेद स्वर साधि ।
प्रगट कियउ क्षत्रिय पहुमि, बेदमंत्र आराधि ॥५४॥
तीन पुरुष उपजे तहाँ, चालुक प्रथम पँवार ।
दूजै तीजै ऊपजे, क्षत्र[13] जाति परिहार[14] ॥५५॥
कियउ[15] जुद्ध अतुलित तिनहिं, नहिं खल जीते भूरि ।

१ च्यवन । २ सुरच्छिय । ३ सकल तीर्थनु जल आन्यौं, तित्थोदक आन्यौ । ४ द्रव्य तितने मन मानिव, दर्ब जितनै मन मान्यौं । ५ यजन । ६ जाप । ७ बुटठे । ८ कीने । ९ कीनी । १० रुधिर । ११ अग्नि । १२ करो । १३ चतुरजाति । १४ पारिहार । १५ कियौ ।

तब चतुरानन जज्ञ थल, कियौ तुरत वह दूरि ॥५६॥
आबू गिरि अग्नेव दिसि, चायस्थल सब आय।
आराधे तिहिं फरस धरि, आए सीघ्र सुभाय ॥५७॥
कमलासन ब्रह्मा भए, होता भृगु मुनि कीन।
आचारज बासिष्ठ भौ, ऋत्वज बत्स प्रबीन ॥५८॥
परसराँम जजमाँन करि, होम करन मुनि लाग।
महासक्ति आराधि करि, अनलकुंड पटि[1] जाग ॥५९॥

छंद पद्धरी

बिधि करी[2] परसधर, बोलि ठौर।
जजमाँन कियउ भृगुकुल सुमौर॥
बरदेव सक्ति आराधि ताँम।
चहु बेद बदन उच्चार जाँम ॥६०॥
निज बारि कमंडल अग्नि सींच।
रज मंत्र पानि होमे स बीच॥
चहुँ[3] बेद मंत्र-बल सक्ति पाय।
तब अग्नि रूप प्रगटे सुभाय ॥६१॥
उत्तंग अंग सुचि तेज-धाँम।
झलहलत कांति तन प्रभा काँम॥
भलहलत मुकुट भृकुटी करूर*।
पलहलत नेत्र आरक्त सूर ॥६२॥
हलहलत दनुज वह त्रास मानि।
भुज च्यारि दिग्घ[4] आयुध सजानि[5]॥
जम जज्ञ पुरुष प्रगटे अजोनि।

१ पढि। २ करे फरसधर। ३ चउ। ४ दीर्घ। ५ मान जान—अंत्यानुप्रास।

* करूर (सं० कुरुल)—मस्तक पर बिखरी बाल की लट।

कर खग्ग[1] धनुष कटि लसे तोनि ॥६३॥
कर जोरि ब्रह्म सों कह्यो धाय।
मैं करूं कहा लोकेस आय ॥
जब कह्यो कमलभू सुनहु तात।
भृगुनाथ कहैं मुइ करो बात ॥६४॥
भृगुनाथ कही खल हनू धाय।
सँग सक्ति दइय नृप के सहाय ॥
दसबाहु उग्र आयुध बिसाल।
आरूढ़ सिंह उर[2] कमल माल ॥६५॥
मुनिदेव मिले अभिसेष कीन।
नृप अनल नाँम कह तासु दीन ॥
नृप कियो जुद्ध तिनतैं अखंड।
हनि जंत्रकेत करि खंड खंड ॥६६॥
हनि धूम्रकेत जो सक्ति आय।
नृप हरष सहित परसे सुपाय ॥
बहु दैत्य नृपति मारे अपार।
उठि चली खेत तैं रुहिर[3] धार ॥६७॥
उबरे सु गए पाताललोक।
भय दनुजहीन सब मृत्युलोक[4] ॥६८॥

दोहरा छंद

आसा पूरण सबन की, करी सक्ति तिहिं बार।
याही तैं आसापुरा, धर्यो नाँम निरधार ॥६९॥
चहुवाँनन[5] के वंस मैं, परम इष्ट कुलदेवि।
सकल मनोरथ सिधि तहाँ, पूजत पावैं सेवि[6] ॥७०॥

१ खड्ग। २ गला। ३ रुधिर धार। ४ मर्त्यलोक। ५ चाहुव्वॉन।
६ देव, सेव—अंत्यानुप्रास।

परसराँम अवतार भो[1], हरन सकल भुव-भार।
जैत राव तिहिं बंस मैं, जन्म्यौ परम उदार॥ ७१॥

छप्पय छंद

जैत राव चहुवाँन सकल विद्याजुत सोहै।
दाँन कृपाँन विधाँन अखिल भूपति मन मोहै॥
अमित थाट रजपूत बंस छत्तीस अमानो।
सूर वीर उदार[2] विरद वंदी जु वखानो॥
दिन प्रत्ति तेज वड्ढिय[3] नृपति, सत्रु संक निसि दिन रहै।
विस्सलह[4] भूप अवतंस भुव, अरथिन मिलि दारिद दहै॥ ७२॥
इक समय आखेट, राव खेलन बन आए[5]।
सकल सुभट थट संग, वीर बाने जु बनाए॥
लखव[6] इक वाराह, वाजि पिच्छै नृप दिन्निव।
रहे[7] संग तैं दूरि, सथ्थ विन राव सु किन्निव॥
वन विषम बंक भूधर विरह, सुथल पदम भव तप करत।
मृग त्यागि भागि मिल्ले सुऋषि, वंदि चरण सेवा धरत॥ ७३॥

छंद लघुनाराच

करे प्रणाम रावयं, सुदिन्न पद्म पावयं।
उभे सुपाणि जोरि कै, विनै सु कीन कोरि कै॥ ७४॥
खुले सुभाग्य भोरयं, लह्यो दरस्स तोरयं।
अखंड जोग भूपयं, नमः सजीव मोखयं*॥ ७५॥
त्रिकाल ज्ञान धाँमयं, रटंत नाँम राँमयं।
समस्त योग धाँमयं, त्रिलोक पूर काँमयं॥ ७६॥

१ भया। २ उदार। ३ वड्डतो, वड्ढिग। ४ वीसलह। ५ आयउ, बनायउ। ६ लखिव। ७ रह्यउ।

* मोखयं—मोक्ष।

समीप स्वामि संकरं, गणेसयं सुधं करं।
धरौ सुसीस हथ्थयं, प्रभू[1] सदा समथ्थयं ॥ ७७ ॥

दोहरा छंद

प्रसन भए ऋषि पद्म तब, अस्तुति सुनत प्रमाँन[2]।
जैत राज यहि थल करो, राव राखि सिव ध्याँन ॥ ७८ ॥
हर प्रसन्न भय राव पहँ, मुनिवर पद्म प्रसाद।
मिले भील-कुल सकल तहँ, हरपित मिटे बिपाद ॥ ७९ ॥

छंद पद्धरी

ऋपिराज पद्म आज्ञा सुपाय।
नृप जैत मित्र मंत्रिय बुलाय ॥
बड़ वणिक गणक कोविद सुजाँन।
तिन पुच्छि मंत्र वास्तव प्रमाँन ॥८०॥
सुभ दिग मुहूरत नींव हेत।
रणथंभ नाँम औ गढ़ समेत ॥
सव ग्यारह से दस वरप और।
सुइ संवत विक्रम कहत मोर ॥८१॥
इपु अर्द्ध अंगा को प्रसिद्ध।
रवि अयन सौम्य जान्यौ प्रसिद्ध ॥
सव कला पाँच जानो सुइप्ट।
त्रिय पुरुप लग्न गढ़ कीन इष्ट ॥८२॥
गत इक्क अंस वृपभाँनु जानि।
राचि वेद सार्द्ध मिथुनेस मानि ॥
तृन अंस वृश्चिक के इलानंद।
ससि बीस[3] नंद अज अंस मंद ॥८३॥

---

१ प्रभु सदा समर्थयं। २ अमाँन। ३ अंश।

जप* रासि जानि नव अंस सुद्ध।
नभ तीन अंस सूरति समुद्ध † ॥
त्रिय धूमकेतु गुण अंस जानि।
भृगु सप्त गुरु¹ सत्रा सु मानि ॥ ८४ ॥
तन लग्न उभै जानौ सु जानि।
फल कह्यौ वरष मन आयु मानि ॥
पय भाव भौंन तिहिं भवनहीन।
कछु घटे वरष तिन मैं प्रवीन ॥ ८५ ॥
तिहिं समय अटल भूणी सथप्प।
गणनाथ पूजि सुभ मंत्र जप्प ॥
करि होम देव पुज्जे अपार।
गो भूमि रत्न हाटक सुढार ॥ ८६ ॥
दिय दाँन द्विजिन बहु विधि अनेक।
नृप जैत सकल पुज्जे विवेक ॥
तिय करत गाँन मंगल सरूप।
धुनि दुंदुभि वज्जत अति अनूप ॥ ८७ ॥
सब करहिं हरष नर नारि बृंद।
यहि भाँति नीम रचना सुछंद ॥ ८८ ॥

दोहरा छंद

ग्यारा सइ दस आगरो, संवत माधव मास।
सुक्ल तीज शनिवार के, चंद्र रत्न अनयास ॥८९॥
थूणागढ़ रणथंभ की, रोपी पद्म प्रताप।
सुमति गणेस गिरीस कौ, नगर बसायो आप² ॥९०॥

---

१ सप्तम गुरु। २ आप।

* जप (झप) = मीन (राशि) † समुद्ध = समृद्ध।

वार्ता (वचनिका)

राव जैत पद्म ऋषि की आज्ञा तैं गढ़ रणथंभ की नीम दिवाई। ताही समय सहर बसावन की मन मैं आई। (रणथंभ की नीम का लग्न) ग्यारा से दसोत्तरा को संवत् बैसाख की आपे तीज (अक्षय तृतिया) मैं सनिस्चर मैं घड़ी पाँच दिन चढ़े मिथुन लग्न मैं नीम दीनी। गणेस पूजकर सिवजी की और पद्म ऋषि की आज्ञा पाय अनेक उछाह करि धन दीनौं।

चौपाई

जैत राव थिर थूणी रुथ्थिय * । भूसुरवृंद बंदि पद उथ्थिय ॥
ध्वजा पताक कलस अरु तोरन । मंगलरूप सुरूप निचोरन ॥९१॥

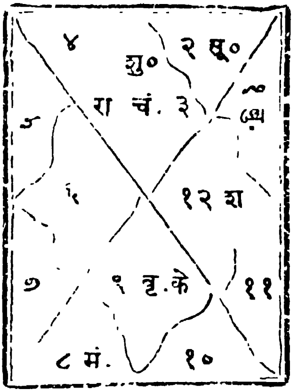

इष्ट लग्न मृ० ५ ॥ २ । ८ ॥ १ । ०० चं० ३ । ४ । मं० ७ । ३०० । २० । बृ० ८ । १७ । शु० २ । ७ श० ११ । ९ । रा० २ । ६ के० ८ । ३

छंद भुजंगप्रयात

पुरं मंदिरं चौहटं औ गवाष्यं † ।
भुजंगप्रयातं सुंदरं प्रबंधं सुभाष्यं ॥
पुरी इंद्र की सीस वै सुभ्र देखी ।
सबै मंदिरं सुंदरं उच्च लेखी ॥ ९२ ॥
पड़दा जरी बाफतं ‡ के बनाए ।

---

* रुथ्थिय = रूँधा, स्थिर किया । † गवाष्यं (गवाक्ष) = झरोखा ।
‡ बाफतं (बाफता) = एक प्रकार का रेशमी वस्त्र जिसपर कलाबत्तू और रेशमी बूटियाँ होती हैं ।

ध्वजा तोरणं सर्व के गेह छाए ॥
कपाटं सिरीखण्ड हाटक * सोहैं ।
सबै चित्र सा चित्र सुचित्त मोहै ॥ ९३ ॥
बितानं छए झल्लरी सोभमानी ।
सबै ठौर मोहै मनो कामरानी ॥
गृहं द्वार गोखा झरोखा सुहाए ।
सुगंधं चुवा इत्र महकंत भाए ॥ ९४ ॥
यसो नग्र रम्यं रचौ भूप केरो ।
किते चारु चौकंत भावंत हेरो ॥
बसैं बर्ण च्यारयौ जथासंखि बासं ।
चहूं आश्रमं औ तजं लोभ आसं ॥ ९५ ॥
सबै आय आयं रहै धर्म माहीं ।
छिमासील दानं ब्रतं नीत आहीं ॥ ९६ ॥

छप्पय छंद

महा बंक गढ़ दुड्ढ़[2] बुर्राज कंगुर बर सोहै ।
चहूं कोद[3] अग अगम चारु दरवाजे मोहैं ॥
घाटी चतुरासीति[4] बिषम अति[5] पन्छि न पावैं ।
बनचर बंकट बेस पाय लगि यों गुन[6] गावैं ॥
तुम नाथ हमारे[7] कृपाकरि[8] गढ़ लज्जा यह धारिये ।
परबेस मनहुँ रवि को प्रकट यह गढ़ हम प्रति पारिये ॥ ९७ ॥

दोहरा छंद

च्यारि द्रग चहुँ[10] ग्राम बसि, घाटी किती जु ओर ।
चहूं ओर पर्वत अगम, बिचरण थंभ सु जोर ॥ ९८ ॥

१ नित्य । २ सुदृढ़ गुर्जि । ३ कोध । ४ घाटी चोइसशाठि ।
५ अति, गति । ६ सुख । ७ हमार । ८ करी । ९ हम । १० चउ ।
* हाटक्क (हाटक) = सोना ।

अथ पद्मऋषि तनपात प्रसंग

छप्पय

रणतभँवर ऋषिपद्म उग्रतप तेज करराए[1] ।
इन्द्रासन डिगमगिय[2] देवपति[3] संका खाए ॥
तव कामादिक बोलि सक्र ऋषि पास पठाए ।
करो विघ्न तव जाय भंग पर काज नसाए[4] ॥
तव चल्यव मार निज सेन जुत[5] ऋतु वसंत प्रगटिय तुरत ।
वह त्रिविध पवन अद्भुत महा करहिं[6] गान रंभा सुरति ॥ ९९ ॥

बसंत ऋतु वर्णन

छंद पद्धरी

तिहिं समय काम प्रग्यो सुरिंद्र ।
जुहारि इंद्र उठि पाव वंदि ॥
सव परिकर वोले[7] चढ़ि सुमार ।
ऋतु छहैं संग धनु सुमन हार ॥ १०० ॥
रति परम प्रिया ऋतुराज जानि ।
नित रहत निरंतर रूप मानि ॥
वहु किन्नर गावत देवनारि ।
गंधर्व संग अति वल उदार ॥ १०१ ॥
संगीत भाव गावैं अनंत ।
सुर नर मुनंत वसि होत मंत ॥
वन, उपवन फूलहिं अति कठोर ।
रहे जोर मौंर रस अंवमोर ॥ १०२ ॥

---

१ करायो । २ डगमग्यो । ३ इन्द्र मन माहि (मांभि) डरायो ।
४ नटाए । ५ जुरि । ६ करति । ७ वुल्ले ।

कल कूजत कोकिल ऋतु बसंत।
सुनि मोहत जहँ तहँ सकल जंत॥
नर नारि भए कामंध अंध।
तजि लाज काज परि काम-फंद॥ १०३॥
पहुँचे सुमारि ऋषि निकट आय।
प्रेर्यो सु परम भट अग्ग जाय॥
ऋषि लखे सुभट सेना सुकाम।
ऋषि कह्यो कहा करिहै सुबाम॥ १०४॥
करि कठिन आप लाई समाधि।
तिहिं रहत काम क्रोधादि व्याधि॥

ग्रीष्म ऋतु वर्णन

ऋतु ग्रीषम को आज्ञा सु दिन्न।
तिहिं अति प्रताप जाज्वल्लि किन्न॥ १०५॥
रवि तपै विषम अति किरन धूप।
रवि नैन खुल्लि दिक्खिय अनूप॥
वट इक्क महा गह्वर सुजानि।
तिहिं निकट सरोवर सुरस मानि॥ १०६॥
इक आस्रम सुंदर अति अनूप।
तिय गान करत सुंदर सरूप॥
सौरभ अपार मिलि मंद पौन।
मृगमद कपूर मिलि करत गौन॥ १०७॥
स्रीखंड *मंद[१] केसर उसीर।
तिहिं परसि ताप मिट्टत सरीर॥

---

१ मेरु।

* मंद = कस्तूरी।

गंधर्व और किन्नर सुबाल ।
मिलि अंग रंग पहरें सुमाल ॥ १०८ ॥
चित चल्यौ नाहिं ऋषि बज्रमाँन ।
रहि ग्रीष्म[1] ऋतु हिय हारि माँन ॥ १०९ ॥

दोहरा छंद

लग्यौ न ग्रीपम कौ कछू, ऋषि प्रताप तपधार ।
तब पावस परनाँम करि, आयस काँम गहीर ॥ ११० ॥

वर्षा ऋतु वर्णन

छंद भुजंगप्रयात

उठे बद्दलं घोर आकास भारी ।
भई एक वारं अपारं अँध्यारी ॥
बहैं पौन चार्‌यों महा सीतकारी ।
चहूँ ओर कौधंत दामनि अँध्यारी ॥ १११ ॥
घनं घोर गज्जंत वर्षत पानी ।
कलापी पपीहा रटैं भूरि बानी ॥
तहाँ बाल झूलंत गावंत झीनी ।
रही जाय आस्रम भई काँमभीनी ॥ ११२ ॥
उड़ैं चीर सम्मीर लग्गंत अंगं ।
लसे गात देखंत जग्गे अनंगं ॥
करैं सोर झिल्ली घनं दद्दुरंगे ।
तहाँ बाल लीला करैं काँम संगे ॥ ११३ ॥
निकट्टैं उघट्टंत संगीत बाला ।
बरं अंग अंगं रची फूलमाला ॥

१ ग्रीष्म ।

कटाच्छं करैं[1] मंद हासं प्रसारैं[2] ।
तहाँ पद्म अंगं लगैं ना निहारैं ॥ ११४ ॥

दोहरा छंद

पावस हारि विचारि जिय, ऋपि न तज्यौ तप आप ।
तब सु मैन मन मैं कहिय, उपजे सरद सुताप ॥ ११५ ॥

शरद ऋतु वर्णन

छंद त्रोटक

तजिये तप पावस वित्ति सबं ।
ऋतु सारद बादर दीस अबं ॥
सरिता सर निम्मल नीर[3] वहैं ।
रस रंग सरोज सु फुल्लि रहैं ॥ ११६ ॥
बहु खंजन रंजन भृंग भ्रमैं ।
कलहंस कलानिधि बेदि* भ्रमैं ॥
बसुधा सब उज्ज्वल रूप कियं ।
सित बासन जानि बिछाय दियं ॥ ११७ ॥
बहु भाँति चमेलिय फूलि रही ।
लखि मार सुमार सुदेह दही ॥
बन रास बिलास सुवास भरे ।
तिय कोंम[4] कमाँन सुतानि धरे ॥ ११८ ॥
समरों[5] पर तें नर कोंम जगे ।
बिरही मुनि के उर घाव[6] खगे ॥
धर अंबर दीपग जोति जगी ।
नर नारि लखैं उर प्रीति पगी ॥ ११९ ॥

१ प्रहारैं । २ रति । ३ वारि । ४ बाँन । ५ अमरों । ६ घाव ।
* बेदि-(बेधि) = बेधकर ।

रिषि पास त्रिया सर न्हान रच्यौ ।
जल केलि अनेक[1] प्रकार मच्यौ ॥
बिन चीर अधीर लखै नर वै ।
कुच पीन नितंब सुकाँम तवै ॥ १२० ॥
कबरी छुटि नागनि सी दरसै ।
सुर संग भ्रमै रस सों सरसै ।
रिषिराज महा उर धीर अयं ।
रितु सारद हारि सुजात रयं ॥ १२१ ॥

दोहरा छंद

हारि मानि सारद गइय, उठि हेमंत सकोपि ।
महासीत प्रगटिय जगत, सबै लाज तजि लोपि ॥ १२२ ॥

हेमंत ऋतु वर्णन

छप्पय छंद

तब सुहेम करि कोप सीत अति जगत प्रकास्यौ ।
बिषम तुषार अपार मार उपचार सुभास्यौ[2] ॥
कंपत[3] चेतन रूप कहा जर जरत समूरे ।
तिय हिय लगि लगि वचन चरत मुख सैन सरूरे ॥
तिहिं समय जीव सब जगत के भए इक्क नर नारि सब ।
उरबसी आय रिषि निकट तक[4] हिये लाय मोहिं[5] सरन[6] अब ॥ १२३ ॥

दोहरा छंद

खुली न कठिन समाधि रिषि, चली हिमंत सुहारि ।
सिसिर परस मन बरनि करि, उठी सुकाँम जुहारि ॥ १२४ ॥

---

१ अपुब्ब । २ सुभाष्यौ । ३ नचै । ४ तैं, लौं । ५ मुहिं । ६ सरनि ।

शिशिर ऋतु वर्णन

छंद मोतीदाम

कियो तब सार हुकम्म सु हेरि ।
उठी सखियो[1] तब आयसु फेरि ॥
किये नव पल्लव जे तरु बृंद ।
प्रफुल्लित अंब कदंब स्वछंद ॥१२५॥
बहैं बहु भाँति त्रिविद्धि समीर ।
रहै नहिं धीरज होत अधीर ॥
लता तरु भेंटत[2] संकुल भूरि ।
भए त्रण गुल्म हरे जड़ मूरि ॥१२६॥
मिटै जग सीत न ताप न तोय ।
सबै सुखदायक जीवन सोय ॥
झुके फल फूल लता वर भार ।
भ्रमैं बहु भृंग जगावत मार ॥१२७॥
लगी लखि बायु सबै तिहिं बार ।
सुनै डफ लाज तजैं नर नार ॥
बजावत गावत नाचत[3] संग ।
अबीर गुलालरु केसरि रंग ॥१२८॥
भए मतवार सु खेलत[4] फाग ।
महा सुख संग संजोग्गनि[5] भाग ॥
बियोग्गनि जारत मारत मार ।
अनेक सुगंध अनेक बिहार ॥१२९॥

---

१ सखियौ । २ भिटत । ३ नचहिं । ४ खिल्लत । ५ सँजुग्गनि ।

बसंत ऋतु वर्णन

छंद लघुनाराच

असंत संत मोहियं, बसंत खोलि जोहियं ।
बजंत[1] बीन बाँसरी, मृदंग संग आँसुरी ॥१३०॥
लियं सुबाल बृंदयं, जगत्त काँम द्वंदयं ।
अनेक रूप सुंदरी, मनोज राव की छरी ॥१३१॥
स्वबेस केस पासयं, मनो कि मैन फाँसयं ।
गुही त्रिबिद्धि बेनियं, कि मोह किन्न[2] सैनयं ॥१३२॥
महा सुघट्ट पट्टियं, सृंगार भूमि फट्टियं ।
बिचे सुमंद[3] रेखयं, महा बिसुद्ध देखयं ॥१३३॥
बिसाल भाल सोभियं, छपा सु नाथ लोभियं[4] ।
सु मध्य सीस फूलयं, दिनेस पेज तूलयं[5] ॥१३४॥
भरी सु मुक्त मंगयं, मनो नछत्र संगयं ।
बिसाल लाल बिंदयं, मिले सु भोम चंदयं ॥१३५॥
जराव आड भाइयं[6], मनो मिलन्न आइयं ।
दिनेस भोम बुद्धयं, ससि गृह सु सुद्धयं ॥१३६॥
कपोल गोल आदसं, कि भौंह भौंर साहसं ।
प्रफुल्ल कंज लोचनं, मृगाखि[7] गर्व मोचनं ॥१३७॥
त्रिबिद्ध रंग गातयं, सु स्याँम स्वेत राजयं[8] ।
बनी कि कीर नासिका, सु गथ्थ नथ्थ भासिका ॥१३८॥
मनो सु काँम ओपयं[9], दयो सुचक्र[10] कोपयं ।
करन्न फूल राजयं, उभै कि भाँन साजयं ॥१३९॥

---

१ मृदंग ताल खंजरी । उपंग संग अमुरी । २ कीन । ३ सुमंग, माँग । ४ लोनियं । ५ तुल्लयं । ६ भालयं । ७ मृगासि । ८ गतयं । ९ बोपयं । १० चक्र ।

सुहंत स्यांम अल्लकं, भ्रमत्त भौंर बल्लकं।
अरुन्न रेख बेसयं, पियूष कोस देखयं ॥१४०॥
अनार दंत कुंदयं, लसंत बज्र दंतयं।
कुजंत बाणि कोकिला, विपंचकी सुरं मिला ॥१४१॥
कपोति पोति कंठयं, सुढार हार कंठयं।

छप्पय छंद

कुच कंचन घट प्रगट, नाभि सरवर वर सोहै।
त्रिबली पापह ललित, रोम राजी मन मोहै॥
पंचानन मधि देस, रहत सोभा हियहारी।
मनहुं कांम के चक्र, उलटि दुंदुभि दोउ डारी॥
दोउ जंघ रंभ कंचन दिपत, धरी कमल हाटक तनै।
गति हंस लखत मोहत जगत, सुर नर मुनि धीरज हनै॥१४२॥
जिती उर्वसी संग, सकल सम्मूह मिलिय वर।
चित्रि सु मैन सह मैन गण, ऋषि निकट सरूकर॥
गावत विविधि प्रकार, करत लीला मन भाइय।
हाव भाव परभाव, करत आस्रम मैं आइय॥
ऋषि निकट आय हौरिय रची, वर्षत रंग अनंग गति।
नन चलै चित्त ज्यों ज्यों अचल, करत क्रिया त्यों त्यों अमित॥१४३॥

दोहरा छंद

करि विचार त्रिय कृत क्रिया, कुसुम कुंद गहि लीन।
लीला ललित सु विथ्थरिय, चंचल वयसु नबीन॥१४४॥
ससि मुख वृंद स्वछंद मिलि, रति सम रूप अनूप।
ऋषि समीप क्रीड़ा करत, हरत धीर मुनि भूप॥१४५॥

१ छंदयं। २ तटयं। ३ निस्साँन सुधारी। ४ दुहुँ। ५ उलटि। ६ हारक। ७ चन। ८ भौं। ९ कहि। १० विस्तरी। ११ वोइ।

चौपाई छंद

बर्षत रंग अनंग सु बाला।
मनहुँ[1] अनेक कमल की माला॥
चंचल नैन चलैं चहुँ आसा।
रूप सिंधु मनु मीन सु पासा॥१४६॥
घूंघट ओट दुरत प्रगटत यों।
मनों ससि घटा दबत उघटत ज्यों॥
विलुलित बसन अंग दुति सोहै।
निरखत सुर नर मुनि मन मोहै॥१४७॥
झलक मलक[2] अतिसै चटकारी।
असी पियत[3] ससि नागनि कारी॥
छुटै गुलाल मुठी मृदु मुसकै।
चूवै अधर[4] बिंब रस चमकै॥१४८॥
करैं गान पसु पच्छी[5] मोहैं।
कहो जगत इन पटतर को है॥
लै लै गैंद परसपर मेलैं।
बाल बृंद मिलि मिलि सुख फेलैं॥१४९॥
अध ऊरध[6] चहुँ ओर सुमारैं।
लजति खिजति लगि[7] प्रेम प्रहारैं॥
मंद पवन लगि चीर परयो धर।
कुच अंकुर[8] उर मनहुँ उभै हर॥१५०॥
दमकति दिपति सलोनी दीपति।
कामलता विहरैं मनु गज गति॥

---

१ मनों। २ चिलक। ३ पीवत, पिवत। ४ अधर बिंब रसके चमकै। ५ पच्छिय, पत्नी। ६ अद्ध उद्ध। ७ मिलि। ८ अंबर। ९ छीन लंक अंग झलकत उर। नाभि गँभीर त्रिबलि अति सुंदर।

लगत गेंद कंपित उर भागी।
मंद मुसुकि ऋषि निकट सुपागी[1] ॥१५१॥
सुमन बृंद सौरभ उठि भारी।
भ्रमर पुनीत[2] गुंजार[3] उचारी[4] ॥
सरद उन्मद[5] संधाँन सु किन्नौ।
अति रिसि तानि स्रवन उर दिन्नौ ॥१५२॥
छुटि समाधि ऋषि नैन उघारे।
अति सकोपि सम्मर उर मारे ॥
चहुँ दिसि चितै[6] चकित ऋषि भयऊ।
लखि तिय बृंद अनंद सु भयऊ ॥१५३॥
लीला गेंद फागु मिसि[7] दौरी।
हो हो करत उठी वर जोरी[8] ॥
वन अकेलि तिय पुरुष न कोऊ।
लीला असित देखि द्रग दोऊ ॥१५४॥
रंग अपार डारि ऋषि ऊपर।
कल कल हंस बजत पद नूपर ॥
करैं[9] कटाच्छ अनेक सु बाला।
नैन सैन सर लगि चित चाला ॥१५५॥
अंग अंग गहि फाग[10] सु मग्गै।
परसि गात तब काम सु जग्गै[11] ॥

---

१ मुनि बादित्र गान कल लीला। काम कोपि सर धनुप सुसीला।
२ पुनिच। ३ गुंजार। ४ त्रिबिधि समीर सुहावन जानी। प्रफुल्लित नूत बैठि धनु पानी। ५ उन्माद। ६ चित। ७ मिलि। ८ कंदुक केलि और मिसि होरी। भोरी निपट लेत चित चोरी। डारि मोहिनिय मोहित बाला। माया बसि भो ऋपि तिहिँ काला। ९ करत। १० फाग सुमागे।
११ जागे।

मुख मीडत[1] अंजन गहि दिन्नौ।
जग्यौ काँम ऋषि काँम सु भिन्नौ ॥१५६॥
लाँख सुसक्यानि भई मति भोरी।
जीति सरस ऋषि काँमनि हेरी ॥१५७॥

अथ तुलसीदास पूर्व पक्ष[3]

दोहरा छंद

का नहिं पावक जरि सकै, का न समुद्र समाय।
का न करै[4] अबला प्रबल, किहिं जग काल न खाय ॥१५८॥
कवि लक्खन[5] अबला कहत, सबला जोध कहंत।
दुबिला[6] तन मैं प्रगट जिहिं, मोहत संत असंत[7] ॥१५९॥
जीति सिसिर बित्तिय[8] तबै, फिरि आयव ऋतुराज।
मिले उर्वसी पद्म ऋषि, सरे सक्र के काज ॥१६०॥
बिवस भए मुनि अच्छरा[10], भुल्लिय तप व्रत नेम।
निसि बासर क्रीड़ा करत[11], बढ्यौ जु तन मन प्रेम ॥१६१॥
सुरति बढ़ी चित मैं चढ़ी, मढ़ी मोह मति भूरि।
छिन छिन तिय ऋषि रजत[12] दोउ, भयउ[13] प्रेम परिपूरि ॥१६२॥
हृदय पुरंदर त्रास गनि, गइय[14] उर्वसी त्यागि।
बिन माया ऋषिराज तब, मन सुत्तो[15] सो जागि[16] ॥१६३॥
जाय जुहारे इंद्र कों, काँम उर्वसी संग।
कज्ज[17] सँवारयौ रावरौ, करयौ कठिन तप भंग ॥१६४॥

---

१ माडत। २ ससिर। ३ अथ तुलसीदास रामायने पूरब पच्छि। ४ को। ५ लाखन। ६ द्विबिला, द्रुबिला। ७ अनंत। ८ बीती। ९ भयौ। १० अच्छरिय। ११ करै। १२ राज। १३ भरे। १४ गई। १५ सोवत सो। १६ लागि। १७ काज।

(वचनिका) वार्त्तिक

तब इन्द्र कामादिक कौ सत्कार कियो । यहाँ ऋषि पद्म सूतो सो जाग्यो । मन मह बिचार करन लाग्यो । मैं तो माया मैं पाग्यो तप खोयो औ कलंक लाग्यो । और अब दोनौं गई तपस्या तो खंडित भई, अरु उर्वसी हू जात रही अब यातैं यह सरीर राखनो योग्य नहीं और मन की वासना भोत ठौर भई तातैं एक सरीर सू कछू वनि आवै नहीं । जब ऋषि होम करि सरीर त्यागो । जहां जहां वासना रही तहाँ तहाँई पाग्यो ॥

दोहरा छंद

तिय वियोग ऋषि तन तज्यो, ग्यारा से चालीस ।
माघ सुक्ल द्वादसि सु तिथि, वार वरनि रजनीस ॥१३४॥

छंद पद्धरी

तन पात किन्न ऋषि पद्म आप ।
उर्वसी विरह तन मन सु ताप ॥
ग्यारा सौ चालीस जानि ।
नृप विक्रम संवत ताहिं मानि ॥१३६॥
तप सिद्धि मास अरु बहुत पच्छि ।
ऋतु सिसिर द्वादसी तिथि सु रच्छि ॥
सिववार सोम जान्यो प्रसिद्ध ।
जित प्रीति योग विच करन अद्ध ॥१३७॥
रवि अयन अंस अठ वीस मानि ।
ससि जन्म त्रियोदस अंस जानि ॥
सुध मीन लग्न विग्रह सु त्यागि ।
करि हवन जवन सुख हृदय पागि ॥१३८॥

१ ही । २ तपसि । ३ विच । ४ एग ।

निज प्रथम अंग पंचांग होम।
जित रही बासना सरस धोम* ॥
ऋषि मुद्गल गोता सिखाहीन।
वहि तिलक हृदय आयौ नवीन ॥१६९॥
सिर भयो पृथ्वीपति जवन ईस।
जिहिं राज्य करयौ पूरण दिलीस ॥
वह रह्यो तिलक दिय पारि अनूप।
तहँ भो हमीर चहुवाँन भूप ॥१७०॥
दोउ बाद कर्म्म किन्नौ सु चाहि।
दोउ भए बीर महिमा सु साहि ॥
अरु लग्न उर्वसी चरन संग।
यह भए पंच ऋषि पद्म अंग ॥१७१॥

(वचनिका) वार्त्तिक

ऋषि पद्म उर्वसी को विरह तन त्याग्यौ। माह सुक्ल १२ द्वादसी सोमवार आर्द्रा नक्षत्र प्रीति योग ववकरण, सूर्य्य २८ अट्ठाईस, चंद्रमा मिथुन को तेरा १३ अंस. मीन लग्न मैं देह होमी। पाँच अंग होम्याँ जितनी बासना जितनो जायग्ग हुई। ताहीं सों पाँच स्वरूप एक सरीर का हुवा ॥

अथ राव हम्मीर को जन्म[३] वर्णन

दोहरा छंद

ससि वेद रुद्र संवत गिनो, अंग खाभ्र पित साक।
दक्षण अयन सु सरत ऋतु, उपजे गए न नाक ॥ १७२ ॥

१ करयउ। २ भयौ। ३ जन्म समयो, जन्म समय्यो।

* धोम = धूम्र।

गजनी गोरी साह सुत, भय अलावदी साय।
ताहीं दिन रणथंभ गढ़, जन्म हमीर सु आय ॥१७३॥
यह हमीर नृप जैत के, अमर करण आचार।
मीणा भारू बंधु दोउ भई नारि तिहिँ बार ॥१७४॥

छंद पद्धरी

ससि रुद्र वेद संवत सुजाँन।
पट सहस इक साको प्रमाँन॥
रवि जाँम अयन दच्छण सुगोल।
ऋतु सरद सुभ्र सुंदर अमोल ॥१७५॥
तिथि भाँन उर्ज्ज वल पच्छि जानि।
रवि घटी तीस अरु दोय मानि॥
हिर वुक्ष वेद घटि घटिय साठ।
व्याघात योग मुनि घटी आठ ॥१७६॥
वालव्व नाम सोइ कहत कर्ण।
यहि भाँति कह्यउ पंचांग वर्ण॥
रवि उदय इष्ट घटिका छतीस।
पल सून्य पंच जान्यूँ सदीस ॥१७७॥
पल षोड़स अष्टाबीस दंड।
दिनमाँन जाँन तिहिँ दिन सुमंड॥
इकतीस चवाली रात्रि मानि।
सव घटिय साठि दिन राति जानि ॥१७८॥
भौ जन्म लग्न मिथुनेस आय।
द्वादसह अंस गत भग बताय॥
तुलभाँन सप्तदस अंस मानि।
सरि रुद्र अंस झख रासि मानि ॥१७९॥

१ मानि। २ भयौ। ३ सर रूद। ४ जानि।

मंगल सुवाल धरि एक अंस।
बुध वारह बृश्चिक मैं प्रसंस॥
घटि जीव एक अंसह सुसुद्ध।
भृगु कन्या विद्या सुभग उद्ध॥१८०॥
ससि मीन तीस कटि एक अंस।
तिय रासि कह्यौ सुरभानुतंस॥
सोइ कहै अंस चौवीस पूर।
यह जन्म लग्न हम्मीर सूर॥१८१॥
सुनि राव जैत मन हर्ष किन्न।
भंडार अमित सब खोलि दिन्न॥
गुरु विप्र मंत्र मंत्री सु बोलि।
बड़ भीर भइय नृप आय पौलि॥१८२॥
किय स्राद्ध नांदि मुख वेद बृद्धि[1]।
सब जात कर्म किन्नौ सु सुद्धि॥
गो भुम्मि अन्न कंचन सु दिन्न।
द्विजराज सकल संतुष्ट किन्न॥१८३॥
लिय बोलि सकल जाचक सु वृंद।
हय हेम सुखासन दीन बंद॥
बहु भूषन वाहन विविध रंग।
जिहिं चाह लही सो दियौ संग॥१८४॥
दधि दूब हरद भरि कनक थाल।
बहु गॉन करत प्रविसंत बाल॥
दुंदुभि बजंत घर घरन बार।
ध्वज कनक पताका द्वार द्वार॥१८५॥
ओछाह राजमंदिर अनूप।
आनंदमग्न नर नारि भूप॥

---

१ बिद्धि।

सब दाँन देत घर घर उछाह ।
सब भय अजाचि जाचत सु ताह ॥१८३॥
बहु मंगल गावत अति अनूप ।
जय जयति कहत चहुवाँन भूप ॥१८४॥

बचनिका

राव जैत के गढ़ रणथंभवर तहाँ जैत घर हम्मीर जन्म्यो संवत ११४१ साको १००६ दक्षणायन सरद ऋतु कार्तिक सुक्ला १२ द्वादसी रविवार घटी ३२ उत्तरा भाद्रपद घटी ६ पल ५६ । कछु घर को धर्यो पायो । एक सेवक लोह पत्र पाथर सों घस्यो तहाँ लोह सोनो (सुवर्ण) भयो राव जैत कों आणि दयो व्याघात योग घटी १६ पं० वालव कर्ण घटी २८ इष्ट घटी २६ पल ५ दिनमाँन घटी २८ पल १६ रात्रिमाँन घटी ३१ पल ४४ तुला संक्रांति गतांस १७ भोगांऽस १३ चंद्रमा मीन को ११ अंस मंगल

कन्या को १ अंस बुध बृस्चिक को १२ अंस बृहस्पति कुंभ को १ अंस सुक्र कन्या को १४ अंस सनि मीन को २६ अंस राहु कन्या को २४ अंस राव हम्मीर असी घड़ी जन्म लियो । सब को मनोर्थ पूर्ण कियो । सर्व वंस मै हर्ष हुवो और अजमेर चित्तोड़ जु बोलि विप्र पोष्या जाचक संतोष्या मंगल गाए बधावा बजाया ॥

---

१ सरवस मैं (सर्वस्व मैं) दान दीन्हों जग जस लीन्हों । २ भए मन भाए ।

अथ हम्मीरराव को और अलावद्दीन पातसाह को बैर समय्यो बर्णन

दोहा

इक्क¹ समय पातसाह बन, मृगया कहि मन किन्न² ।
सबै खाँन उमराव चढ़ि, हय गय बृंद सु लिन्न³ ॥१८८॥
हरम सबै पतसाह को, जो सिकार के जोग ।
साज बाज बनि बनि सकल, अरु अंदर के लोग ॥१८९॥
सुंदरता सुकुमार निधि, वहै अपछरा अंग⁴ ।
ताके गुन गन तें⁵ बंध्यो, निमिष न छाँड़त⁶ संग ॥१९०॥

छंद भुजंगप्रयात

चलं साह आखेट⁶ बज्जे निसाँनं ।
सबै भूप सथ्थं सुपथ्थं⁷ सुजाँनं ॥
सजे डंबरं अंबरं साज बाजं ।
बनी पख्खरं बाजि साजं समाजं ॥१९१॥
किते बीर बाने अमाने अपारं ।
किते मीर धीरं सजे सार धारं ॥
नफीरी बजी भेरि बज्जे रबद्दं ।
वहै उर्बसी संग लिन्नी समद्दं ॥१९२॥
जके रूप सौं साह बंध्यो सुजाँनं ।
जथा चंद्र की कांति चक्कोर माँनं ॥
जथा पंकजं⁸ वै दुरेफै लुभाए ।
तथा साह बंध्यो सनेहं सुभाए ॥१९३॥

---

१ एक । २ कीन । ३ लीन । ४ अच्छरी अंग । ५ छंडहिं । ६ आलादि (अलाउद्दीन) । ७ समथ्थं सुखाँनं । ८ पंकज पै दुरेफै लुभाए ।

चलै हयदलं पयदलं सथ्थ रथ्थं[1] ।
किते ख्वाँन चीता मृगं संग जुथ्थं ॥
चलै साह गोरं सरोसं सुभाँनं ।
बजे नद्द नीसाँन नख्खोनं[2] चावं ॥१९४॥
उठी रेणु आकास छायौ सुहद्द ।
मनो पावसं मेघ गज्जे सबद्दं[3] ॥
चले तेज ताजी सुबाजी अपारं ।
सबै ख्वाँन सुलताँन संगं जुझारं ॥१९५॥
करैं वीर लीला सुकीली[4] बिधाँनं ।
धरैं बाँन कम्माँन संधाँन पाँनं ॥
लखे जीव जेते सु केते जिहाँनं ।
भ्रमै जंत्र तंत्रं सु पावै न जाँनं ॥१९६॥
चनैं[5] बेहरं गोत्र गंभीर नारी[6] ।
बहै नीर नद्दं सुभद्दं उन्हारी ॥
झरैं निज्झरं[7] नाद भारी असारं[8] ।
रहे फूलि संकूल बृक्षं अपारं ॥१९७॥
जहाँ अंब नीबू भए और केलं ।
सबै बृच्छ[9] फुल्ले फले भार मेलं ॥
भरी भार साखा[10] रही भुम्मि लग्गी ।
लता संकुलं पाद पंतैं उमग्गी ॥१९८॥
भ्रमै भृंग पुंजं सुगुंजं अपारं ।
मिली बेलि केती महीरुह[11] डारं ॥
मनों मार अप्पार ताँ ने चिताँनं ।
तिहूँ काल हेरें लखें नाहिं भाँनं ॥१९९॥

१ हथ्थं । २ बानैं सुचावं । ३ सुभंद्दं, सुसद्दं । ४ सकेली । ५ चनं । ६ भारी ।
७ नीझरं, निर्झरं । ८ पहारं । ९ बृत फूले । १० सारं । ११ महीरोह ।

रमे कोकिला कीर नच्चे मयूरं।
कहे वैन मानो बजै कॉमतूरं॥
बहे सीत मन्दं सुगंधं पवन्नं।
करें कॉम उद्दीपनं देखि वन्नं॥२००॥
सुरं[1] सुंदरं पंकजं वन्न फुल्ले।
करें गुंज भारी भ्रमैं भ्रमर भुल्ले॥
चहूँ ओर कुम्मोदनी चारु फुल्ली।
महा मोद सों[2] भार आनंद भुल्ली॥२०१॥
किते जीव संमूह देखंत भज्जैं।
मृगं ब्याघ्र चीते रिछं[3] जत्र गज्जैं॥
कहूँ कोलपुंजं कहूँ नीलगाहं।
कहूं चीतलं पांडुलं[4] ब्याघ्र नाहं॥२०२॥
कहूँ भिल्ल बंके[5] बसैं ताऽस्थाँनं[6]।
भखैं सिंह स्यारं ससास्योन पॉनं॥
करें सिंह गुंजार भारी भयाँनं।
सुनें प्रॉनहारी डरैं जीव हॉनं॥२०३॥
तहाँ साह की सेन किन्हों प्रवेसं।
तजे खाँन[7] पाँनं लए जो असेसं॥
करें वीर जेते सु केते उपावं।
हनैं जीव जे साहि को वाउ[8] पावं॥२०४॥
तहाँ साह के यूं भए जाय डेरा।
चहूँ ओर को खॉन केते अनेरा॥

---

१ सरं सुन्दरं पंकजं पुंज। २ फूली। ३ मृगं भार चीते ऋकं जत्र गज्जं। ४ पाडलं। ५ भील बाँके। ६ तास स्थानं। ७ जोन। ८ चान्त। ९ उपायं, जपायं (अंत्यानुप्रास)।

कहूँ[1] वीन वादित्र बाजंत ऐसी।
सुनें राग मोहं[2] मृगं माल वैसी ॥२०५॥
करें गान तानं पसू पच्छि मोहैं।
सुनें जीव आवंत[3] जानें न को हैं॥
सुनें वीन पव्वीन[4] सुर नाय रागैं।
रहे मोहि कै माल डारे न भागे ॥२०६॥
कहूँ राग ऐसो करें मेघ आवै।
तबै साह ताको बड़ी मौज द्यावै॥
असी भाँति आखेट कै रंग भीनो।
निसा द्योस जातंन काहू न चीनो ॥२०७॥
तिहीं ठौर विरच्यो सुमारो बसंतं।
रमै पातसाहं मनों रत्तिकंतं॥
तिहीं ठौर श्रीखम्म किन्नौ प्रवेसं।
महा संकुलं वृच्छ राजं सुदेसं ॥२०८॥
तहाँ तेज भाँनं न जाँनं न जाँनं।
तिहीं हेत साहं रहे तास थाँनं[5]॥
समौ एक ऐसो तहाँ रौद्र आयो।
महा पौन परचंड औ मेघ छायो ॥२०९॥
कहूँ ओर पतसाह खेलें सिकारं।
करें केलि जेती जलं बाल लारं*॥
भयो अंधकारं महाघोर ऐनं।
गई सुद्धि सुज्झै नहीं अप्प[6] नैनं ॥२१०॥

१ कहूँ। २ मोहे। ३ आनंद। ४ पर्वीन। ५ तिहीं तेज भाँनंन जाँनं न जानं। तिहीं हेत साहं रहे संक थानं। ६ आप।

* लार (लाल) = जो क्रीड़ा में अन्यों के पूर्व विजय प्राप्त करती है।

फुरयौ¹ साह को सत्थ भोजत्थ तत्थं।
भयो घोर अंधार सुझ्झै न हत्थं ॥
तजी बालक्रीड़ा जलं त्यागि भग्गी।
जहीं ओर दौरी भयो मुक्ख अग्गी ॥२११॥
किहूँ ओर दासी किहूँ ओर खोजा*।
कहूँ² ओर हुरमैं कहूँ ओर कोजा ॥
जसो होनहारं बन्यौ आय जैसो।
करो लाख कोऊ टरै नाहिं तैसो ॥२१२॥
लिखे लेख जो नाहिं मिट्टै मिटाई।
यही बात निस्चै सुनो सर्व्व सोई ॥
सरं त्यागि चल्ली सुहुरमैं सुभीतं।
कंपै गात ताको रह्यो व्यापि सीतं ॥२१३॥
तिहीं ठौर महिमा मिले सेख आई।
महा साहसी सूर उदारताई ॥
निजं धर्म साधे तजे नाहिं राचं।
कहे जो कछू तो निवाहंत वाचं ॥२१४॥
मिली बाल ताको कही दीन बाँनी।
समे³ बाम सेखं मनों⁴ आप जानी ॥
डरो ना कहो आप हो कौन कोई।
कहूँ जो उढ़ावो यहाँ बैठि मोही ॥२१५॥
तबै बाजि तें सेख भू पै जु आयो।
कछू वस्त्र हो अंग ताको उढ़ायो ॥२१६॥

दोहरा छंद

महिमा उतरे बाजि तें, दियो वस्त्र तिहिं हत्थ।
सीत भीत ता ना मिटी, कही हुर्म यह गत्थ ॥२१७॥

---

१ फुरयौ। २ कहूँ। ३ उमै। ४ मनं। * खोजा = सेवक।

पुच्छिय महिमा साहि तब, को तू आप बताय।
मैं घरनी पतिसाह की, रूपबिचित्रा नाय ॥२१८॥
जलक्रीड़ा हम करत सब, आयो पौन प्रचंड।
तब डेरन को भजि चलीं, तामैं मेघ सुमंड ॥२१९॥
भयो भयानक तिमिर बन, सबै सत्थ गय भूल।
मैं इकली बन महँ यहाँ, डरति फिरति दुख मूल ॥२२०॥

छप्पय छंद

तब महिमा कर जोरि हुरम कूं सीस नवायो।
चढ़यो अस्व की पिट्ठि देव पहुँचाव सुभायो॥
कहै हुरम सुन सेख देह कंपत है मोरी।
छिनक बैठि यहिं ठौर सरन मैं लिन्नी (लीनी) तोरी।
कहै सेख यह बात नहिं, तुम साहिब मैं दास तुव।
यह धरम नाहिं उलटी कहो, सरन सदा सेवक सुभुव ॥२२१॥
सेख समो पहिचानि स्वामि सेवग न विचारो।
काम रूप तुम पुरुष बीर बानैत उदारो॥
बहुत काल अभिलाष रही जिय मैं यह भारी।
कौन समो वह होय मिलै महिमा गुनधारी॥
सुइ करिय आज साहिब सहल, सकल मनोरथ सिद्ध हुव।
दै योग भोग संयोग यह, कौन दोस जग देहु तुव ॥२२२॥

चौपाई छंद

कहै सेख तुम बेगम सज्जिय।
ऐसी बात कहो मति कज्जिय॥
मैं अब लों तिय जग मैं जानत।
भगनी मात सुता सम मॉनत ॥२२३॥

१ हुरम कहि कहि सन बोयो।

ता महिं तुम हजरत की बाला ।
सब के एक वहै हकताला ॥
तातैं कहा धर्म मैं हारूं ।
यह तो कबहूं जिय न बिचारूं ॥२२४॥
सुनहु सेख बेगम तिय सबहीं ।
तुम हूं धर्म्म सुन्यौ है कबही ॥
तिय तजि लाज कहत रति जाचन ।
को नहिं धर्म जो पुरुष अराचन ॥२२५॥
तन मन धन जाचे तैं दिज्जिय ।
कहत कुरान पूरन सोइ किज्जिय[1] ॥
पुरुष धर्म यह सूर न होई ।
तिय जाचत को नाटत कोई ॥२२६॥

सोरठा छंद

तब जिय सोचि बिचारि, मनहीं मन महिमा समुझि ।
साँची है यह नारि, धर्म उभै जग महँ प्रगट ॥२२७॥
तब महिमा मुसकाय, कर गहि आलिंगन दियौ ।
इक तरु कौं तर जाय, दियौ तुरंगम बंधि तब ॥२२८॥
जीनपोस तर डारि, सस्त्र खुल्लि रक्खिय निकट ।
करी सुमार सुमार, उत्कंठा तिय मिलन की ॥२२९॥

छप्पय छंद

महा मोद मन बढ़्यौ परस्पर तन मन फुल्लिव ।
मिटिव बंक मन संक निसंक ह्वै आसन भुल्लिव ॥
मानो कोक चकोर चंद लब्भव रवि लंबे ।
घन दामिनि मनु मिलिय काँम रति पति सुख कंबे ॥

---

१ दीजे, कीजे (अंत्यानुप्रास)

दुहुँ ओर सोर म्वानिक मुभो, गाढ़ो आलिंगन दियव।
नख खंड नाहिं परसे सरहिं, सकल कोक केली कियव॥२३०॥
अंग अंग बिनअंग* रंग बढ्ढिव दुहुँ ओरन।
कढ्ढिव बिरह तन ताप परम्पर बर सत मोरन॥
हाव भाव रति अंग मुदित बर्षत अभिलापै।
करत कटाक्ष प्रकास बैन मधुरै मुख भापै॥
गहि अंग संग आसन दियव, कोक कला रस बिस्तरिव[1]।
आनंद[2] द्वंद उन्माद जुत, कौंम बिबस दोउन भयव॥२३१॥
तिहिं छिन इक मृगराज आनि तत्काल सुगज्जिव।
प्रज्वलित नयन प्रचंड चंवर सिर उप्पर सज्जिव॥
बिकट दंत मुख बिकट बाहु नख बिकट सुरज्जै।
तिहिं भय बन के जीव सबै गजराज सुभज्जै॥
आवत्त देखि तिहिं सिंह कौ, ह्वै सभीति तिय इम कहै।
बिधि कौन समै यह का भई, दैव बारि मैं बपु दहै॥२३२॥
तब तिय कंपि सभीति उच्चरि महिमा गर लग्गिय।
हे प्राणेश्वर कहा भई रसगत जु उमग्गिय॥
तजहु भजहु अब वेगि, वचहु अब प्राण उबारो।
मैं अब पलटे प्राण तजौं, तुम पर तन वारों॥
मुसकाय मीर तब यों कहै, न डरि न डरि अबला सुभुव।
तुट्टे जु आव रक्खों भुज न, कहा स्याल डर डरत तुव॥२३३॥

छंद अर्द्धनाराच

गहे कमाँन बाँनयं धरंत ताहि पाँनयं।
तज्यो न बाल आसनं, गह्यो सरं सरासनं॥२३४॥

---

* बिनअंग = अनंग।

१ बिथ्थरिव। २ प्रफुल्लित।

सु सिद्धि राग बागयं, हए स धीर पागयं।
कह्यौ हँकारि बाचयं, सम्हारि म्यान माचयं ॥२३५॥
करी सगुञ्ज पुंजयं, उठ्यौ सु क्रोध गुंजयं।
धरयौ सु चौर सीसयं, भुजा उठाय रीसयं ॥२३६॥
जथा सुक्रोध कालयं, उठ्यौ सु सिंह बालयं।
करं कमान लिन्नयं, कसी सतानि दिन्नयं ॥२३७॥
लग्यौ सुबाण मन्थयं, लग्यौ अकत्थ गत्थयं।
लग्यौ सुबाण पार भौ, गिरयौ सु सिंह म्यार भौ ॥२३८॥

दोहरा छंद

सिंह मारि इक बाण तैं, भू मैं दिन्नौ डारि।
फिरि कमान तिहिं हत्थ तैं, धरी जु भूपर धारि ॥२३९॥
यह साहस किन्नौ प्रगट, सम स्वभाव सम बुद्धि।
गर्व हर्ष हिय नाहिं कछू, प्रगटिय प्रेम प्रसिद्ध ॥२४०॥
मिलत मिलत मुसकात मृदु, कंपत हर्षत गात।
उचकनि लचकनि मसकिबो, सीकर हूकर बात ॥२४१॥

कवित्त छंद

कंचन लता सी थहरात अंग अंग मिलि,
सीकर समूह अंग अंगनि मैं दरसै।
चुंबन कपोल नैन खंडन अधर नख,
गहत पयोधर प्रचंड पानि परसै॥
आनंद उमंगन मैं मुसुकात बाल तुत-
रात बतरात सतरात रस बरसै।
लपटनि झपटनि मसकनि अनेक अंग,
रति रंग जंग तैं अनंग रंग सरसै ॥२४२॥

---

१ नान। २ हाथ।

छप्पय छंद

मिटी पवन परचंड, मिटिव मनमथ मद भाग्गिव ।
हटेउ तिमिर तिहिं समय, प्रगट परगा(का)स सुधाग्गिव ॥
सकल सत्थ जथ तत्थ, मिले अप्पन[1] थल आइव ।
साहि हुरम को सोध करिव तिहिं समय सुहाइव ॥
दिन्नी जु सिक्ख तब सेख कौं, अप्प अप्प सिवरन गयव[2] ।
पहुँची सु जाय पतिसाह पै, हुरम साह आदार दियव ॥२४३॥
तब सु साहि करि कुच,[3] सकल दिल्लिय दिसि आयव ।
चढ़िव सेन समूह, धूरि उड़ि अंबर छाइव ॥
घुमरि घुमरि निस्साँन,[4] घोर दुंदुभि घन बज्जिय ।
सकल खाँन उमराव, हरप संजुत मग गज्जिय ॥
कीन्हौं[5] प्रवेस निज निज घरन, साह महल दाखिल भयव ।
सुख खाँन पाँन सौगंधजुत, अप्प अप्प[6] रस बस भयव[7] ॥२४४॥
इक्क[8] समय पतिसाह, हुरम सँग सेज विराजे ।
दंपति अति रस लीन, काक[9] की कला सुसाजे ॥
रमत करत परकार, इक्क[10] आसन रस[11] भीने[12] ।
सरस परस्पर मुदित, उदित कंद्रप तन चीने ॥
तिहिं समय दैव संजोग तै, इक आखू* आवत भयव ।
देखंत ताहिं पतिसाहि को, मदन द्वंद उतरि गयव ॥२४५॥

दोहरा छंद

मूपक हजरति देखि कै, आसन तजि ततकाल ।
लै कमाँन संधानि कै, हन्यौ तीर लखि बाल ॥२४६॥

---

१ आपन । २ दीनी जु सीख तब सेख कौं आय आय डेरन गयव । ३ कूँच । ४ नीसाँन । ५ किन्नौ । ६ आप आप । ७ बसि छयव । ८ एक । ९ केलि । १० एक । ११ रति । १२ भिन्ने, चिन्ने, भिन्नय, चिन्नय, अंत्यानुप्रास ।

* आखू (आखु) = मूसा ।

चौपाई छंद

हजरति हरषि तीर तिहिं[1] दिन्नो।
चूहों[2] प्राण-हीन तब किन्नो॥
तबहीं साहि हरषि मुसकाए।
तिय कों ऐसे बचन सुनाए॥२४७॥
कायर जाति तिया[3] हम जानी।
तातैं यह हम प्रथमहिं ठानी॥
यह करनी अद्भुत तुम देखी।
निज कर करी सु तुम अवरेखी॥२४८॥
हँसी हुरम सुनि हजरति बानी।
पुरुपन की तो अकथ[4] कहानी॥
मारैं सिंह तो न मुख भाखैं।
जाचे नाहिं प्राण वै राखैं॥२४९॥
मैं जग मैं ऐसा सुनि पाऊं।
कहै साहि मैं बहुत बधाऊं॥
[5]बकसो गुनह तो अबै बताऊं।
तुरत साहि के पाइ लगाऊँ॥२५०॥

सोरठा छंद

ऐसा मोहिं बताय, सिंह मारि सिफत न करै।
बकसो औगुन आय, जो उन तात ज मारियो॥२५१॥
हुरम तबै कर जोरि, बार बार सिर नाय कै।
सुनहु गुनह[5] अब मोर, हजरति चीन्यो आपनो॥२५२॥

---

१ तहँ। २ चूहो प्राणहीन तिहि चीनो। ३ तीय। ४ अकह।
५ गुनाह जुमोर।

छप्पय छंद

मृगया भई जिहिं समय, सकल भुल्लिय[1] बन माहीं।
महा घोर तम भयो, तहाँ बरनी नहिं जाहीं[2] ॥
तद्दिन सेख संयोग, आनि हमसैं तब मिल्लिव।
नहिंन सेख तकसीर, देखि मन मोरहिं चल्लिव ॥
संयोग भोग बिछुरन मिलन, लिख्यौ विधाता ज दिन जहं।
नहिं टरै लाख कोऊ करो सु तो होय वहं[3] न दिन तहं ॥२५३॥

दोहरा छंद

मैं सेखहिं जाँनत नहीं, सेख न जाँनत मोहिं।
होनहार संजोग जो,[4] मिटै न उतनी होहिं ॥ २५४ ॥
सुरति करत सिंह जु उठ्यौ, लख्यौ सेख सोति भाय।
लै कमाँन मार्यो तुरत, तज्यो न आसन आय ॥ २५५ ॥
सुनूं स्वभाव ज सेख के, लच्छिन कहं जु आप।
मैं सभीति भइ सिंह तैं, कहं, मोहिं बिन पाप ॥ २५६ ॥

त्रोटक छंद

सुनिये पन सेख करे निज ये।
घर बैठत वाँ जल सों रजए ॥
नहिं भोजन सोहि गरम्म करै।
उकरू नहिं बैठत भुंमि भरै ॥ २५७ ॥
सरणागत आवत नाहिं तजै।
पर बाँम लखे मन माहिं लजै ॥
जहँ जाचत प्राण न राखत है।
नहिं झूठ अकारन[5] भाखत है ॥ २५८ ॥

---

१ भूले। २ तहाँ कछु बनि न जाही। ३ वहाँ। ४ तैं।
५ अकारथ।

रण मैं नहि पिट्ठि दई कबहूँ ।
लखि आरनिवंतन मों अबहूँ ॥
नहत भट आरनि बार तिहीं ।
बिन आसन बैठत है कबहीं ॥ २५९ ॥
मुख मैं उचरैं न टरैं कबहीं ।
सब तैं मधुरे मुख बैन सही ॥
दृग लाज भरे रिझवार घनें ।
रहनी करनी कविराज भनें ॥ २६० ॥
महिमा महिमा नहिं जात कही ।
जस चाहक गाहक गाहक ही ॥
बरवीर महारणधीर अरैं ।
खग खेत गहे अरि खंड करैं ॥ २६१ ॥
सुनि साहि मनै अचिरज्ज भयौ ।
ततकाल जु सेख बुलाय लयौ ॥
छिरकाय धरा जल सों जु भरे ।
बहु भोजन आनि गरम्म धरे ॥ २६२ ॥
तर गेरि पटंबर अंबरयं ।
करि पालथि छोरिय कंमरयं ॥
बहु भांति सिराहि सुभाय मनं ।
करिये तब भोजन आय[1] अनं ॥ २६३ ॥
मिलिए सब जो कछु बाल कहे ।
महिमा तिय जानि सनेह लहे ॥
प्रजुरे पतिसाहि सु कोप कियं ।
मनु[3] ज्वाल बिसाल सुवृत्त दियं ॥ २६४ ॥

१ आप । २ लए । ३ जनु ।

द्रग लाल बिसाल सुबंक भुवं।
रद दाबत[1] ओठ सु ओठ दुवं॥
करि क्रोध तबै पतिसाहि कहै।
उर मैं अति क्रोध[2] प्रचंड दहै॥२६५॥
सुनि जाँमहिं[3] जो तकसीर परै।
तिहिं को न कहो अब दंड धरै॥
कर जोरि उठ्यो महिमा तबहीं।
हम तो तकसीर भरे सबहीं॥२६६॥
तुब गर्दन बेग कबूल करो।
है तकसीर जु सेख भरो॥
तब सेख कहै कर जोरि तबै।
करिये सन भावतु है जु अबै॥२६७॥
तब बोलि हुरम्म कहै मुख तैं।
पहलैं तकसीर परी हम तैं॥
गरदन्न कबूल करौ अबहीं।
पहलै हम तैं तकसीर भई॥२६८॥
समझै पतिसाह तबै मन मैं।
अबला हठ नाहिं मिटै मन[4] मैं॥
इनको सब बेगम लोग कहै।
मन चाहत सो हठता जु गहै॥२६९॥

दोहरा छंद

हुरम बचन सुनि साह तब, मन विचार तह कीन[5]।
बेगम जानि जु तीय की, इन सख्ख सन दीन[6]॥२७०॥
जाहु सेख इन मानि रहो, जहं लगि मेरो राज।
जो राखै[7] ताको हनूं, प्रगट सुसाज समाज॥२७१॥

१ दब्बत। २ कोप। ३ तन। ४ चित्त। ५ दिन्न। ६ इइ। ७ रक्खें।

बतलाईं—"चाहे आप मेरे सरदार को एक लाख मोहर, चार हाथी और तीन सौ घोड़े भेंट करें और अपनी बेटी अलाउद्दीन को ब्याह दें, अथवा उन चार विद्रोही मोगल सरदारों को मेरे हवाले कर दें जो अपने स्वामी के कोपभाजन होकर अब आप की शरण में रहते हैं।" दूत ने फिर कहा—'यदि आप अपने राज्य और प्रताप को शांति-पूर्वक भोगना चाहते हों तो इन दो में से किसी शर्त को मानकर अपना अभिप्राय सिद्ध करने के लिये आपको अच्छा अवसर मिला है; इससे आपको शत्रुओं का नाश करनेवाले बादशाह अलाउद्दीन की कृपा और सहायता प्राप्त होगी जिसके पास असंख्य दृढ़ दुर्ग, सुसज्जित शस्त्रागार और मेगजीन हैं, जिसने देवगढ़ ऐसे ऐसे अगणित अजेय दुर्गों पर अधिकार करके महादेव को भी लज्जित किया क्योंकि उनकी (महादेव की) ख्याति तो अकेले त्रिपुर के गढ़ को सफलतापूर्वक अधिकृत करने से हुई है।'

हम्मीर जो दूत के वचन अधीर होकर सुनता रहा इस अपमान-कारी सदेसे से बहुत ही क्रुद्ध हुआ और उसने श्री मोल्हणदेव से कहा कि यदि तुम भेजे हुए दूत न होते तो जिस जीभ से तुमने ये अपमान-सूचक बातें कही हैं वह काट ली गई होतीं। हम्मीर ने न केवल इन शर्तों में से किसी को मानना अस्वीकार ही किया वरन् अपनी ओर से उतने खड्ग के आघात स्वीकार करने के लिये अला-उद्दीन से प्रस्ताव किया जितनी मुहर, हाथी और घोड़े माँगने का उसने साहस किया, और दूत से यह भी कहा कि मुसलमान सर-दार का इस रणभिक्षा को अस्वीकार करना सूअर खाने के बराबर होगा। बिना और किसी शिष्टाचार के दूत सामने से हटा दिया गया।

रणथंभौर की सेना युद्ध के लिये सुसज्जित होने लगी। बड़ी योग्यता और पराक्रम के सेनापति भिन्न-भिन्न स्थानों की रक्षा के हेतु नियुक्त हुए। दुर्ग की दीवारों पर रक्षकों को धूप से बचाने के लिये इधर-उधर डेरे गाड़े गए। कई स्थानों पर उबलता हुआ तेल

और राल रखी गई कि यदि आक्रमणकारियों में से कोई निकट आने का साहस करे तो उसके शरीर पर वह छोड़ दी जाय। उपयुक्त स्थानों पर तोपें चढ़ा दी गईं। अंत में मुसलमानी सेना भी रण-थंभौर दुर्ग के सामने आई। कई दिन तक घमासान युद्ध होता रहा। नसरतखाँ अचानक एक गोली के लगने से मर गया और बरसात के आ जाने पर उलुगखाँ को लड़ाई बंद करनी पड़ी। वह दुर्ग से कुछ दूर हट गया और उसने अलाउद्दीन के पास अपनी भयानक स्थिति का समाचार भेजा। उसने नसरतखाँ का शव भी समाधिस्थ करने के निमित्त उसके पास भेज दिया। अलाउद्दीन ने यह समाचार पाकर तुरंत रणथंभौर की ओर प्रस्थान किया। यहाँ पहुँचकर उसने तुरंत अपनी सेना को दुर्ग के द्वार की ओर बढ़ाया और उसे छेंक लिया।

हम्मीर ने इन कार्य्यों की तुच्छता सूचित करने के लिये दुर्ग की दीवारों पर कई जगह सूप के झंडे गड़वा दिए। इससे यह अभिप्राय झलकता था कि दुर्ग के संमुख अलाउद्दीन के आगमन से राजपूतों को कुछ भी बोझ वा कष्ट नहीं मालूम होता था। मुसलमान सरदार ने देखा कि उसे साधारण धैर्य और साहस के मनुष्यों से पाला नहीं पड़ा है, और उसने हम्मीर के पास सँदेसा भेजकर यह कहलाया कि मैं तुम्हारी वीरता से बहुत प्रसन्न हूँ, और ऐसा पराक्रमी शत्रु चाहे जिस बात की प्रार्थना करे उसे मानने में मैं प्रसन्न हूँ। हम्मीर ने उत्तर दिया कि यदि अलाउद्दीन जो मैं चाहूँ उसे देने में प्रसन्न है तो मेरे लिये इससे बढ़कर संतोष की बात और कोई नहीं होगी कि वह दो दिन मेरे साथ युद्ध करे, और मुझे आशा है कि मेरी यह प्रार्थना स्वीकृत होगी। मुसलमान सरदार ने इस उत्तर की यह कहकर बड़ी प्रशंसा की कि वह सर्वथा उसके प्रतिद्वंद्वी के साहस के योग्य है और उसने दूसरे दिन युद्ध रोपने का वचन दिया। इसके अनंतर अत्यंत भीषण और कराल युद्ध हुआ। इन दो दिनों में मुसलमानों के कम से कम ८५००० आदमी मारे गए। दोनों योद्धाओं के बीच कुछ दिन विश्राम

बज्जिव निसाँन गज्जिव सु ताँम ॥
मग चलन करत मृगया अनेक ।
मिलि चलिय[1] सकल बर बीर एक[2] ॥२८२॥
जिहिं मिलै राव राजा सु जाय ।
पतिसाह बैर सुनि रहै चाय ॥
चहुँ चक्क फिरयौ महिमा सुधीर ।
नहिं[3] कह्यौ रहन काहू सुबीर ॥२८३॥
द्वै[4] दीन मेग्व देखे सुभारि ।
बिन राव दसौं[5] दिसि फिरिव हारि ॥
तब तक्कि[5] सेग्व हम्मीर राव ।
सोइ आइ सरन परसै जु पाव ॥२८४॥

दोहरा छंद

गढ़ बंका बंको सुधर, बंका राव हमीर ।
लखि प्रतीति मन महँ[7] भइय, हर्ष महिमा मीर ॥२८५॥
देखि जलासय बिटप बहु, उतरि सुडेरा कीन[8] ।
हय गय बंधे तरुन तर, खाँन पाँन बिधि लीन[9] ॥२८६॥
डेरा ड्योढ़ी करि खरे, करी बिछायति बेस ।
करि[10] सिस्लाति कौं मलि जुरी, सब भर सरस सुदेस ॥२८७॥
मंत्री मंत्र सुपूछि[11] तब, इक चर लीन सु बोलि ।
जाहु राव के पास तुम, कहो बात सब खोलि[12] ॥२८८॥
प्रथम सलाँम कहो जु तुम, बिरत[13] कहो सु बिसेष ।
हुकम होय जो मिलन कौं, तो हजूर ह्वै सेग्व ॥२८९॥
इतने में जानी परे, पन ध्रम प्रीति प्रतीति ।

१ चलै । २ केक । ३ नन कह्यौं । ४ द्वै, दोउ दीन, दोय । ५ तके ।
६ बंको । ७ जिय में । ८ किन्न । ६ लिन्न । १० करी कचहरी आप तब ।
११ पुच्छि । १२ खुल्लि, ग्वुल्लि । १३ वृत्त, वृत्तांत ।

हर्ष सोक यहि गति लख्यौ, तुम जानत सब रीति ॥२९०॥
तब सु दूत गय राव पहँ, करी खबरि दरबाँन ।
बोलि हजूरि सुदूत कौ, पूछत कुसल सुजाँन ॥२९१॥
सकल बात सुनि दूत मुख, हर्ष राव बहु कीन ।
तबहिं उलटि पठयौ सु वह, सेख बुलाय सुलीन ॥२९२॥

नाराच छंद

चल्यौ जु सेख राव पहँ बनाय साज कीनयं[1] ।
तुरंग पंच नाग एक साज साजि लीनयं[2] ॥
कमाँन दोय टंकनो सु देस मुल्लताँन कौ ।
कृपाँन एक[5] बेस देस पालकी सुजाँन कौ ॥२९३॥
लिये सु दोय वस्त्र लाल एक[5] मुक्त मालयं ।
करी जु एक[5] दोय बाज स्वाँन दोय पालयं ॥
सवार एक आपही सबै पयाद चल्लियं ।
रहे ननक पौरि जाय फेरि अग्ग हल्लियं ॥२९४॥
सुबेतहार अग्ग[6] जाय राव कौ सुनाइयं ।
हमीर राव बेगि आय[7] रावतं खड़ाइयं ॥
चले लिवाय सेख कौ जहाँ जु राव वट्ठियं ।
सभा समेत राव देखि सेख कौ सु उट्ठियं ॥२९५॥
मिले उभै समाज सौं कुसल्ल छेम पुच्छियं ।
परस्सि पानि पाव सेख हाथ[8] जोरि सुच्छियं ॥
करी जु अग्ग सेख भेंट बुल्लियौ सु वाचयं ।
सरन्नि राव राखि राखि मैं सरन्नि साचयं ॥२९६॥
फिरयौ सु मैं सु दीन दोय स्याँन जाँति सव्वयं ।
जितेक राज रावताय छत्र जाति सव्वयं ॥

---

१ किन्न । २ लिन्न । ३ किन्नयं । ४ तुरंग पंच नाग इक्क साज सज्जि लिन्नयं । ५ इक्क । ६ अग्र । ७ आप । ८ हत्थ । ९ रक्खि रक्खि ।

दिसा दसों जितेक भूप और वीर बंक जे।
रहो कह्यो सु कौन हू रहूँ तहाँ सुधीर जे[1] ॥२९७॥
हसे हमीर राव बात सेख की सुनंत ही।
कहा अलावदीन, पातसाह, सोभनंत ही॥
रहो यहाँ अभै सदा हमीर राव यों कहै।
तजूँ ज तोहिं प्राण साथि और बात यों कहै॥२९८॥

चौपाई छंद

राव हमीर नजरि सब रक्खिय।
बचन सेख कौ यहि विधि भक्खिय॥
तन धन गढ़ घर ए सब जावैं।
पै महिमा पतिसाह न पावै[2] ॥२९९॥
कहै सेख प्रण समुझि सु किज्जिय[3]।
मेरी प्रथम अर्ज सुनि लिज्जिय[4]॥
दसों दिसा मैं मैं फिरि आयव।
जिते खाँन सुलताँन सु गायव॥३००॥
राजा राँन राव जितने जग।
दीन होय देखे[5] सु अगम मग॥
बाँध तेग साहस करि कोई[6]।
तजै लोभ जीवन को सोई[7] ॥३०१॥
यह जिय जानि बास मुहिं दीजे[8]।
सेख राखि सरनै जस लीजे[9]॥
इतनी धरा सेष सिर होई।
कहै साहि रक्खे[10] नहिं कोई॥३०२॥

---

१ सुतंक जे। २ त्यों। ३ कीजे। ४ लीजे। ५ दिक्खे। ६ कोइय। ७ सोइय। ८ दिज्जिय। ९ रक्खि। १० लिज्जिय।

छप्पय छंद

बार बार क्यों कहै सेख उत्कर्ष बढ़ावे।
एक[1] बार जो कही बहुरि कछु और कहावै[2] ॥
प्रथम वंस चहुवाँन टेक गहि कबहुँ न छंडे।
बहुरि राव हम्मीर हठ न छुट्टै तन खंडे ॥
थिर रहहु[3] राव इम उच्चरै न डरि न हरि अब सेख तुव।
उगै न सूर जो तजहुँ[4] तोहिं चलहिं[5] मेरु अरु भुम्मि ध्रुव ॥३०३॥
बकसि सेख कौ बाजि[6] साज कंचन के साजे।
मुक्त माल सिरपेंच जटित हीरा[7] छबि छाजे ॥
सकल सथ्थ सिरपाव साल दिन्नव अति[8] भारिय।
पंच लक्ख को पटौ दियौ आदर भुवकारिय[9] ॥
दिन्नी सुठौर[10] सुंदर इकै[11] तिहिं देखत[12] हिय हर्षियउ।
उच्छाह सहित उठि सेस तब आनँद मंगल बर्षियउ ॥३०४॥

दोहरा छंद

महिमा साह जु तुरतही[13] गए हवेली आप।
देखत ही सब भाँति सुख मिटी सकल तन ताप ॥
महिमानी पठई नृपति, सबै सथ्थ के हेत।
खाँन पाँन लायक जिते, मधु आमिष[14] सु समेत ॥३०५॥
ज दिन सेख दिल्ली तजी, दूत सथ्थ दिय ताहिं।
को रक्खै कित[15] जात यह, लखो जु तुमहूँ वाहि ॥३०६॥
राख्यौ[16] राव हमीर तब, महिमा साहु जु पास।
कहै राव सों दूत तब, मत रक्खो तुम[17] पास ॥३०७॥

---

१ इक्क । २ कहावै । ३ होहु । ४ तजौं । ५ चलैं । ६ बाच । ७ हीरन । ८ असि । ९ बहुभारिय । १० जु । ११ यकै । १२ पिक्खत । १३ तुरत तब । १४ अमिषहा । १५ कत जाइ इह । १६ रक्खिउ । १७ निज बास ।

अलादीन मृ[1] औलिया, फिरत चहूँ दिसि आनि।
निवल सवल के वाद सों, किन सुख पायो जानि ॥३०८॥

मुक्तादाम छंद[2]

कहै तव दूत सुनो नृप वात।
वड़ो तुव वंस प्रताप सुहात[3]।
तजो[4] रतनागर को सर हेत।
रतन्न अमूल्य[5] तजो रज हेत ॥३०९॥
कहो गुन कौन रखे इहि[6] सेख।
जरत्त जु वाल गहो[7] सुविसेष ॥
अजाँन असी जु करै नहिं राव।
सुनो[8] तुम नीति जु राज स्वभाव ॥३१०॥
तजो अव इक्क[9] कुटुंव वचाय।
तजो गृह इक्क सुग्राम सहाय॥
तजो पुर इक्क सुदेस वचाय।
तजो सव आतम हेत सुभाय ॥३११॥
महा यह नीच अधम्मिय[10] सेख।
टरयौ नहि स्वामि तिया गुन देख॥
वढ़ै पतिसाह[11] दिल्लीपति[12] बैर।
लख्यो नहिं आँनन प्रात सुफेर ॥३१२॥
प्रलै जिहिं रोप तजै धर देह।
हमीर सु राव सुनो रस[13] भेव॥
वढ़ै निति नेह तुमे पतिसाह।
अमीरस मैं विप घोरत काह ॥३१३॥

१ से। २ मोतीदाम। ३ सुतात। ४ तजो सरनागत। ५ अमोल। ६ इह। ७ गही। ८ सुनी। ९ एक। १० अधर्मिय। ११ पुनि साह। १२ दिलीसहिं। १३ इह।

परो[1] फिर आप नहीं दुख आय ।
तजो यह जानि प्रथम्म सुभाय ॥
जथा वह रावन जित्ति[2] त्रिलोक[3] ।
सुरन्नर नाग रहैं तिहि ओक[4] ॥३१४॥
करयौ तिन बैर जबै रघुनाथ ।
मिट्यौ गढ़ लंक सुबंकम पाथ[5] ॥
कहो सर[6] कौन करैं पतिसाह ।
करै तब जंग बचो नहिं ताहि[7] ॥३१५॥

छप्पय छंद

कह हमीर सुनि दूत बचन निज असत भाख्यौं ।
मो बिन[8] और न कोय सेख की सरनै राख्यौं ॥
गहूँ खाग[9] सनमुक्ख दुहूँ अति गर्व सुद्ध द्रढ़ ।
लहै मुक्ति मग सत्य किधौं रणथंभ महा गढ़ ॥
कहियो निसंक पतिसाह सों सेख सरनि हम्मीर किय ।
सामाँन युद्ध जेते कछू सो अनंत दुग्गह जु लिय ॥३१६॥

दातार छंद

सुनि हमीर के बचन, दूत दिल्लिय दिस आयव ।
करि सलाँम कर जोरि, साह कौं[10] सीस नमायव ॥
पूरब दच्छिन देस और पच्छिम दिसि आयव ।
सबै सेख फिरि थक्कि, कहूँ काहू न रखायव ॥
तब सेख आय रणथंभ गढ़, दीन बचन इम भक्खियो[11] ।
सुनि हमीर करुणा सहित, सेख बचन दे रक्खियो[12] ॥३१७॥

महरम खाँ वजीरोवाच

समद पार गय सेख, बार हजरत वह नाहीं ।

---

१ परे । २ जीति । ३ तिलोक । ४ वोक । ५ माथ । ६ सरि । ७ आदि । ७ मुझ बिन । ६ तेग । १० सों । ११ भाखियो । १३ राखियौ ।

गाव सेख क्यों रखै, रहत हजरत घर माहीं ॥
फिर न कहो यह वचन, बृथा[1] कबहूँ[2] अनजाने।
दूत साह के बचन, सुने सत्कार सुमानै ॥
महरम्म खाँन इम उच्चरै, खबरदार नहिं बेखबरि।
कहिये जु बात निज द्रगन लखि, असी बात नहिं कहो फिरि ॥३१८॥

दोहरा छंद

महरम खाँ उज्जीर सों, कहै बैन पतिसाहि।
इक फरमाँन हमीर कौं, लिखि भेजहु अब ताहि ॥३१९॥

छप्पय छंद

लिखि हजरति फरमाँन उलटि एलची पठाए।
हठ मति करो हमीर चोर मति रखो पराए ॥
हम दिल्ली के ईस राव तुमहू जु कहावो।
बढ़े अलसि जिय माहिं[3] बैर मैं कहा जु पावो ॥
माल मुलक चाहो जितो, कहै साहि बहु लिज्जिये[4]।
फरमाँन बाँचि[5] जिय राव तुम, चोर हमारौ दिज्जिये[6] ॥३२०॥

दोहरा छंद

बाँचि[5] राव फुरमाँन तब, दियउ सेस तब अंग।
बचन दिये मैं सेख कौं, करों साह सों जंग ॥३२१॥
दियउ[7] उलटि फरमाँन तब, राव साहि कौ ज्वाब।
रक्ख्यो महिमा साहि मैं, तजू न तिहिं मैं आब ॥३२२॥
यह फरमाँन जु बाँचि[5] कै, करिव साह तब क्रोध।
खिज्यो देखि पतिसाह कौ, कियो उजीर सुबोध ॥३२३॥

छप्पय छंद

कित्तो गढ़ रणथंभ राव जिस पर गर्वाए।
दसू देस वसि किये जीति करि पाँव लगाए ॥

१ व्यर्थ। २ कबहूँ न। ३ माँझ। ४ लीजिए। ५ बंचि। ६ दीजिये। ७ दियो।

ईस कहौ अब कौन जुद्ध जो हम सों मंडै।
देत दुनी तैं कढ़हि गर्ब तातैं क्यों मंडै॥
साहिब्ब वचन इम उच्चरै अली औलिया पीर गनि।
महिमा साह जु रक्खि तुव अजहूँ समुझि हमीर मनि॥३२४॥

दोहरा छंद.

दूजा हजरति का लिख्या, बाँचि राव फरमाँन।
बार बार क्यों लिखत है, तजूँ न हठ की बाँन॥३२५॥
पच्छिम सूरज उग्गवै, उलटि गंग वह नीर।
कहो दूत पतिसाह सों, तौ हठ न तजै हमीर॥३२६॥

छप्पय छंद

दियौ पच्छ ऋषिराज करौं जब लग मैं सोइय।
जो गढ़ आयो निमत साह रक्खै नहिं कोइय॥
अनहोनी नहिं होय होय होनी है सोइय।
रजिक[3] मौति हरि हथ्थ डर सु मानव क्यों कोइय॥
नहिं तजूँ सरन को प्रण करिव सरन धरम छत्रिय तनों।
तन है बिचित्र महिमा तनो सत्य वचन मुख तैं भनों॥३२७॥
चले दूत मुरझाय, दिलिय दिसि कियो पयानों।
गढ़ रणथंभ हम्मीर साह कैसे कम जानो॥
हयदल पयदल सेन सूर बर बीर सवायौं।
हठी राव चहुवाँन वंस यहि हठ चलि आयौं॥
यहि बिधि सु तुमहूँ धर लखै हरै सकल तुम बीर बर।
अब पतिसाह जु एक भुव कै तुम कै जु हमीर बर॥३२८॥
सुनत दूत के बचन साहि जब मन मुसकाए।
किनो राज हम्मीर करै हठ मोहिं बुलाए॥

१ तंडै। २ तुव। ३ रिजक। ४ लिखै। ५ हरयो। ६ भव।

किनेक गढ़ इक ठौर किते उमराव महाबल।
किते बाजि गजराज किते भट बंक महाबल[1] ॥
तुम कहो सकल समझाय मुहिं किहिं हेतु इते गर्वहिं बढ़े।
हम्मीर राव चहुवाँन कै कितो[2] नृपनि[3] दल संग चढ़े ॥३२९॥
हजरति राव हमीर बार बहुतैं समझायव।
सुनि महिमा को नाँमं रोप करि राव रिसायव ॥
करौं जुद्ध तिर सुद्ध साह दल खंडि बिहंडौं।
धरौं सीस हर कंठ सुजस तिहिं लोकहिं मंडौं ॥
हम्मीर राव इम उच्चरै गही टेक[4] छाँड़ौं नहीं।
तन जाहु रहै जिय सोच नहिं लाज धरम खंडौं नहीं ॥३३०॥

चौपाई छंद

कहै साहि सुनु दूत सु बैनं।
कहो[5] राव को पन भ्रम गनं ॥
कितेक दल बल सूर समाजं।
कितेक गढ़ सामाँ धर राजं ॥ ३३१ ॥
रहनी करनी प्रजा प्रतापं।
बानी[6] बिरद दाँन द्रव आपं।
नीति अनीति ग्राम गढ़ कैसा।
सहर[7] सरोवर बाट जु जैसा ॥ ३३२ ॥
सत्तरि सहस तुरंगम जानो।
दोय लक्ख पयदल भरमानो ॥
सत्तपंच गजराज अमानो[8]।
होहिं कीच मद बहत सुदानो[9] ॥ ३३३ ॥

१ बड़ा दल। २ येत। ३ कितका। ४ दसम। ५ तेग। ६ लोभ। ७ कहै। ८ बाना। ९ बिर्द। १० सहस रोप बाग जु जैसा। ११ माने। १२ दाने।

रनथंभोर ग्वालियर बंका ।
नरवल[1] औ चित्तोड़ सु तंका ॥
रहै जखीरा गढ़ के जेता ।
अनगिन[2] वस्तु न जानत तेता ॥३३४॥
तुरी सहस इकतीस सु सज्जै ।
अरु गजराज असी मद गज्जै ॥
सूर वीर दस सहस अमानो ।
इते राव रणधीर के जानो ॥३३५॥

दोहरा छंद

सोटि मसीत (३) जु सकल तह,[3] कीके[4] मंदिर देस ।
बांग निवाज न होय जहँ, स्रवन कथा हरि वेस ॥३३६॥
नहिं कुरान कलमा नहीं, मुसलमाँन नहिं पीर ।
च्यारि वरण आस्रम सुखी, देस हमीर सु धीर ॥३३७॥
अपने[5] अपने धर्म्म मैं, रहैं सबै नर नारि ।
राजनीति पन तेजजुत, करै राव सुखकारि ॥३३८॥
कर काहू के होय नहिं, दुखी न काऊ दीन ।
आस्रम किते नवीन[7] हैं, ऊँचे मंदिर वीन[8] ॥३३९॥

पद्धरी छंद

रणथंभ दुग्ग वहु विकट जानि ।
तिहिं दुग्ग च्यारि मग सुगम मानि ॥
घाटी सु च्यारि अस्सी सु और ।
है गै न चलैं अति कठिन ठौर ॥३४०॥

---

१ नरवल मनु (मन) चीतोड़ सुतंका । २ अगणित । ३ तिहँ । ४ किन्ने । ५ अप्पन । ६ राज । ७ अनूप । ८ दीस, ईस, अंत्यानुप्रास । ९ दुर्ग वहु विधि सु ।

है वह देश जहाँ ऐसे ऐसे वीर हो गए हैं। धन्य हैं वे स्त्रियाँ जो अपने सतीत्व की रक्षा के लिये बिना कुछ सोचे-विचारे इस क्षणभंगुर शरीर को नष्ट कर डालती थीं और धन्य हैं वे लोग जो उनके वृत्तांतों को पढ़कर आनंदित और प्रफुल्लित होते हों और जिन्हें अपने देश के गौरव की रक्षा का उत्साह होता हो।

मैं पहले लिख चुका हूँ कि दो हम्मीर हो गए हैं। एक के विषय में तो मैंने इतना कुछ मसाला इकट्ठा कर दिया है। मेवाड़ के हम्मीर के विषय में भी कुछ कह देना आवश्यक जानकर ठाकुर हनुवंत सिंह लिखित मेवाड़ के इतिहास से इनका वृत्तांत उद्धृत कर देता हूँ। वह इस प्रकार है—

"लखमसी जी के पीछे मुसलमानों से बैर लेनेवाला अब केवल उनका लड़का अजयसिंह था जो कि केलवाड़े में रहता था। यह केलवाड़ा अर्वली पर्वत के उच्च प्रदेश में है। वहाँ उसकी रक्षा करनेवाले भील लोग थे। अजयसिंह जी के बड़े भाई अरसी जी के कुँवर हम्मीरसिंह को अपने पीछे गद्दी पर बिठलाने का वचन लखमसी जी ने अजयसिंह से ले लिया था। इससे तथा अजयसिंह के पुत्र के हम्मीरसिंह के समान पराक्रमी न होने से उनके उत्तराधिकारी हम्मीरसिंह ही थे। इनकी माता के विषय में यह कथा प्रसिद्ध है कि एक दिन अरसी जी युवराजत्व अवस्था में ऊदबा गाँव के जंगल में आखेट को गए थे। वहाँ जब एक सूअर के पीछे इन्होंने घोड़ा दिया तो वह भागकर ज्वार के खेत में घुस गया। ज्योंही अरसी जी सूअर के पीछे खेत में जाने लगे त्यों ही एक कन्या ने, जो उस खेत की चौकसी कर रही थी, इनको भीतर जाने से रोका और कहा कि ठहरो सूअर को बाहर निकाले देती हूँ। फिर उस लड़की ने ज्वार के पेड़ को उखाड़ सूअर को दो चार सपाटा लगाकर उसे उनकी ओर खदेड़ दिया। उस लड़की की निर्भयता को देख आखेटकों को बड़ा आश्चर्य्य हुआ। पीछे जब कि वे एक नाले पर विश्राम करने के लिये ठहरे हुए थे तो सनसनाता हुआ दूर से एक पत्थर का टुकड़ा आया और

घोड़े की टाँग में ऐसे जोर से लगा कि उसका पैर टूट गया। बहुत ही छोटे से पत्थर के टुकड़े से घोड़े का पैर टूटा हुआ देख खोजा गया तो उसकी मारनेवाली भी वही खेत की रखवालिन कन्या निकली। पच्चियों के उड़ाने को उसने गोफन में रख कर गिल्ला फेंका था परंतु दैवयोगसे वह घोड़े को आ लगा। जब उसने यह सुना कि घोड़े को चोट लग गई है तो अरसी जी के पास जाकर अपने बिना जाने अपराध की क्षमा बड़ी नम्रता से माँगी। संध्या को लौटते समय अरसी जी को फिर वही कन्या अपने घर को जाती हुई राह में मिली। यह लड़की माथेपर दूध का मटका रखे और दोनों हाथों में दो पड़रे (भैंस के बच्चे) लिए हुए जा रही थी, उस समय अरसी जी के साथियों में से एक ने हँसी में उसके दूध को गिरा देने का विचार किया और वह मनुष्य घोड़ा दौड़ाता हुआ उसके पास होकर निकला। इससे यह लड़की कुछ भी न घबड़ाई और अपने हाथ में का एक पड़रा घोड़े के पिछले पैरों में ऐसा मारा कि घोड़ा और सवार दोनों धरती पर गिर पड़े और हँसी के बदले उलटी अपनी हानि कर ली। अरसी जी ने घर जाकर निश्चय कराया तो वह कन्या चंदाना वंश (चहुवानों की एक शाखा है) के एक राजपूत की पुत्री निकली। अरसी जी ने उसके बाप को बुलवाकर उससे अपना विवाह करने के लिये वह लड़की माँगी, परंतु उस राजपूत ने निषेध कर दिया। घर पहुँचकर जब अपनी स्त्री से उसने सब वृत्तांत कहा तो वह पति के इस कार्य से बहुत अप्रसन्न हुई और लग्न स्वीकार करने के लिये अपने पति को फिर अरसी जी के पास उसने लौटाया। अंत में अरसी जी का उस कन्या के साथ विवाह हुआ, जिसके पेट से अति पराक्रमी हम्मीरसिंह ने जन्म लिया। सिंहनी के पेट में तो सिंह ही जन्म लेता है। हम्मीरसिंह जी बचपन में अपनी ननहाल में रहकर बड़े हुए थे।

"हम्मीरसिंह के काका अजयसिंह जब केलवाड़े में रहते थे तो उनकी मुसलमानों के सिवाय पहाड़ियों में रहनेवाले राजपूत सर्दारों

रतनेस नाँम जस है विख्यात ।
चित्तोड़ दुग्ग पालै सु तात ॥३५२॥
संग रहै सुभट थट विकट संग ।
को करै तिनहिं तैं रणहिं रंग ॥
तप तेज राव वृपभाँन जेम ।
पर दुख कट्टन विक्रम सु तेम ॥३५३॥
देखंत रूप मनु काँमदेव ।
सुइ काछ वाछ निकलंक सेव ॥
अरु खेत जुरे नहिं देत पिट्ठि ।
अरि लखन देखि नहिं परत दिट्ठि ॥३५४॥
वहु वाग चहूँ दिसि सघन हेरि ।
गंभीर गहर उपवन सु सेरि ॥
वहु अंव वृच्छ फल भुकत भार ।
दाड़िम समूह निंवू अपार ॥३५५॥
वहु सेवराज जामुन समूह ।
नारंग रंग महुवा समूह ॥
खिरनी सकेलि नारेल वृंद ।
खोरा कि चिरूजी मधुर कंद ॥३५६॥
कटहल कदंव वड़हल अनेक ।
महुवा अनंत कहलि बिसेक(प) ॥
तहँ मोलसिरी सोहैं गभीर ।
माघी सकेल सोहंत धीर ॥३५७॥
फुलवारि गुंज अति भ्रमर होत ।

१ विकट थट्ट रहै सुभट संग । २ पिक्खंत । ३ परम । ४ आम्र । ५ नरियल । ६ कंज । ७ ऊभरि अनंत घोटा सु एक । ८ मधि किते सरवूँ (सरू) सोहंत कीर । ९ फुलवारि भौंर गुंजार होत ।

प्रफुलित[1] गुलाब चंपा उदोत ॥
कहुँ रहे केतकी बृंद फुल्लि।
अहि भ्रमर गंध महि रहे भुल्लि ॥३५८॥
कहुँ रहे केवरा जुही जाय।
मंदुप्प[2] और संभो सु आय ॥
आचीन नरग्गिस औ असोक[3]।
पाटल[4] सचर्मोलिय बोलि कोक[5] ॥३५९॥
एला लवंग अंगूर बेलि।
माधुज्ज लता माधुरी भेलि ॥
तरु ताल तमाल रु ताल और।
ता मध्य कमल अरु कुमुद भौंर ॥३६०॥
चहुँ ओर सघन पर्वत सुगंध।
जलजंत्र छुटै उच्चे सबंध ॥
पिक मोर हंस चकवा विहंग।
सुक चाय(त)क कोकिल रमत संग ॥३६१॥
चहुँ ओर बाग बागी अनूप।
तिहिं मध्य दुर्ग रणथंभ भूप[6] ॥३६२॥
यह दूत के वचन सुनि दरबार कियौ[7]।

छप्पय छंद

क्या हमीर मगरूर पलक में पाय लगाऊँ।
खूनी महिमा साह उसे गहि दिल्लिय लाऊँ ॥

---

१ फुलित। २ बहु। ३ संदूप। ४ सब्बो सु आम। ५ आचीन नगरसा (नरगसा) औ असोक। ६ पाडल। ७ सतबर्ग और श्रीखंड कुंद, किंसुक सुमालती सेवतिहि मंद। मधुबन बसंत सिंगार हार, मोतिया मदनसर फुले—र। ८ मध्य दुग्ग दुर्ग सुभूप। ९ दूत के वचन सुने तब पातसाह ने दर्बार कर्‌यौ।

जानि राव हम्मीर तोरि गढ़ धूरि मिलाऊँ।
इतौ जो न अब करूँ तौ न पतसाह कहाऊँ॥
केतोक राज रणथंभ को इतो कियो अभिमाँन तिहिं।
कोपि साह भेजे जबै दसों देस फर्मान जिहिं॥३६३॥
सुन दूत के वचन साह जिय संका आइय।
चढ़ौ कोपि बिन समुझि वहाँ कैसी बनि जाइय॥
हार[5] जीति रब हाथि[6] आप संमत जग होई।
तातैं मंत्री मित्र मंत्र[7] दृढ़ किज्जिय[8] सोई॥
यह जानि साह दीवाँन किय खाँन बहत्तरि इक हुव।
यह हठ हमीर को सुन्यौ तब रक्खे सेख सरन्न भुव॥३६४॥
आँम खास उमराव सबै पतिसाह बुलाए।
राजा राणा राव खाँन सुलताँन सु आए॥
हठ हमीर सुभि करिव सेख सरनै निज रक्ख्यौ।
दियौ दूत कौं उब व वचन बहु अनबन भक्ख्यौ॥
सब तंत मंत जानौ सु तुम देस काल बुधि इष्ट धुव।
जिहिं जाहु[10] जाहु जस बुद्धि है कहो[11] निति[12] उत्तम सुभुव॥३६५॥
कहै सकल उमराव ईस तुम सम नहिं कोई।
तेज प्रतापऽरु बुद्धि और दूजो नहिं कोई[13]॥
फिर फिर जो फरमाँन राव कौ कहा जु लिक्खिय।
जो उपजै यहि बार सोइ प्रभु आपनु अक्खिय[14]॥
चढ़िए सिकार गीदड़ तणी तऊ सिंह के बाँधि[15] सर।

---

१ हरां। २ मैं साह। ३ राव। ४ कुप्पि साह पठए जबै देस देस फुरमाँन जिहिं। ५ हारजित्ति। ६ हत्थ। ७ पूँछि। ८ कीजे। ९ एक। १० जाहि जाहि। ११ कहा। १२ नीति। १३ साहि तुम जानत साई (नहि होई)। १४ करिय प्रभु अप्पन अखिखय, लिखिए, अखिए अंत्यानुप्रास। १५ बधि।

फिरि लरो मरो[1] संदेह नहिं तंत मंत यह ही सुबर ॥३३६॥
महरम खाँ उज्जीर साह सों ऐसे भाषे[2] ।
चहुवाँनन की बात सबै अगली मुख भाषे[3] ॥
पहले हसन हुसेन सयद[4] चहुवाँन सुपेले[5] ।
सात बेर प्रथिराज गहे गवरी गहि मेले[6] ॥
बीसलदे अरु पित्थ ये जड़ पीर करे अजमेर हनि[7] ।
महरम खाँ इम उच्चरै असो बंस चहुवाँन गनि[8] ॥३३७॥
गीदर सिंह सिकार, साह एको[9] मति जानो ।
रणतभंवर दिस भला[10], आप मति करो पयानो ॥
वहाँ राव हम्मीर, और रणधीर अमानो ।
अरु सामंत अनेक, अधिक तैं अधिक बखानो ॥
बहु दुग्ग[11] बक रणथंभ गढ़[12], यह विचारि जिय लिज्जिए ।
तुम अलावदी पीर अति, आप मुहिम्म न किज्जिए ॥३३८॥

दोहरा छंद

बहु दुग्ग बक रणथंभ बड़, तुम अलावदी पीर ।
दुहूं करामाति सम गनो, आप और हम्मीर ॥३३९॥

छप्पय छंद

कालबूत को[13] सेख, एक हजरति बनवावो[14] ।
ताहि मारि तजि रोप, कहा जिय क्रोध बढ़ावो ॥
लगै प्राण धन दोउ, तबै बाजी कोउ पावै ।
तजे खेत जस[15] जाय, बहुरि कछु हाथि न आवै ॥

---

१ मिलो । २ भक्खै । ३ चहुवाँनन की बत्त सब्ब अग्गलि मुख अक्खे । ४ सैद । ५ पिल्लिय । ६ साह गोरी गहि मिल्लिय । ७ बीसल दे अरु पित्थ बड़ पीर करिय अजमेर हनि । ८ पन । ९ सोइ यह इक्क न जानो । १० भुल्लि । ११ दुर्ग । १२ बड़ । १३ को । १४ बनवायौ, बढ़ायौ अंत्यानुप्रास । १५ बस ।

बरै दाँन वर्षा मनो भुम्मि[1] कारी ॥
लगै उज्ज्वलं दंत बग पंक्ति मानो ।
इती साह की सेन सज्जी सुजानो ॥३८०॥
गर्जत निसाँनं सु सज्जंत भानो ।
मनू पावसं मेघ गज्जैं सु मानो ॥
सबै सेन सज्जी चढ्यौ साहि कोपं ।
सबै पंच[3] चालीस लक्खं सु ओपं ॥३८१॥
तहाँ तीस[4] हज्जार निस्साँन[5] बज्जैं ।
सु तो घोर सोरं सुनै मेघ लज्जैं ॥
सताईस लक्खं महावीर बंके ।
टरै नाहि जंगं भए ताँम हंके ॥३८२॥
परै[6] जोजनं अट्ट[7] औ दोय फौजं ।
कटे बंक बन्नं हटे नाहिं गोजं ॥
चढ़ं उब्बटं बाट थट्टे[8] सु चल्ले ।
मनो सायरं छंडि[10] बेला उगल्ले ॥३८३॥
जले सुक्कियं[11] नीर नाना सु थाँनं ।
बहैं औघट घाट टुट्टंत[12] माँनं ॥
कियौ कूच कूचं[13] चले मीर धीरं ।
परयौ जोर हम्मीर कै देस तीरं ॥३८४॥
भजे भुम्मियाँ भुम्मि चल्लं अपारं ।
गए पर्वतं[14] बंक मैवास * भारं ॥

---

१ भूमि । २ मानो, जानो । ३ पाँच । ४ तीन । ५ नीशान । ६ परी । ७ आठ । ८ थाटे । ९ सायरं । १० छाँड़ि । ११ सोखियं । १२ टूटंत । १३ कुच्च कुच्चं । १४ पव्वतं, पव्वयं ।

* मैवास (मेवासा) = किला ।

सबै राव हम्मीर के देस माहीं।
भए वीर संधीर जुद्धं समाहीं ॥३८५॥
तिहाँ[1] बीचि मलहारणी इक्क[2] गड्ढं।
लरे राव के रावतं जोर दड्ढं ॥
दिना तीन लौं सो कियौ जुद्ध भारी।
फते[3] पातसा की भई बैनकारी[4] ॥३८६॥
चले अग्ग[5] साहं सु सेना हँकारी।
सुनी राव हम्मीर कुप्पे[6] सु भारी ॥
किये रक्त नैनं भृकुटी[7] कर्रूरं।
लग्यौ रावतं जोर उद्दं जर्रूरं ॥३८७॥
परी पक्खरं बाजि राजं सु सज्जं[8]।
बजे नद्द निस्सॉंन[9] आकास लज्जे[10] ॥
तबै राव हम्मीर कौ सीस नाए।
बिना आयुसं साह पै वीर धाए ॥३८८॥
जुरे आय जुद्धं न दीजो बनासं।
चढ़े लक्ख चालीस औ पाँच तासं ॥
इते राव हम्मीर के पंच[11] सूरं।
अभयसिंह पम्मार रट्ठौर भूरं ॥३८९॥
हरीसिंह बग्घेल कूरम्म भीरं।
चहूवॉन सद्दूल[12] अजमत्त सीसं ॥
त्रिभागै करी सेन बागैं उठाई।
मिले वीर धीरं अमीरं हटाई ॥३९०॥

१ तहीं बिच्चि। २ एक। ३ भते। ४ बनकारी (बन्नकारी)। ५ अग्र। ६ कोपे। ७ भकुट्टी। ८ साजे। ९ नीसॉंन। १० लाजे। ११ पॉंच। १२ सार्दूल।

दोहरा छंद

पंच[1] सूर हम्मीर के, बीस सहस असवार[2] ।
उत सब दल पतिसाह को, बज्यौ परम्पर सार ॥३६१॥
नदी बना सज उप्परै, रत्ति[3] बसिय पतिसाह ।
प्रात कुच्च[4] नहिं करि सके, आय जुटे[5] नरनाह ॥३६२॥

पद्धरी छंद

चढ़ि चल्ले[6] साह हरबल सभीर ।
तिहिं जुटे राव कूरम सबीर[7] ॥
बग्घेल हरीसिंह अनिय बंधि ।
चंदे(दो)ल पयादे भिरिव संधि ॥३६३॥
बिच गोल साह को जितो युद्ध ।
त्रिन सूर राव के करि[8] न जुद्ध ॥
यहि भाँति पंच रावत अभंग ।
पतिसाह सेन सों[9] जुटे जंग ॥३६४॥
कम्मान स्रवन लगि करि कसीस ।
मनु प्रगट पत्थ भारत्थ सीस ॥
सर बरसत पावस मनो नीर ।
बहु बेधि कवच धर परत धीर ॥३६५॥
लगि सेल अंग नहिं पार होत ।
ससि कारि घटा मैं करि उदोत ॥
किरवाँन बहैं करि करिव क्रोध ।
धर परत सीस धर उठत[10] जोध ॥३६६॥

१ पाँच । २ अस्वार । ३ राति बसे । ४ कूच । ५ जुटिय, जुटिग ।
६ चल्लिय । ७ तहँ जुटिउ (जुटिग) राव कूरम बीर । ८ करे । ९ कोरि ।
१० उठित, पुठत ।

लगि होत कटारिय अंग पार ।
प्रासाद उच्च के खुले द्वार ॥
बहु खंजर पंजर करत पार[1] ।
ऊँची जु उठी सु तो रुहिर[2] धार ॥३९७॥
ननु पर्ब्बत तैं, गेरू पनार ।
बहि[3] चली[4] अंग तैं सोन[5] धार ॥
बहु घायल घुम्मत बहुल घाव ।
मनु केसिव[6] किंसुक तरु सुहाव ॥३९८॥
चल परी साह दल मैं अपार ।
हा हंत सद[7] भौ दल मँझार ॥३९९॥

दोहरा छंद

भगिय[8] सेन पतिसाह की, लुटी जु रिद्धि अपार ।
तब मरहम खां साह सौं, अर्ज करी[9] तिहि बार ॥४००॥
हजरति देस हमार को, निपट अटपटो जानि ।
भिल्ल कोल तस्कर सबै, और किरात सुमानि ॥४०१॥
सजग रहो निसि द्यौस सब, गाफलि रहो न सूर ।
हनिय सेन सब आपनिय[10], तीस[11] हजार सपूर ॥४०२॥
घायल को लेखो नहीं, हत्थिय[12] परे सु बीस ।
परे बाजि सब छ्योढ़[13] सत, सुनि जिय अचरिज दीस ॥४०३॥
परे राव के बीर दस, घायल पंच पचीस ।
अभय[14] सिंह पम्मार के, भयौ घाव दस सीस ॥४०४॥
जाय जुहारे राव को, कही चमू की बात ।
तब हमीर सब तें कही, बाहर लगे न तात ॥४०५॥

१ फार । २ रुधिर । ३ बहु । ४ चलिय । ५ रुधिर । ६ केसुक ।
७ सद्द । ८ भगी । ९ करी अरज । १० आपनी । ११ तीन ।
१२ हाथी । १३ छ्योढ़ सो । १४ अभय साहि पम्मार इक ।

छप्पय छंद

तब सु साह करि कुच्च[1], चले[2] रणथंभहि आए।
सकल सु संकित हियें[3], मीर उमराव सुभाए ॥
जल थल पाथरि सैन एन[4] चहुँ ओर सु दिक्खिव ।
चढ़ि अगार इक उच्च[5] राव बहु भाँति न लक्खिव ॥
चहुवाँन राव हड़ हड़[6] हँस्यौ[7] हेरि सैन इम उच्चरयौ[8] ।
पतसाह किधौं सोहा जुगर मानो एक टाँडो परयौ[9] ॥४०६॥

दोहरा छंद

फिरि पतिसाह हमीर कौं, लिखि पठए[10] फरमाँन ।
अजहूँ[11] हिंदू समुझ तुव, मिलि तजि सब अभिमाँन ॥४०७॥

छप्पय छंद

मैं मक्के[12] को पीर दिली पतिसाह कहाऊँ ।
हिंदू तुरक दुराह[13] सबै इक सार चलाऊँ ॥
बीर च्यारि अरु पीर रहैं मुझ पर[14] चौरासी ।
महिमा साहि न रक्खि राव मति करै जु हाँसी ।[15]
तुम समुझि सोचि[16] जिय अप्पनैं[17] कहा तोहिं फल ऊपजै ।
परचंड लाय उठै जु सिर इक्क[18] सख को नहिं तजै ॥४०८॥
फिर हमीर फरमाँन साहि कौं उलटि पठायौ ।
हजरति छत्री धर्म्म सुन्यौ नहिं स्रवनन गायौ ॥
तुम मक्के के पीर सूर सुरलोक कहाऊँ ।
तुम सरभर नहि हमम साहि पल मैं[19] जु नसाऊँ ॥

---

१ कूँच । २ दुग्ग । ३ हीय । ४ एन । ५ ऊँच । ६ हर, हर । ७ हँसिव । ८ उच्चरिव । ९ परिव । १० भेजिय । ११ अबहूँ । १२ मक्का का । १३ दाउ राह । १४ पै । १५ महिमा साहि हमीर राखि मति करै जु हाँसी । १६ देखि । १७ आपनें । १८ एक । १९ माँझ ।

नहिं तजौं टेक छंडूं न पन यह विचार निहचै धरयौ ।
छिन भंग अंग लालच कहा सुजस खोय जीवन करयौ ॥४०९॥

दोहरा छंद

जेत छाँडि जोगी कहा, मत छंडै रजपूत ।
सेख न सौंपौं साह कौं, जब लग सिर सावूत ॥४१०॥

छप्पय छंद

हजरति नई न कम्म करूँ जेमी चलि आई ।
सुसलमाँन चहुवाँन सदा गेमी बनि आई ॥
ख्वाजे मीराँ पीर खेत अजमेरि खिसाए *
असी सहस इक लक्ख बहुरि मक्का न दिखाए ॥
बीसल दे अजमेर गढ़ सो नगरा साको कियव ।
नन वरिय सुंदरी कँवरि सो साह बहुत लालच दियव ॥४११॥
प्रथीराज वर सात साहि गवरी गहि छंड्यौ ।
कर चूरी पहिराय दंड करि कछुव न मंड्यौ ॥
ता पिच्छै गढ़ दिल्ली माहि गौरी चढ़ि आयव ।
रेणसी कुमार अपार जुद्ध करि सुर पुर धायव ॥
चहुवाँन वंस अवतंस जो खग्ग त्यागि नाहिन मुरयौ ।

१ त्यागूँ । २ निश्चय । ३ धरिव । ४ करिव । ५ छोड़ै । ६ जोलों । ७ गेमी । ८ नेम । ९ उलटि । १० खिदाए । ११ चलि । १२ आए । १३ रमगा । १४ धाए । १५ खाग । १६ मुरयव ।

* असुर मारि अजपाल चहूँ दिसि चक्र चलाए ।
बीसल दे अजमेरि पाय मँडलीक लगाए ॥
बीरम दे जालोर गढ़ सो नगर साकौ कियव ।
नन वरी जीभ सुदरि कुँवरि साहव होत...॥

छंड्डू[1] न टेक यह बिरद मम सेख रक्खि[2] जंगहिं करयौ[3] ॥४१२॥
तजै सेम जो भुम्मि मेरु चल्लै[4] धर उप्पर।
उलटि गंग वह नीर सूर उग्गै[5] पच्छिम भर॥
ध्रुव चल्लै आकास समद मरजाद सुछंडै।
सतीसंग पति कढ़ै बहुरि घर आय[6] सुमंडै॥
थिर रह्यौ न यह संसार कोइ सुनो साहि साखी सु ध्रुव[7]।
दसकंध धरणि अज्जुन जिसा स्वप्नहिं[8] सम दिक्खंत[9] भुव ॥४१३॥

दोहरा छंद

कलि में अमर जु कोइ[10] नहिं[11], हमम देखि नहिं भूल।
तुम से किते अलावदी, या धरती[12] पर धूलि[13] ॥४१४॥
अपने कौं सूर न गिनै, कायर गिनै न और।
अपनी कीरति आप[14] मुख, यह कहवौ नहिं जोर ॥४१५॥
लिखे लेख करतार कै, हजरति मेटै[15] न कोय।
को जाणै रणथंभ गढ़, अब यह कैसो[16] होय ॥४१६॥

चौपाई छंद

लिखे हमीर साहि सब[17] बंचे।
करि मन कोप जंग कौं नंचे॥
तीन सहस नीसाँन सु बज्जे।
धर अंबर मग[18] सोर सुगज्जे ॥४१७॥
रणतभँवर चहुँ ओर सु पेखि।
दल न समान पुहमि सब हेरि॥

१ छाड़ि। २ राखि। ३ सुरो, करौ अंत्यानुप्रास। ४ चलहि। ५ उग्गहि। ६ आपु। ७ सुनो साखि यह साखि ध्रुव। ८ सुपन। ९ दीखत। १० को। ११ नहीं। १२ धरनी। १३ धूरि। १४ आप। १५ मेटि। १६ साको। १७ सो। १८ मधि।

किन्न निरोध क्रोध करि बुल्लिव।
देखो कुबुधि हमीर सु भुल्लिव ॥४१८॥
जब हमीर हर मंदिर आए।
बहु विधि पूजि सु वचन सुनाए॥
धूप दीप आरती उतारी।
संकर की अस्तुति उच्चारी ॥४१९॥

नाराच छंद

नमामि ईस संकरं, जटी पिनाकयं हरं।
सिवं त्रिसूल पाणियं, विभुं प्रभुं सुजाणियं ॥ ४२० ॥
त्रिनैन अग्गि भालयं, गलै सु मुंडमालयं।
भवानि वाम भागयं, ललाट चंद्र लागयं ॥ ४२१ ॥
धरै सु सीस गंगयं, कपूर गौर अंगय।
भुजंग संग फुंकरैं, सु नीलकंठ हुंकरैं ॥ ४२२ ॥
गनं गणेस सोवुयं, कि वीरभद्र जांवुयं।
प्रसंन्द नाथ वेगयं, करो कृपा सु मे जयं ॥ ४२३ ॥
सहाय नाथ किज्जिए, अभै सुदान दिज्जिए।
अल्लावदीन आययं, मलेच्छ संग ल्यायय ॥ ४२४ ॥
सुलक्ख वीस सातयं, चढ़े सु कुप्पि गातयं।
प्रताप तेज आपकैं, मिटै कुकर्म्म पाप कैं ॥ ४२५ ॥
सरन्न सेव आययं, करो सहाय पायय।
उमा सु नाथ नाथयं, गहो सु मोर हाथयं।
छुटंत लाज गड्डयं, सरन्नपन्न दुड्डयं ॥ ४२६ ॥

---

१ कीन। २ त्रिलोक। ३ अग्नि। ४ गंग। ५ भवा सुवाम भागयं। ६ हरं। ७ भवंग। ८ मलेच्छ वंस भाइयं। ९ कोटि। १० डिड्डयं।

दोहरा छंद

सिव स्वरूप उर धारि कै, मूंदि[1] नयन धरि ध्यांन ।
यह अस्तुति नृप की सुनी, भय प्रसन्न बरदांन ॥ ४२७ ॥
कहैं संभु हम्मीर सुनि, कीरति जुग जुग तोर ।
चौदह वर्ष जु साहि सौं, लरत विघ्न नहिं और ॥ ४२८ ॥
बारै अरु[2] द्वै बरष परि, सुदि अषाढ़ सनि सोइ ।
एकादशी जु पुष्य कौं, साको पूरन होइ ॥ ४२९ ॥
यह साको अरु जस अमर, फबै तोहिं कलि माहिं ।
छत्री को जुग जुग धरम, यह समांन कछु नाहिं ॥ ४३० ॥
हरष सहित[3] हम्मीर तब, ईस चरण दिय सीस ।
तब मंदिर तें निकसि कै, करी जुद्ध कौं रीस ॥ ४३१ ॥
संकर कह्यौ हमीर सौं, सुनहु राव ध्रुव साखि ।
सहस सूर तेरे जहां, परैं मलेच्छ सु लाख[5] ॥ ४३२ ॥

चौपाई छंद

राव हमीर दिवांन कराए ।
मंत्री मित्र बंधु सब आए ॥
सूर वीर रावत भट[6] बंके ।
स्वामि धर्म्म तन मन तिन हंके ॥ ४३३ ॥
काछ वाछ दृढ़ बज्र सरीरं ।
माया मोह न लोभ अधीरं[7] ॥
अमृत बचन सबन तें भक्खै[8] ।
जाचत आपुन प्रांन न रक्खै[10] ॥ ४३४ ॥
नाना[11] बिरद बंदि बिरदावैं ।

---

१ मुंद्दि । २ बारा में । ३ सहीत, सहित्त । ४ आखि । ५ लंख । ६ भड । ७ अभीरं । ८ भाखे । ६ जीव । १० राखे । ११ नाना ।

लक्ख लक्ख[1] के पटा जु पावैं ॥
काको बीर राव रणधीरह ।
कर्यो जुहार राव हम्मीरह ॥४३५॥
आयस होय करव मैं सोई ।
देखो राव हाथ[3] मम जोई ॥
काके कन्ह[4] करी जस आगे ।
कनवज कमध्वज सों रंग[5] पागे ॥४३६॥
कहै हमीर धीर सुनि वानी ।
तुम जु कहो सो मोहिं न छानी ॥
अब गढ़ कोट हमम पुर जेते ।
तुम रच्छक हम जानत तेते ॥४३७॥

दोहरा छंद

मैं दल्लै पतिसाह सों, कही बात करि टेक ।
सो अब चौरं[8] साहि सों, करौं जंग अब एक ॥४३८॥

त्रोटक छंद

चढ़िए करि कोप हमीर मनं ।
करि दिड्ढ सगड्ढ सम्हारि पनं ॥
बहु तोप सुसिद्ध सँवारि धरी ।
बुरजे बुरजैं धर धूम परी ॥४३९॥
बहु कंगुर कंगुर बीर अरे ।
सब द्वारन द्वारन धीर[10] परे ॥
सब ठौरन ठौरन राखि[11] भरं ।
चढ़िए गजपे चहुवान नरं ॥४४०॥

१ लाख लाख । २ देखहु । ३ हथ्थ । ४ कहूँ । ५ रिस पागे ।
६ रच्छक । ७ दल । ८ चौरह । ९ सँवार । १० बीर परे ।
११ रखिय ।

बहु वीर हमीर सुसंग चढ़ै ।
गजराजन ऊपर द्वंद बढ़ै ॥
करि डंबर अंबर सीस लगे ।
मनु सावन धीर सधीर जगे ॥४४१॥
बहु चंचल बाजि करक्त खुरी ।
तिन ऊपर पक्खर सांज परी ॥
नर जाँन जवाँन लसे दल मैं ।
रन मैं उनमत्त लसे बल मैं ॥४४२॥
बहु दुंदुभि बज्जत घोर घनं ।
निकसे तब राव करन्न रनं ॥
बहु बारन बारन वीर कढ़ै ।
गज बाजि सु सिंदन* जान चढ़ै ॥४४३॥
लखि साह सनम्मुख कोप कियं ।
रणथंभ चहूँ दिसि घेर लियं ॥
मिलि राव हमीर सु साहि दलं ।
बिफरे वर वीर करंत हलं ॥४४४॥
सर छुट्टत फुट्टत पार गजं ।
सु मनों अहि पच्छय मध्य रजं ॥
तरवारि बहैं कर पानि बलं ।
धर मध्य धरैं धर हक्क खलं ॥४४५॥
मुख अग्ग बढ़ै रणधीर लरैं ।
तिनसों पतिसाह के वीर अरैं ॥

१ गजं । २ नर धीर मनं दरसं बल मैं । ३ बाजत । ४ पब्बय ।
५ धर सीस परैं सिरहाँक खलं । ६ अग्र ।
* सिंदन = स्यंदन, रथ ।

अजमंत[1] महुम्मद इक्क अली ।
तिन संग असीसु सहस्स चली ॥४४६॥
तिहिं द्वंद अमंद विलंद कियौ ।
रणधीर महा रण झेलि लियौ ॥
करि कोप तबै रणधीर मनं ।
वर बैन कहै पन धारि घनं ॥४४७॥
महिमंद[2] अली मुख आय जुर्‌यौ ।
दुहुँ वीर तहाँ तब जुद्ध कर्‌यौ ॥
अजमंत कमाँन लई कर मैं ।
रणधीर के तीर कह्यौ उर मैं ॥४४८॥
रणधीर सु कोपि के साँगि लई ।
अजमंत के फुटि[3] के पार गई ॥
परियौ अजमंत सु खेत जबै ।
महमंद अली फिरि आय[4] तबै ॥४४९॥
रणधीर सु कोपि के बैन कहै ।
कर देखि अबै मति भुल्लि[5] रहै ॥
किरवाँन सु धीर के अंग दई ।
कटि टोप कछू सिर माँझ[6] भई ॥४५०॥
तब कोप कियौ रणधीर मनं ।
किरवाँन दई महमंद तनं ।
परियौ महमंद अमंद बली ।
तब साहि कि सेन सबै जु हली ॥४५१॥
लुथि[7] लुथ्थि परैं बहु वीर अरैं ।
बहु खंजर पंजर पार करैं ॥

१ अजमत्ति । २ महम्मद्द । ३ फुट्टि । ४ रु । ५ आयौ । ६ भूलि । ७ साहि । ८ लुथि ।

धर सीस परे करि रीस मनं।
कर पाँव कटे बहु कीन पनं ॥४५२॥
यहि भाँति भिरे चहुवाँन वली।
मुरि साह की सेनि सु भग्गि चली¹ ॥
वलष्षी जु परे जु हजार असी।
लखि कालिय अट्ट सु हास हँसी ॥४५३॥
चहुवाँन परे इक जो सहसं।
सुरलोक सचे वर वीर वसं ॥४५४॥

दोहरा छंद

असी सहस वलष्वी परे, महमद अजमत ष्वाँन।
तहाँ राव रणधीर के, परे सहस इक ज्वाँन ॥४५५॥
भज्जी फौज सब साह की, परे सीर दोउ वीर।
करे याद पतिसाह तब, गज्जनि गढ़ के पीर ॥४५६॥

चौपाई छंद

भज्जिय⁵ फौज साह की जवहीं।
फिरो फिरो वानी कह सवहीं ॥
तहाँ साह करि कोप सु वुल्लिव।
समर भुम्मि अव छंडि सुचल्लिव ॥४५७॥
लरवसु ष्वाय भोग करि नाना।
अबे परम प्रिय लागत प्राना ॥
ननर बिमुष्व तैं जानव जोई।
हनूं⁷ आप कर तजौं न सोई ॥४५८॥
सुने साह के कोप⁸ सु बैनं।
फिरिय सेन इम मंत्र सु ऐनं ॥

१ हली। २ हजार। ३ भगी। ४ जब। ५ भागी, भाजी। ६ लस्कर। ७ हनो। ८ कोपि। ९ फिरी सेन इक मत सु ऐनं।

बगतर पक्खर टोप सु सज्जिय।
जुरे जंग बहु मीर सु गज्जिय॥४५९॥

दोहरा छंद

बादित[1] खाँ पतिस्याह सों, करी सलाम सु आय।
हजरत देखहु हाथ[2] मम, कैसी करूँ[3] बनाय॥४६०॥

पद्धरी छंद

करि[4] कोप बादित खाँ जुरे जंग।
मनों प्रलै पावक उठै अंग॥
गुंजत निसाँन फहरात धुज्ज।
जुटि जिरह टोप तन नैन सज्ज॥४६१॥
किए[5] हुक्म साह तन मे रिसाइ।
कीन्हो सु जंग फिर बीर आइ[6]॥
छूटंत तोप मनु वज्रपात।
जल सुक्कि धरा छुटि गर्भ जात॥४६२॥
बहु बाँन चलत[7] दोउ ओर घोर।
अरराति[8] अमित मच्यो महा सोर॥
भए अंध धुंध सुज्झै न हथ्थ।
वीर चहुवाँन तहाँ[9] करि अकथ्थ॥४६३॥
रणधीर उतै बादत्ति खाँन।
बजरंग अंग जुट्टे सुयाँन॥
हज्जार वीस बादित्य साथ[10]।
सब जुरे आय रणधीर हाथ[11]॥४६४॥

१ बदिनार्वा। २ पिक्ख बहु। ३ हथ्थ। ४ करा। ५ करि कोप जुर, जुरिय, जुरयउ, जुरिग आदित्य जंग। ६ जुटि जिरह जिरे तहँ नैन सुज्झ। ७ किय। ८ सहनाय भेरि बज्जे तबल्ल। बहु वोर (चहुँ ओर) सोर कै करत हल्ल। ९ छुट्टंत। १० छुट्टि दुहुँ। ११ अरांत (?) अमित मच्यो नु सोर। १२ जुज्झ कीनों। १३ सत्थ। १४ हत्थ

वज्जंत सार गज्जंत अब्भ ।
रणधीर सथ्थ आये स सब्भ[1] ॥
करि क्रोध जोध वाहंत सार ।
टूटंत[2] अंग फूटंत[3] पार ॥४३५॥
करि खेल सेल दोउ और वीर ।
वाहंत वीर किरवाँन धीर ॥
हज्जार वीस वावत्त साह[6] ।
धर परे वीर करि अकथ गाह ॥४३६॥
रणधीर मीर दोउ भिरे आइ ।
वावत्त गहि गुर्ज तब रोस वाइ ॥
लग्गी सुढाल भू टूटि[7] ताँम ।
फिर[8] दई सीस किरवाँन ठाँम ॥४३७॥
लग्गी सु सीस धर पर्यौ जाय ।
दुइ टुक्क होय भुमि[10] अद्ध काय ॥४३८॥

दोहरा छंद

भयौ सोच जिय साह के, जीतिय[11] जंग हमीर ।
वादित खाँ से रन परे, वीस हजार सु वीर ॥४३९॥
सहरम खाँ कर जोरि के, करे अर्ज तिहिं वार ।
ले कर सेख हमीर अब.किसो(?)मिल्यौ यहिं वार ॥४४०॥
गही तेग तुम सौं अवै[12], हठ नहिं तजै हमीर ।
सेख देय मिल्ले नहीं, पन सच्चो[13] वर वीर ॥४४१॥

---

१ सब्ब । २ टुट्टंत । ३ फुट्टंत । ४ दुहुँ । ५ साथ सत्थ । ६ गाथ, गत्थ । ७ तुट्टि, फुट्टि । ८ फिरि धीर दई । ९ टुक । १० भुमि । ११ जित्यौ, जित्यउ, जीत्यौ । १२ तबै । १३ साँचो ।

छप्पय छंद

कर कुराँन गहि साह सीस साहिब को नायो¹ ।
गढ़ दिस दल चहुँ ओर घेरि रज अंबर छायो ॥
देखि अलावदि साह कहै दल बहल भारी ।
अब हमीर की अदलि आय पहोंचीह मुरारी² ॥
महरम्म खाँन इम उच्चरै अदलि हाथ³ साहिब तनै ।
होनहार⁵ ह्वैहै अबै को जानै कैसी बनै ॥४७२॥

दोहरा छंद

हजरति अपनै इष्ट पर, पावक जरत पतंग ।
यह हमीर कबहुँ न तजै, सेख टेक रणथंभ ॥४७३॥
साह दसों दिसि जित्ति कै, अब आए⁷ रणथंभ ।
कहै⁸ राव रणधीर सों, जुरो सूर रण रंग ॥४७४॥
आपन धर्म न छंडिए, कहै बात¹⁰ रणधीर ।
निसि बासर अब साह सों, किज्जिय जंग हमीर ॥४७५॥

छप्पय छंद

को कायर को सूर सीस¹²बिन दृष्टि¹³ न आवै ।
बिन सूरज की साखि सार छत्री न समावै ॥
बीर गिद्ध¹³ अरु संभु सकल पलहारी जेते ।
धर पर धरै न पाँव रैन मैं दिनचर जेते ॥
इम कहै राव रणधीर सों मैं अधर्म्म नाहिन¹⁵ कहूँ ।
अब अलावदी साह सों रैन मार कबहुँ न गहूँ ॥४७६॥

१ नाये । २ देसल । ३ अदलि रही चँद रोज मुरारी । ४ हत्थ । ५ का होनहार । ६ गढ़ जग । ७ आइय । ८ कहै राव हम्मीर नैं धीर जुड़न रणथंभ । ९ अपणो । १० बत्त । ११ दिवस । १२ सिस्र । १३ गृद्ध । १४ तेते । १५ नहींन ।

दोहरा छंद

काटी घाटी साह कै, माटी मिलत अमीर।
रच जंग दिन मैं करै, गाति लड़ै रनधीर ॥५७७॥
तारागढ़ कै पीर कौं, करै याद पतसाह।
रतनभवर की फते दे, कदमूं आऊं चाह ॥५७८॥

छप्पय छंद

जबहीं मीरा सयद साह की मदत पठाए।
सिर उतारि कर लिये गाव परि सम्मुख धाए॥
जब हमीर की भीर च्यारि सुर सुद्ध सु आए।
... ...॥
गनानाथ संभु दिनकर अवर छेत्रपाल मन रज्जिए।
रनथंभ खेत दुहूं ओर सों वीर पीर दुव सज्जिए ॥५७९॥

छंद भुजंगप्रयात

लरै नो सयद्दं रणथ्थंभ देवा।
करै क्रोध भारी पिलै हर्ष भेवा॥
गरज्जंत घोरंत आतंक भारी।
घनं घोर वर्षंत वर्षा करारी ॥५८०॥
कभू हल्लवै भुम्मि गज्जंत वीरं।
कभू घोर अंधार वर्षंत पीरं॥
गणन्नाथ हथ्थं लिये तिच्छि फर्सी।
पिनाकी पिनाकं किये आप दर्सी ॥५८१॥
धरे मुद्गरं हथ्थ भैरव अमानो।
इमं देव जुट्टे सु कट्टे अमानो॥
इनैं पीर हजरत्त के सथ्थ पिल्लै।
अवद्दल्ल एकं हुसैनं सुमिल्लै ॥५८२॥

१ विजय। २ रंजिए। ३ सयद रणथम्भ। ४ गर्जत, गज्जत;
५ वार। ६ हाथ। ७ साथ। ८ इक्क।

रहीमं सयदं सुलत्तॉन जक्की ।
अहमद कानीर मूलं सु मक्की ॥
इतें बीर जुट्टे सु कट्टे पुराँनं ।
भयौ जुद्ध भारी सु भूले कुराँनं ॥४८३॥
परे खेत नो सेद दट्ठे धरन्नी ।
हँसे संकरं भैरवं की करन्नी ॥
परे पीर यूं नो रसूलं सु अल्ली ।
परयौ पीर दूजो कुतब्बं सु चल्ली ॥४८४॥
परयौ जो हुसैनं करयौ जुज्झ भारी ।
परे हरि हिम्मति अल्ली सुधारी ॥
सयदं सुलत्तॉन आयौ जु मक्का ।
अदल्ली परे और तुर्क्की सु बंका ॥४८५॥
परयौ दूसरो जो रसूलं सु खेतं ।
तबै बादस्याह भयौ सो अचेतं ॥
परे मीर नो सेद जानंत साहं ।
लरे अट्ठ वीरं हटै चैन काहं ॥४८६॥
अजंमत्त भारी हमीरं सु जानी ।
तबै कुच्च किन्नौ दुरै छाड़ि कानी ॥
उलट्टे परे जाय किन्नौ दिवाँनं ।
जुरे खाँन जेते सु तेते अमाँनं ॥४८७॥
वजीरं अमीरं सबै खाँन बुल्ले ।
सबै बात मंत्रं सु मंत्री सु खुल्ले ॥४८८॥

दोहरा छंद

मरहम खाँ उज्जीर तब, अरज करी सब खोलि ।
लख बलखी उमराव तो, सदके भए हरोल ॥४८९॥

१ भुल्ले । २ सयद, सद । ३ जुद्ध । ४ खुल्लि ।

अरु बकमी के बचन सुनि, साह कियौ अति सोच ।
निबही राव हमीर की, गिनौ हमैं सब पोच ॥४९०॥
महिमा साह हमीर गढ़, ये तीनों साबूत ।
बाजी रही हमीर की, मैं कायर जु कपूत ॥४९१॥

छप्पय छंद

महरम खाँ कर जोरि साह कौं ऐसे भाख्यौ ।
इक हिकमत तुम करौ नीक जानो तो राखौ ॥
महल छाड़ि करि फते बहुरि गढ़ सौं जुध किज्जिय ।
तोरि छाड़ि रणधीर मारि कै पकरि सु लिज्जिय ॥
आतंक संक गढ़ मै परै मिलै राव हठ छंडि कै ।
गहि सेन देय मिलि सुत्तवै करौ कुच जब उलटि कै ॥४९२॥

चौपाई छंद

कहै साह महरम खाँ सुनियो ।
यह मत खूब किया तुम गुनियो ॥
छाड़ि दरा कौ प्रथम दिली जे ।
चंद रोज महँ फतह जु कीजे ॥४९३॥

दोहरा छंद

मरहम खाँ पतसाह को, हुकम पाय तिहिं बार ।
सकल सेन तजबीज करि, घेरो छाड़ि हँकार ॥४९४॥

छंद बियक्खरी

कोप पतिसाह गढ़ छाड़ि लग्गे ।
सहस सब तीन नीसाँन बग्गे ॥

१ कियब । २ सोच । ३ तीन्यूं, टाऊ । ४ कातर । ५ तबै हजरति सो भाख्यौ । ६ रक्खौ भक्ख्यौ, रक्ख्यौ अंत्यानुप्रास । ७ पहल पहलै । ८ जंग कीजे । ९ लीजे । १० छाड़ि । ११ सुनिए, गुनिए अंत्यानुप्रास । १२ दिलिज्जिय । १३ किज्जिय । १४ तीन सहस नीसान दल साहि बग्गे ।

सहस[1] दस सात आरब्ब छुट्टै।
गरज गिरि मेरु पाषाण फुट्टै ॥४९५॥
उठत गुब्बार महि तोप लज्जौं।
गए वन छंडि मृग सिंह भग्गे ॥
लक्ख[3] पच्चीस दल और फेर्यौ।
यह भाँति पतिसाह गढ़ छाड़ि[2] घेर्यौ ॥४९६॥
कहै पतिसाह नहिं चिलम[4] किज्जे।
चंद दिन[5] बीचि गढ़ छाड़ि लिज्जे ॥
कहै रणधीर मन धीर धरिए।
आय चहुआण सफजंग[7] करिए ॥४९७॥
निस्सांन[8] सों सद[9] सुंदर सुवज्जै।
राव रणधीर आयुद्ध[10] सज्जै ॥
वीर रस[11] राग सिंधू स[12] बज्जै।
सहस इकतीस दल संग लिज्जै[13] ॥४९८॥
सहस दस सूर कुल तेग[14] खेलै[15]।
आप जिय रक्खि परमाल[16] पेल्लै[17] ॥
यह[18] भाँति रणधीर चौगाँन आए।
गरद उड़ि जमीं असमाँन छाए ॥४९९॥
अबदुल्ल[19] कीरम्म[20] पतिसाह दिल्लै[21]।
मीर रणधीर चौगाँन खिल्लै ॥

१ दो सहस आरबौं तेज छुट्टै। २ छाड़ि। ३ लाख। ४ बिलम्ब (विलंब)। ५ रोज। ६ चौगाँन। ७ सफरजंग। ८ नीशाण सों साज सुर सद्द गज्जै। ९ सद्द। १० आबद्ध। ११ रस। १२ सिंधूल। १३ लज्जै। १४ तत्थ। १५ खिल्लै। १६ परंमार। १७ चिल्लै। १८ इस। १९ अबदुल, अबदुल्ल। २० करीम, कर्रीम। २१ पेलै।

वहै बाँन किरवाँन[1] औ चक्क[2] चल्लैं ।
रणधीर कह सूर तुम होहु भल्लैं ॥५००॥

साह सों सूर संमुक्ख जुरिए ।
हबस के मीर दस सहस परिए ॥
टुट्टि[3] सिर मीर धड़ पहुमि[4] लक्खै ।
पंच सत सूर उड़ि गिद्ध[5] भक्खै ॥५०१॥

राव रणधीर अप्पन[6] सिधारे ।
अबदुल्ल[7] कीरंम खाँ पुहमि पारे ॥
साह रणधीर सफजंग[8] जुरिए ।
साह दल उलटि दो कोस परिए ॥५०२॥

कहै रणधीर नहिं विलम किज्जै[9] ।
बीति चंद राज गढ़ छाड़ि लिज्जै[10] ॥
गढ़ कोटहू भाँति[11] नहिं हत्थि[12] आवै ।
यू ही[13] पतिसाह दल क्यों खिसावै ॥५०३॥

दोहरा छंद

वर्ष पंच[14] गढ़ छाड़ि को, नहिं संचत पतिसाह ।
द्वादस वर्ष रणथंभ सों, निधरक लरि अब[15] साह ॥५०४॥

छप्पय छंद

धनि सु राव रणधीर साह मुख आप सराहै ।
सुभट दिसि सम्मुख आय कोप करि सार समाहै ॥

१ कैवार । २ चक्क । ३ टूटि । ४ पोहम । ५ गिरध, गिर्ज । ६ आपन । ७ अबदुलकरीम खाँ पोहुमि पारे । ८ सपरजंग । ९ कीजे । १० लीजे । ११ कबहूँ । १२ हाथि । १३ कोपि । १४ पाँच । १५ पति ।

साह वचन इम कहे मीर महम्म ख्वाँ सुनिजे[1] ।
जीति[2] जंग रणधीर धन्य वह राव सुभनिजे ॥
पतसाह राडि सफजंग[3] की मनै किरय आपन सबै ।
चहुँ ओर जोर उमराव सब किये मोरचा दृढ़ अबै ॥४०४॥
जबै राव रणधीर कहै हम्मीर सुणिज्जे[7] ।
सबै[8] हिंद को साथ बोलि रणथंभ सुलिज्जे[10] ॥
लिखि फर्मानहू[11] राव बंस छत्तीस बुलाए ।
जुरे जंग चौगान उमंग दल बद्दल छाए ॥
कर जोरि सबै हाजिर भए[12] राव वचन या[13] विधि कहै ।
तैं गही तेग पतिसाह[14] सों घरि जाहु जोन जीवो चहै ॥४०६॥
कह काको रणधीर राव सुन वचन हमारे ।
अबै छंडि[15] कित जाहि[16] खाय करि निमक तिहारे ॥
अलीदीन सौं जुद्ध छंडि गढ़ चोरे मंडों ।
जिती साहि की सेन मारि खग खंड विहंडों ॥
चाहू[17] सुनीर या बंस को अकथ गथ्थ[18] ऐसी करूं ।
रचि लोक भेदि भेटूं सुभट अप्प[19] सीस हर हिय धरूं ॥४०७॥

दोहरा छंद

कहै राव हम्मीर सों, मंत्रि एक[20] रणधीर ।
जमीति गढ़ चित्तौर की, अजहू[21] न आइय[22] बीर ॥४०८॥
लिखि फर्मान हमीर तब, पठए गढ़ चित्तौर ।
वांच[23] ख्वाँन बल्हन[24] कुंमर, हर्प[25] कीन नहि थोर ॥४०९॥

१ सुनिए । २ जित्ति । ३ सफरजंग । ४ अप्पन । ५ सबै । ६ उमरराव । ७ सुणीजे । ८ सबै । ९ राणा । १० लोजे । ११ फुरमाना । १२ अहे । १३ इम । १४ हजरत्ति । १५ छाड़ि । १६ जापे । १७ चाट्टू । १८ गाथ । १९ आप । २० इक । २१ अजों । २२ आए । २३ बाँचि । २४ बाल्हन । २५ हर्ष न किन्नयउ ।

चौपाई छंद

हर्प उभै कुमर चौहांनं ।
चतुरंग कै तुरंग सजि आंनं ॥
सोला सहस चमू सजि सारी ।
सजे खाँन बल्हन[1] सी भारी ॥५१०॥
सहस तीन[2] कमध्वज्ज सु जानो ।
सहस अट्ठ[3] चहुवाँन बखानो ॥
सहस पंच पम्मार अमानैं ।
सोला सहस सजे करिवानैं[5] ॥५११॥

मोतीदाम छंद

मिलै तव आय कुमार सु दोय ।
हमीर सुचाव कियौ वहु जोय ॥
बढ्यौ हिय हर्प दुहूँ उर सोय ।
कहै तव वैन सु राव सु होय ॥५१२॥
कियौ सनमाँन सुराव अपार ।
मिलंत कुंवार[8] दयौ सिर भार ॥
रख्यौ तुम सेव भए जग धन्य ।
रहै नहिं कोय सदा जग अन्य ॥५१३॥
रहै जग कित्तिय नित्ति अभंग ।
सदा यह देह कहैं[10] छिनभंग ।
जितै हम सेवक ज्यों अब ठड्ढ[11] ।
रहो निहचित्त[12] अभै यह गड्ढ[13] ॥५१४॥
करै हम जंग लखो अब हथ्थ ।

१ बाल्हन । २ तीस । ३ आठ । ४ पँव्वारन आनो । ५ किरवानो । ६ दहूँ । ७ कियौ सु जुहार मिले वर दोय । ८ कुँमार । ९ कीरति । १० नहीं । ११ अवटल्ल । १२ रहै निश्चिंत । १३ गल्ल ।

उठे दुहुँ बीर कही यह गथ्थ ॥
चढ़े चतुरंग कियो तन कोप ।
मनों अरुनोदय भाँन सु आप[1] ॥५१५॥
बजे रणतूर सु भेरि रवद्द ।
भए पद गोमुख वीर सु सद्द ॥
चढ़े कुँवरेस तबै चतुरंग ।
बढ्यो हिय हर्ष करै रणरंग ॥५१६॥
कहै तब खाँन सु बाल्हन सीह ।
करे सफजंग अबैदल[2] वीह ॥
रतन्न कुमार रखो गढ़ ओर ।
नरव्वल ग्वालिर और चितोर[3] ॥५१७॥
नठे तब अन्न करो सफजंग ।
तजो मति टेक लरो[4] अनभंग ॥
असो सुनि बैन हमीर सुभाय ।
भरे[5] जल नैन रहे मुरझाय ॥५१८॥
कही[6] तब कोर नहीं थिर काय ।
चले गिर मेरु नहीं थिर थाय ॥
मिले सुरलोक ससोक सकौन ।
सुनो यह राव रहे गहि मौन ॥५१९॥
गए रणवास जहाँ दोउ[7] वीर ।
कियो परणाम जुहार सुधीर ॥
सबै[8] रणवास भरे जल नैन ।
कही तदि आसमती यह बैन ॥५२०॥
करो तुम[9] उच्छह है यह वार ।

१ चढ़ें तन नूर बढ़ें मुख ओर । २ अबहल । ३ औ चित्तोर ।
४ लगे जु अभंग । ५ टरे । ६ कहे । ७ दुव । ८ सबै । ९ कहे । १० बहु ।

कहै तदि[1] बैन हँसे जु कुमार ॥
धरो तुम सीस हमारे जु[2] मोर ।
लरै[4] सिर सेहर बाधि[3] सजोर ॥५२१॥
बँध्यो तब मोर कुमारन सीस ।
दई बहु भाँतिन आस असीस ॥
कियो बहु हर्ष कुमार अपार ।
गए हर मंदिर सो तिहि बार ॥५२२॥
गनेसुर संकर पूजि[5] सुभाय[6] ।
करे बहु ध्याँन गहे जब[7] पाय[8] ॥
चढ़े बरबीर बढ्यो हिय चाव ।
बजे बहु बाजि निसाँनन घाव[9][10] ॥५२३॥
गजे असमाँन धरा हुव भाय[11] ।
गजे[12] घनघोर घटा मनु छाय[13] ॥
तुरंग अनेक सुफेरत सूर ।
बनी तिन उप्पर पक्खर पूर ॥५२४॥
झलक्कत नूर चमक्कत सेल ।
चढ़े मुख ओप[14] बढ़े मुख मेल ॥
उड़े[15] रज अंबर सुज्झ न भाँन ।
हसे हर देखत[16] छुट्टिय ध्याँन ॥५२५॥
चली संग अच्छरि जुग्गनि ताँम ।
मिली बहु पंखनि[17] गिद्धनि जाँम ॥
मिले बहु भूचर खेचर क्रूर ।
चले पल चारिय भूत सुभूर ॥५२६॥

१ तब । २ सु । ३ बंधि । ४ मोर । ५ पुजि । ६ सुभाइ । ७ तब । ८ पाइ । ९ बादि । १० हाव । ११ भाइ । १२ गज । १३ छाइ । १४ नूर । १५ उठी । १६ दिक्खत, पिक्खत । १७ पक्खनि ।

करे सु जुहार हमीरहिं ध्याय[1] ।
करो यह बात[2] परस्सि[3] सुपाय ॥
मिले भव आनि[4] सुनो चहुवाँन ।
करे कल रीति तजै नहिं बाँन ॥५२७॥
तजो[5] धन धाँम रु[6] लोभ सु मोह ।
धरो[7] मनु टेक मरन्न सुजोह ॥
इतो कहि सीस नवाय हमीर ।
कियो रणथंभहिं वंदन[8] धीर ॥५२८॥
चले[9] सन्मुक्ख उभै कुमरेस ।
सजे चतुरंग तनय करि रेस ॥
जहाँ पतिसाह अलावदि ओर ।
चलो बर वीरति[10] बाँधि[11] सुमोर ॥५२९॥

दोहरा छंद

करि असुवारी कुमर दोउ, उतरे पौलि सु छाण ।
डेरा करे उछाहजुत, वजि नोवति नीसाण[12] ॥५३०॥
सुणि नोवति के नाद[13] तव, वहु उछाह गढ़ जाँन ।
तब अलावदी हसम दिसि, चाहत भयो निधाँ (दा)न ॥५३१॥
बोलि खाँन सुलताँन तव[14], मसलति करी जु[15] साहि ।
गढ़ में कहा उछाह अति, कहा (कौन) सबब यह आहि ॥५३२॥
है यह राव हमीर के, लघु भय्या[16] के पूत ।
लग्न काज[17] इन सेहरो, सिर बाँध्यौ[18] मजवूत ॥५३३॥
भइय संक पतिसाह उर[19], कीनो[20] बहुत विचार ।

१ करे जहाँ राव हमीरहिं ध्याम (धाम) । २ बत्त । ३ परिस । ४ मिलै भव आन । ५ तजै । ६ रु । ७ धरै । ८ चंदन । ९ चलै, चढ़े । १० वीरसु । ११ बंधि । १२ अप्रमाण । १३ नद्द । १४ सव । १५ सु । १६ भ्राता । १७ कज । १८ बंध्यौ । १९ अति । २० किन्नौ ।

जो न सिंह के मुख चढ़े, सो झिल्लै इन सार ॥५३४॥

चौपाई छंद

कहै वजीर साह सुनि बत्तं।
मीर अरब्बिय[1] जानि सु तत्तं॥
मर्कट बदन सूकर सम[2] कानं।
द्रग मंजार बसू खल जानं ॥५३५॥
तुम[3] सांमत प्रथिराज सु अग्गै।
गढ़ गज्जनि आए गहि खग्गै॥
तुमहिं दिल्ली के तख्त बसाए।
गोरीसा के भए सहाए ॥५३६॥
वै[4] दोउ कुमर पकरि अब लावें।
सन्मुख होइ तो मारि गिरावें[5]।
सुनि वजीर के वचन सुहाए।
मीर जमालखाँन बुलवाए[6] ॥५३७॥
कहै साह सुनि मीर जमालं।
है यह काम तुम्हारे हालं॥
आगे[7] तुम गहियो प्रथिराजं।
त्यों[8] तुम गहो कुमर दोउ आजं॥५३८॥

छप्पय छंद

सुणि जमाल खाँ मीर हथ्थ[9] धरि मुच्छ सँवारिय[10]।
पाव परसि कर जोरि कवन बड़ काज[11] निहारिय[12]॥

१ आरबी। २ मुख। ३ मुक्कर इव। ४ द्रगमजार बपुष (क) खल जानं (जानहु)। ५ तिहिं सामत। ६ गजनी लाये। ७ बसाये, बैठाये। ८ वे दुव कुँमर पकरि गहि ल्याऊँ। ९ तोयसो। १० गिराऊँ। ११ बुलाए। १२ अग्गै। १३ तिम। १४ हाथ। १५ सकारिय। १६ कज्ज। १७ निकारिय।

जौ आयुस अनुसरौं सकल हिंदुव गहि लाऊँ।
सम्मुख गहैं जुमार मारि तिहिं धूरि मिलाऊँ॥
इम कहि सलाम कीनी तुरत सज्जि सथ्थ सब आपबल।
सजि कवच टोप कर खग्ग गहि उभै ओर किन्निय सुहल ॥५३९॥

भुजंगप्रयात छंद

इतै कुमर चत्रंग के जंग जुट्टे।
उतै मीर आरब्ब के वीर छुट्टे॥
दुहूँ ओर घोरं निसानं सु वज्जं।
मनो पावसं मेघ घोरं सु गज्जं॥५४०॥
दुहूँ ओर खंडं प्रचंडं सुभारी।
छुटै नाल गोला वदूकं सुभारी॥
भयो सोर घोरं धुँवा घोर घोरं।
गई सुद्धि सुज्झै नहीं नैन ओरं॥५४१॥
करैं सेल खेलं महावीर वंके।
फुटैं अंग अंगं करैं दोय हंके॥
वहैं तेग अंगं करैं टुक्क दोई।
हँसी कालिका देखि कौतुक्क सोई॥५४२॥
वहैं जम्म दड्ढं करैं वाहु जोरं।
कढ़ै अंत अंतं कहूँ सीस तोरं॥
कहूँ हथ्थ मथ्थं परे वीर वंके।
उठैं रुंड मुंडं करैं जोर हंके॥५४३॥

---

१ गहूँ। २ यह। ३ किन्नी। ४ सज। ५ सह। ६ वज्जे सुवीर सिदुर, (सिंधुर) चढन उभै ओर किन्निय (कीनी, कीन्ही) सुलह। ७ कोर। ८ चतुरग। ९ मही। १० टूक। ११ टोऊ। १२ दिक्खि, पिक्खि। १३ सोऊ। १४ चहैं। १५ गहैं। १६ अतं। १७ चक्के। १८ हक्के।

उतै मीर जम्मील ध्यायौ हँकारं।
 इतै खाँन धायौ भिरयौ इक्क वारं॥
उतै मीर तीरं चलायौ हँकारी।
 लग्यौ बाजि कै सो भयौ वारि पारी॥४४४॥
परयौ खाँन को बाजि फुट्टी सु अंगं।
 चढ़े और बाजी करयौ फेरि जंगं॥
दई खाँन जम्मील कै अंग बच्छी।
 परयौ भुम्मि मीरं सुतो आय मुच्छी॥४४५॥
दोउ सेन देखै भिरे बीर दोई।
 भए लथ्थ बथ्थं कुमारं सु सोई॥
परयौ जोर भारी कुमारं सु जान्यौ।
 तबै राव हम्मीर उप्पर सुठान्यौ॥४४६॥
लियो बोलि संखोदरं सूर सोऊ।
 करौ ऊपरं जाय कुम्मार दोऊ॥
महावीर अज्ञान बालख्खु (बालक) सूरं।
 महायुद्ध जानै इतो बे करूरं॥४४७॥
चले सूर संखोदरं खेत आए।
 उतै आरबीसेन द्वै लक्ख धाए॥
उड़ै बाँन गोला गजं बाजि फुट्टै।
 बहै बाँन कम्माँन ज्यौं मेघ बुट्टै॥४४८॥
धरैं आयुधं बीर सों बीर बुल्लै।
 परें सीस भू मैं किती सीस झल्लैं॥

---

१ एक। २ फुट्यो। ३ जम्माल। ४ सोई। ५ उप्परं। ६ सोई। ७ महावीर अज्ञान बाहू लघु सुसूरं। ८ कहा। ९ सेख। १० दोउ, है (अश्व)। ११ फूटैं। १२ झरैं। १३ आवच्च। १४ भुम्मी। १५ किती धूम झल्लैं।

कहै खाँन कुम्मार बैनं हँकारी।
सुनो सर्व सथ्थं करो जुद्ध भारी ॥५४९॥
रहै नाँम लोकं महा मुक्ति मिल्लै।
रहै नाहिं कोई सदा आय भिल्लै॥
चलाए गजं कोपि कुम्मार सोई।
उतै आरबी मीर जम्माल होई ॥५५०॥
तबै वीर वालन्नसी कोप किन्नौ।
महा तेग जम्माल कै मथ्थ (सीस) दिन्नौ॥
कट्यौ टोप आपं लगी जाय मथ्थं।
तबै मीर वालन्न भय लुथ्थ बथ्थं ॥५५१॥
कटारं कुमारं चलायौं सु भारी।
पर्यौ मीर जम्मील भू मैं सु थारी॥
तबै सथ्थ जम्माल की कोपि धायौ।
तहाँ वालन्नं मारि धरनी गिरायौ ॥५५२॥
तबै खाँन कुम्मार धायौ रिसाई।
घनी सेन आरब्ब धरनी मिलाई॥
तबै वीर संखोदरं जंग कीनौ।
किते आरबी खेत पार्यौ नवीनौ ॥५५३॥
किते सेल खेलं करै वार पारं।
भभक्कै घटै घाव छुट्टै पनारं॥
वहै तेग वेगं परे सीस भारी।
उड़ै घोर रुंडं परै मुंड कारी ॥५५४॥

१ आप। २ कुप्पि। ३ जम्मीर। ४ तबै तेग (खग्ग) जम्मील कै अंग दीनों। ५ लगायौ। ६ भुम्मिः। ७ भागी। ८ कुप्पि, जम्मील को देखि। ९ मिलायौ। १० भाये। ११ गिराई। १२ जुद्ध। १३ परो।

परे दोय कुम्मार किन्नी अकथ्थं।
बरी अच्छरी सूर लोकं सु मथ्थं॥
परे मीर आरब्ब के पान लक्खं।
तहाँ हिंदु की भीर सोरा सुभक्खं॥५५५॥
परे दो कुमारं महावीर बंके।
परे एक संग्रोदरं कीन हंके॥
तहाँ आठ हज्जार चहुवाँन जोनं।
परे तीन हज्जार कमध्वज्ज मोनं॥५५६॥
पंमारं परे पाँच हज्जार सोई।
परे बीर सोला सहस्रं सु जोई॥
परे स्वामि के कज्ज कुम्मार दोई।
सुनी राव हम्मीर जीते सु सोई॥
भजे आरबी ज्यों बचे जंग तेयं।
कहै साह देखो सु हिंदू अजेयं॥५५७॥

दोहरा छंद

परे सहस सत्तरि तहाँ, मीर अरब्बिय संग।
हय गय पाँच हजार परि, सत जमाल से अंग॥५५८॥

छप्पय छंद

तब सु राव रणधीर साहि पै तेग समाही।

---

१ कीर्नी। २ सोरा सुमत्थं। ३ इक्क। ४ किन्न। ५ अट्ठ।
६ ज्वॉनं। ७ राठ्ठौर, रट्ठौर। ८ पंच। ९ कॉम। १० रहे। ११ आरबी।
१२ तहाँ परे सोरह सहस दुहूँ कुँवर के सत्थ।
बरी इते तहँ अप्छरा (अच्छरी) धरे हार हर मत्थ॥
पाँच बरस गढ़ छाड़ि के लरे राव रणधीर।
तब अलावदी कोपि के कहे बचन तजि नीर॥
१३ साहि सों।

समो सु पहोंच्यौ आय सु तो मिट्टै नहिं काही ॥
चढ़े खेत रणधीर साहि दोनूं चतराए ।
तजै न हठ हम्मीर कहा जो तुम सत आए ॥
रणधीर राव इम उच्चरै समुझि साहि चित लिज्जिए ।
गढ़ रणथंभ हमीर को हजरति हट्ठ न किज्जिए ॥४७९॥
कहै साहि रणधीर राव को किन समझावो ।
करो राज रणथंभ सेख को कदमौं लावो ॥
होनहार सो भई मिटै मेटी न मिटाई ।
घटै हटै हठ राव तबै हमरी पतिसाई ॥
नहि तजै राव हठ मैं तजौं कौन साह मो सौं कहै ।
यह प्रगट बत्त संसार महिं भिरै दोय एकै रहै ॥४८०॥
कहै राव पतिसाह सुणो रणधीर अमानो ।
इतो राज तुम करो जितो हम सौं नहिं छानो ॥
ये गढ़ च्यारि सु धीर हुकुम किसकै तुम पाए ।
कबहुँक फिरै रकेब सीस कबहूँ नहिं नाए ॥
गिरि सूरज पलटै पहुमि कोटि (रि) वचन कहै कोय ।
सेख छाड़ि उलटो फिरै यह कबहूँ नहिं होय ॥४८१॥

दोहरा छंद

चढ़े साहि दल विपुल जब, छेकिय गढ़ रणधीर ।
तब चहुवाँन रिसाय कै, संमुख जुड़े सु वीर ॥४८२॥

---

१ संमत । २ दोउ । ३ चतराए । ४ सेख गहि कदमु लाग्रो ।
५ नन तजै । ६ कै सहाय मोसों (हमसन) । ७ बात । ८ मारी मही ।
९ इकै । १० यह । ११ कबहुँन । १२ ननवाए । १३ कोऊ कहो ।
१४ सेख छंडि उलटौ फिरौं तौ मोहि साहि जग को कहो । १५ छिकिव ।
१६ जुट्टिग, जुट्टिय ।

छंद त्रोटक

रणधीर चढ़े करि कोप मन ।
सब सामंत सूर सजे अपनं ॥
गजराजन उप्पर डंबरयं ।
उछले लगि बीर सु अंबरयं ॥५६३॥
बहु चंचल बाजि सु बग्ग लियं ।
किय अग्ग सु पैदल लाग कियं ॥
गढ़ तें बहु भाँति सु तोप चली ।
पतिसाह समेत सु कोप चली ॥५६४॥
रणधीर सु बंधन दुग्ग कियं ।
करि मंगल विप्रन दान दियं ॥
रवि को परणाम सु कीन तबे ।
कर जोरि सु आयसु मांगि जबे ॥५६५॥
अरु राव हमीर जुहार कियं ।
हर्षे चहुवाँन सु मोद हियं ॥
बहु दुंदभि ढोल सुभेरि बजे ।
कसि आयुध सायुध बीर सजे ॥५६६॥
हलका करि बीर बढ़े दल पै ।
मनु राघव कोपि कियौ खल पै ॥
उन साहि हुकम्म कियौ रिस मैं ।
सब सेन जु आय जुरयौ छिन मैं ॥५६७॥
बिफरे सब बीर सुधीर मनं ।
सब स्वामि सु धम्म सु कीन पनं ॥

---

१ उससे । २ बाग । ३ अग्र । ४ भाँतिन । ५ पतिसाहि सुसेन सुक्रम चली । ६ बदन । ७ दुर्ग । ८ किन्न । ९ मंगि । १० बरखे । ११ दियं, जिय । १२ मैं । १३ पल मैं । १४ जुरयौ निस मैं । १५ किन्न ।

दुहुँ ओर सु तोप सु कोप[1] छुटे।
गढ़ कोट न रुंधत पार फुटे ॥४३८॥
बरषे धर आगि[2] सु धूम उठा।
झर अंबर भुम्मि कराल वुठा ॥
बहु गोलन गोलन गोल परे।
गजराजन सों गजराज जुरे[3] ॥४३९॥
हय सों हय पयदल पयदल सों।
जुरे[4] बहु जोध महाबल सों[5] ॥
बहु बाँन दुहूँ दल मांझ परें।
धर सीस कहूँ कर पाँव झरें ॥४४०॥
बहु सोर अँधार सु घोर भयो।
निसि बासर काहु न जानि[6] लयो ॥
कर कुंडिय[7] बीर कमाँन कसें[8]।
गज बाजिन फुट्टत पार लसें[9] ॥४४१॥
बरषें मनु पावस बुंद अयं।
बहु फुट्टन पक्खर कंगलयं ॥
तहँ लागत[10] सेल सु पार हियं।
मनु श्रोन पनारन तें बहियं ॥४४२॥
लगि तेग करें[11] दुव टुक्क[12] तनं।
जिमि[13] सीस परें[14] तरबूज मनं ॥
तहँ साह सु सेन मुरक्कि चली।
चहुवाँन तबै करि कोप बली ॥४४३॥
मुरक्की पतसाह तनी जु अनी।

१ कोपि। २ रुक्कत। ३ अग्ग। ४ भिरे। ५ जुरिये, जुटिये।
६ चहुवॉन। ७ ज्ञान लह्यौ। ८ कुंडल, कुंडलि। ९ पाखर। १० [illegible]।
११ टुक। १२ जिन, जिहिं।

मुख[1] बात सब पतसाह भनी ॥
करि कोप तबै पतिसाह कहै ।
मुहिं जीवत सेन सु भज्जि[2] चहै ॥५५४॥
बकसी तब आय सलाँम कियं ।
लख रूमिय अप्प[3] सु संग दियं ॥
रणधीर तबै सनमुक्ख पिलं[4] ।
बकसी करि कोप सु ओप मिलं ॥५५५॥
गुरजैं रणधीर के सीस दई ।
तिन ढल्ल सु उप्परि[6] ओट लई[5] ॥
बरछी रणधीर सु अंग दियं ।
धर फुट्टि[7] सु बाजि कौ[8] पार कियं ॥५५६॥
हय तैं[9] बकसी धर माँहि परयौ ।
तिहिं[10] संग सु मीर पचास गिरयौ[11] ॥
इक रूमिय धीर सू आय जुरयौ ।
किरवाँन लियं मन नाहिं मुरयौ[12] ॥५५७॥
रणधीर इतैं उत खाँन बलं ।
लथ बत्थ भए दुख देखि दलं ॥
रणधीर कटार सूँ पार कियौ ।
बलखाँन सु तेग जु कंध दियौ ॥५५८॥
सिर टुट्टत[13] धीर उठ्यौ धड़यं ।
बलखाँनहिं आय गह्यौ करयं ॥

१ मुख बाद सुबाद सु साह भनी । २ भांजि । ३ आप । ४ सनमुक्ख मुई द्विय (सुहिंदुव) पिल्लि दियं (पैपिलियं) । ५ लियं । ६ ऊपर । ७ फूट । ८ सुबाज कै । ९ गज तैं । १० तब सोंगि (संगि) सुमीर सु मीर अरयौ । ११ परे, गिरे—अंत्यानुप्रास । १२ लख पांच लिये मन माहिं मुरयौ । १३ टूटत ।

भरि वथ्थ सु हथ्थ पछारि बलं ।
हिय पार कटार किये सु खलं ॥५७९॥
लख एक स रूमिय खेत परे ।
रणधीर सुरुंड भरे खपरे ॥५८०॥

चौपाई छंद

पर्‌यौ खेत बकसी बड़ भारी ।
और संग दल बीस हजारी ॥
मीर पचास संग तहं सूते ।
इक लख रूमि बिहस्त[1] पहूंचे[2] ॥५८१॥
तीस सहस रणधीर सु[3] संगी ।
परे खेत वर बीर उमंगी ॥
धीर रुंड द्वै पहर सु नच्यौ ।
एक सहस हनि गज जस संच्यौ ॥५८२॥
टूट्यौ गढ़ सु छाड़ि कौ सोई ।
सुनी स्रवण हम्मीर सु जोई ॥
तब आपन तन मन पन जान्यौ ।
छत्री मंगल मरन बखान्यौ ॥५८३॥

दोहरा छंद

पक्ख उजरो[5] चैत्र सुदि, तिथि नौमी सनिवार ।
बीस सहस छत्री परे, अबला जरी हजार ॥५८४॥
जो कनवज काके करी, करी छाड़ि रणधीर ।
हरप सोच सम करि दोऊ, चकृत भए[6] जु मीर ॥५८५॥
गज इकसठि दो लप तुरी, छप्पर[7] बीस अमीर ।
जो कहता सोई करी, धन्य राव रणधीर ॥ ५८६॥

१ भिस्त । २ पहुंचे । ३ के । ४ धीर जुद्ध करि रुंड न नच्यौ । ५ पाख उजारी । ६ भयउ । ७ छपरि ।

छप्पय छंद

इते मीर रण परे साहि पट मास सम्हारे।
तबै दूत इक आय साहि सों बचन उचारे॥
जिते देव हिंदवाँन डिगत को धीर बधावै।
जिनकों पूजन करे राव निस दिन मन लावै॥
बर दियव राव हम्मीर कों आपन मुख संकर सरिस।
टूटै न गढ्ढ रणथम्भ सुनि अभै किये चौदह बरिस॥५८७॥

दोहरा छंद

दल लख सत्ताइस तहाँ, धर(न)नि ससावत मीर।
सूखत[1] सर सरिता विमल, कूप बावरी नीर॥५८८॥
तिथि नौमी आसोज सुदि, कर गहि तेग रिसाइ।
सुरमंदिर करि कोप सब, चढ्ढि अलावदि साइ॥५८९॥
हाथ जोरि गन्नेस कू, कहै राव हम्मीर।
करो मदति चाहत जवन, अलादीन दलभीर॥५९०॥

चौपाई छंद

सुनत[2] बचन हमीर के सोई।
कोपे[3] जुद्ध देव कों जोई॥
जब संकर काली हरपानी।
निज[4] समाज बोले मृदु बानी॥५९१॥
चौसठि जोगनि भैरव नच्चैं।
कर धरि चक्र त्रिसूल सु रच्चैं॥
बाजे डिमरू वीर चढ़ि[5] आए।
तबै साहि सों जंग रचाए॥५९२॥

---

१ सुकत। २ चव्यव। ३ सुन तब बत्त राव की सोई। ४ कुप्पिय देव जुद्ध कों जोई। ५ निज सुकख सुबुल्लिय मृदु बानी। ६ बज्जिय, बज्जिवं। ७ जुरि।

चल्लै चक्र त्रिसूल सु नेजा।
सक्ति पास धनु बाँन धरेजा॥
हल मूसल अंकुस मुद्गर वर।
परिघ सेल लै धाए परिकर॥५९३॥
कीनो जुद्ध बीर सब सज्जे।
संकर सरस कतूहल[1] सज्जे॥
सबै साहि की सैन सुभाई।
सबै परस्पर करैं लराई॥५९४॥
बजि बाजंत्र अनेक सु बीरं।
डैरव संख भेरि पट हीरं॥
मार मार चहुँ दिस सुनि बानी।
कटे लाख[2] आल्हन पुर जानी॥५९५॥

छप्पय छंद

तब सब देव गणेस बिघ्न बड़ दल मैं किन्नव।
कितौ म्लेच्छ को संग सस्त्र अप अप्पसु[3] किन्निव॥
उठे सकल ललकारि कीन्ह घमसॉन[4] सुभारिय।
रुंड मुंड परि दंड सैन दो लक्ख सँघारिय॥
देखंत नयन पतसाह तब अति अद्भुत कौतुक भयउ।
हिम्मत्त बहादुर अली पर उभै लक्ख सेनह हयउ॥५९६॥
यह चरित्र लखि साहि कूच[5] आल्हनपुर[6] तैं करि।
तब फिर पलटे आय घेरि रणथम्भ सरिस भरि॥
करि देवन सें दोप कहो कौन सुख पाए।
आगे[7] लख दल किते मारि हारि असुर खिपाए॥

१ कुतूहल। २ लक्ख आल्हन। ३ आपस में। ४ घमसाण। ५ कुच्च। ६ अल्लणपुर। ७ अग्गे।

अब लरै मनुस मानुसन सों देव दैत्य आगे[1] किते ।
यह जानि साहि सिर नाय करि आय[2] किए[3] डेरा उते ॥५९७॥

दोहरा छंद

हठ[4] हमीर छाड़ै नहीं, हजरति तजै[5] न टेक ।
सात मीर पतसाह कै, गए बिसरि करि तेक ॥५९८॥
महरम खाँ तब इम कही, अब पिछतावति साहि ।
हम बरजत रणथम्भ गढ़, चढ़ि आए तुम चाहि[6] ॥५९९॥
हजरति हिमति न छाड़िये, धरिये मन मैं धीर ।
गढ़ नरगढ़ चहुँ दिसि करो, कब लग लरै हमीर ॥६००॥

पद्धरी छंद

महरम्म आपनो[7] तजि मुसाहि ।
ध्याए सुदेव हिंदवाँन जाहि ॥
बहु बोलि, बिप्र पूजा कराहिं ।
करि धूप दीप आरति बनाहि[8] ॥६०१॥
पद परसे दरसे सकल देव ।
नैवेद्य पुज्य नाना सु भेव ॥
कर जोरि साहि बंदन सुकीन[9] ।
यह भाँति गवन डेरा सु लीन[10] ॥६०२॥
करि आल्हण[11] पुर तैं कूच ध्याय ।
रण के पहार डेरा कराय ॥
गढ़ की निगाह कीनी[12] सु साहि ।
आसंग नाहि कीनी[13] सताहि ॥६०३॥
करि मंत्र एलची दिय पठाय ।
तुम को सुकहत समुझाव[14] राय ॥

---

१ अग्गे । २ आनि । ३ किन्न, कियउ, किते । ४ हठ हमीर न छंडही । ५ तजी । ६ साहि । ७ अप्पनो । ८ कराय, बनाय । ९ किन्न । १० दिन्न । ११ अल्लण । १२ किन्नी । १३ किन्नौ । १४ समुभाव ।

दै सेख छांड़ि[1] हठ मिलि सुराव।
　　परसो सुआय पतसाह पाँव ॥६०४॥
इम सुनत राव प्रजर्यो सु अंग।
　　व्रत टरै केमि छत्री अभंग ॥
तुव कहा कहूँ दूते सुजानि।
　　नन टरै बैन छत्री सुबानि ॥६०५॥
नहिं देहु सेख घन[2] करै केमि।
　　पसु पंछी जे तजि सरण जेमि ॥
रणधीर कुंवर दोउ अति उदार।
　　बालणसी तीजो खाँन मार ॥६०६॥
ते परे खेत रावत अभंग।
　　अब कौन मिलि[3] राख्यो प्रसंग ॥
तब दूत द्रव्य लै जाहु ओर।
　　कहँ[4] रही बात फरमाँन तोर ॥६०७॥
मति आव फेरि भेजे ससाहि।
　　अब बिना जुद्ध नहिं उचित ताहि ॥
लै चल्यो दूत ये खबरि ऐन।
　　जा कहे साहि सों सकल बैन ॥६०८॥
सुनि बचन बाँचि फरमाँन सोइ।
　　कहि साहि राव समुझै न कोइ ॥
उज्जीर देखि तजबीज कीन[5]।
　　रण को पहार अपनाय लीन[6] ॥६०९॥
चढ़ढाय तोप तिहिं पर प्रचंड।
　　कीनी तयार गढ़ को अखंड ॥

---

१ छंडि। २ यह। ३ प्रण (न)। ४ मिलि, मील, मेळ। ५ कहा। ६ अत्त। ७ किन्न। ८ लिन्न।

पतसाह कहै महरम सुवत्त ।
तुम सुनो एक हम करी[1] चित्त ॥६१०॥
हम्मीर राव की तोप देखि ।
दग्गो[2] सु आपनी तोप लेखि ॥
यह तोप फुटे गढ़ फते होय ।
संदेह कौन या मैं न सोय ॥६११॥
गोलम्मदाज तब करि सलाँम ।
दागी[2] सुतोप लखि ताव[3] ताँम ॥
लग्यौ सुतोप कै गोल जाय ।
नुकसाँन भयौ तिहिं कछुक जाय[4] ॥६१२॥
यह सुनी स्रवण हम्मीर राय[4] ।
ततकाल तोप पै गयौ धाय ॥
देखी सुतोप साबूत जानि ।
तब कह्यौ राव तुम सुनो कानि ॥६१३॥
पतसाह तोप खंडै सुकोय ।
हौं करौं[6] बड़ो ताकौ सुसोय[5] ॥
गोलम्मदाज कीनौ[6] जुहार ।
पतसाह तोप फूटी[7] सुपार ॥६१४॥
तब कही साह महरम सदेखि ।
गढ़ विषम वीर छंडै न टेक[8] ॥
अब करौ[9] क्यों न तजबीज और ।
किहिं भाँति हाथि आवै सुजोर ॥६१५॥
कर जोर कही महरम्म खाँन ।
पुल बाँधि तोरि गढ़ करो आँन ॥

---

१ धरी । २ दग्गी । ३ ताय । ४ राव, धाव अंत्यानुप्रास । ५ सजोय । ६ किन्यउ । ७ फुट्टी । ८ पेखि । ९ करै कौन ।

तब महरम खाँ तजबीज कीन।
इक राह बांधि[2] गढ़ को जु लीन ॥६१६॥
पुल बाँधि कीन गढ़ की जु राह।
सुनि राव चित्त चिंता सु आह ॥
नहिं रह्यो मरम[3] गढ़ को सकोइ।
बहु फिकर राव कीनों[4] सु जोइ ॥६१७॥
तिहिं रैन पदम सागर सुआय (इ)।
दीनों सुसुप्न हम्मीर धाय (इ) ॥
नहिं करो कोन चिंता हमीर।
सब नदी समुद्दन को सुसीर ॥६१८॥
तुम रहो अभै गढ़ अभै[5] आय।
इक छिन्न माहिं पुल द्यों बहाय ॥
तब प्रात राव जग्गे हमीर।
फुटि गयो सकल बंध्यो सुनीर ॥६१९॥
सुनि साह बात[6] अचरिज्ज मानि।
टूटै न गड्ढ जिय बिषम जानि ॥
पुच्छिइ[7] उजीर तबै सुबोलि।
कीजे इलाज किम कहो खोलि ॥६२०॥
रण[8] के पहार कहा कीन आय।
डेरा सुकीन्ह उज्जीर थाय[9] ॥
मजबूत मोरचा तहाँ कीन्ह।
बहु परी रारि दुहु ओर चीन्ह[10] ॥६२१॥

---

१ बंधि। २ पुल बंधि किहूँ गढ़ को सराह। ३ मगज। ४ किनौ। ५ अबै। ६ बत्त। ७ पुच्छी सुतबै उज्जीर बोलि। ८ रण को पहार परि साहि आय (आप)। ९ थाप। १० किन्ह, चिन्ह अंत्यानुप्रास।

हम्मीर राव ऊपरि¹ प्रसाद ।
तहाँ करयो अखारो इंद्रवादि ॥
तहाँ चंद्रकला पातुर प्रवीन ।
सो नृत्य करै सुंदर नवीन ॥६२२॥
बाजत मृदंग वीना सितार ।
कट तार तार महनाद सार ॥
महुवरी सु खंजरि ताल संग ।
स्रीमंडल सुर औ जलतरंग ॥६२३॥
षट ताल राग रागनि सुसुद्ध ।
सो सुनै नृपति चहुवांन उद्ध ॥
गंधार देव भैरव सुजान² ।
अरु रांम कला विम्भा समोन³ ॥६२४॥
बजि ललित बिलावल गिरी देव ।
सुर आसा टोडी सकल भेव ॥
हिंडोल और सारग अनूप ।
नट और स्रीयुत राग भूप ॥६२५॥
करि गोरी को अलाप आनि ।
तब दीपग अरु सगरे कल्यांन ॥
सुर गावत पंचम अति प्रवीन ।
सुनि केदारो मारो सुभीन ॥६२६॥
खंभाच रु मारू परज पाइ ।
सुम सोर उड़ैसी जैत गाइ ॥
अड्यारणी⁴ कन्हर बहु सुभेव ।
बंगाल गौड़ मालव सुदेव⁵ ॥६२७॥

---

१ उप्पर । २ भूप । ३ सुजानि । ४ मांन । ५ अड्यारणी । ६ एव ।

सिंधुव बिहाग षट राग पेखि।
काफी अनूप सुर मधुर लेखि॥
सब कला जीति संगीत रीति।
नृतंत बाल गावंत गीति॥६२८॥
सुर सप्त ग्राँम तीनूं सु भेव।
इक्कीस मूर्छिना करत[1] एव॥
बहु लागडाक[2] गावत प्रबंध।
तिहिं सुनें होत आनंद फंद॥६२९॥
हम्मीर राव राजत सस्मंद।
दुहुँ ओर चौंर ढारैं[3] असंद॥
यहि[4] देखि साहि गरि गयौ गव्व।
हम्मीर इंद्र पदवी सु सव्व[5]॥६३०॥
अभिमाँन तजत नहिं मिल्यौ मोहिं[6]।
नहिं सेव देय[7] संका न कोहि॥
यह चंद्रकला पातुर सुभेव।
बहु हाव भाव हस्तक सुदेव[8]॥६३१॥
वर्षत कटाच्छ ऊपरि सुराव।
मोहिं[9] गिनत नाहि कछु[10] रहत चाव॥
तब ताँन गाँन[11] गावंत मानि[12]।
एड़िय सुबाल मोहिं फिरत[13] बानि॥६३२॥
अपमाँन बाल कीन्हौ अनंत।
एड़ी दिखाय मुझ[14] को हसंत॥
करि कोपि कहै पतिसाह एम।
मैं करौं बड़ो जिस को सुप्रेम॥६३३॥

१ धरत। २ डाट। ३ ठोरैं। ४ तिहिं। ५ गर्व्व, सर्व्व अंत्यानुप्रास। ६ मिल्यौ न मोहि। ७ देत। ८ सुभेद। ९ मुहिं। १० जनु। ११ ताँन माँन। १२ जानि। १३ करत। १४ मुहिं सों।

जो हनै बाल कहि तीर पाहि ।
    रसभंग करैं मैं गिनों ताहिं[2] ॥
सुनि वचन मीर गभरू सुसेख ।
    कर जोरि कीन्ह[3] बानी बिसेष ॥६३४॥
यह धर्म्म पुरुप को कितहु[4] नाहिं ।
    तिय ऊपर ऊचो करत[5] बाँहि ॥
तब कहत साहि यम सजा बाँन ।
    नुकसाँन होय अरु बचै ज्याँन ॥६३५॥
सुनि वचन स्रवन कम्माँन लीन ।
    सो ऐंचि स्रवण तिय चरण दीन ॥
तब परी बाल ह्वै बिकल भूमि ।
    रसभंग भयो सब लखत पूमि[6] ॥६३६॥
लगि तीर सभा मैं परी[7] जाव ।
    तब कह्यो सोच हम्मीर राव[8] ।
अब लों न तीर दुग्गहिं पहुँच्चि ।
    यह कौन औलिया आय सच्चि[9] ॥६३७॥

दोहरा छंद

देखि तीर अचिरज हुए,[10] गढ़ मैं आवत सीर ।
चक्रत चहुँ दिस चाहि कै, रह्यो[11] राव हम्मीर ॥६३८॥
मुरझि तिरिय[12] धरणी परी, भए राव चित भंग ।
राव कहे[13] ऐसे बली, किते साह कै संग ॥६३९॥

१ बड़ा जिसकौ रतेम । २ पाय, ताय अंत्यानुप्रास । ३ कही । ४ कहत । ५ करस बाँहि । ६ भुम्मि, पुम्मि अंत्यानुप्रास । ७ परयौ । ८ जाय, राय अंत्यानुप्रास । ९ ऊँच्च । १० भयो । ११ रहे । १२ त्रिया । १३ कहह ।

महिमा माहि हमीर सें, कही बात कर जोर।
सकल साह के हसम मैं, है लघु भैया मोर ॥६४०॥
नहिं दूजो कोउ साह के, सबरे[1] दल में और।
मीर गभरू अनुज मम, जामैं इतनो जोर ॥६४१॥

छप्पय छंद

नाहिं जती बिन जोग सूर बिन तेग न होई।
इते साह के संग मीर गरभर नहिं कोई॥
करो हुकम मोहि राव साह को हनौं ततच्छिन।
मिटै सकल उतपात भाज सब सेन जाय बिन[2]॥
हँसि कही राव हम्मीर तब यह खुदाय दूजो दुनी।
सिर बचै साह छत्र जु उड़े यह कौतुक कीजे गुनी ॥६४२॥
करि[3] साहिब को याद सीस हम्मीरहिं नायो।
कियो हुकम तब[4] राव कोपि के बाँन चलायो॥
अनल[5] पंख मनु परिय टूटि[6] आकास धरन्निय[7]।
भयो सोर बर सद्द परयो महि छत्र बरन्निय[10]॥
मुरझाय साह भू मैं परे[11] उड्यो छत्र आकास दिस।
तब कही उजीर पतसाह सों तजी ज्याँन परिहरि मु रिस ॥६४३॥
पिछले निमक[12] की दोस्ती, करो जाँन बकसीस।
जो दूजो सर छंडिहै, हनिहै[13] बिस्वा बीस ॥६४४॥
जा गढ़ मैं महिमा रहै, किम आवै वह हत्थ।
अहि ज्यूँ गही छछूंदरी, यों हजरत की गत्थ ॥६४५॥

छप्पय छंद

कह महरम खाँ बात इसी[14] हजरति सुनि आवे।

---

१ सिगरे। २ तेज। ३ भन। ४ करि जगदीसहिं याद; इष्टदेव निज सुमिरि। ५ हम्मीर। ६ परम्। ७ अनिल। ८ टुट्टि। ९ धरन्निय। १० धरन्निय। ११ भुम्मी गिरयउ। १२ निमष। १३ हनै जु। १४ इती।

वह[1] महिमा बर बीर राव का हुकम जु पावै ॥
गहै तुम्हैं ततकाल पाँव लंगर गहि मेलै ।
उसै दिली बैठाय जोर मरजात सु पेलै ॥
हठ छाड़ि साहि रणथंभ का करो कूच चलिये दिली ।
जै रही राव हम्मीर की पतिसाही सारी गिली ॥६४६॥
तब[2] सु साह हठ छाड़ि उलटि दिल्ली दिस आए ।
पिता बैर करि याद साह सुरजन पछिताए ॥
रतन पंच लै संग[3] साह के पाँव सु लग्यौ ।
तात बैर हिय जानि कोप उर मैं अति जग्यौ ॥
कर जोरि साह सुरजन कहै सुगम दुग्ग सो हथ्थ गनि ।
यह जितो राज[4] रणधीर को माहिं दैन की बाच भनि ॥६४७॥

दोहरा छंद

हँसि हजरत ऐसे कही[5], सुरजन आगे आव ।
दियौ राज रणधीर कौं, करूँ बड़ा उमराव ॥६४८॥
करि सलाम सुरजन तबै, बीरा खायौ कोपि ।
आप भवन हिकमति रची, स्वामि धर्म्म सब लोपि ॥६४९॥
जौरा भौरा खास मैं, भरे जु कोरे चाँम ।
फर्जाण आनि हाजरि भयौ, सुरजब करी सलाँम ॥६५०॥
हाथ[10] जोरि हम्मीर सों, सुरजन कही सुजाँन ।
मिलो राव पतिसाह सों, गढ़ बीत्यौ[11] सामाँन ॥६५१॥
बिनती[12] सुनत[13] हमीर तब, कियौ कोपि रत नैन ।
छंडि टेक छत्री तनी, रे कपूत गनि[14] ऐन ॥६५२॥

१ यह । २ तब अलावदी छंडि हट्ट दिल्ली दिसि आए । ३ भेंट । ४ राव हम्मीर को । ५ कहै । ६ अग्गु, अग्गै । ७ आय । ८ द्वै । ९ किन्न । १० हथ्थ । ११ बित्यौ । १२ बिन्नति । १३ सुनि । १४ गति ।

चौपाई छंद

कहैं राव हँसि सुरजन सुनिजै।
मिलौ छाड़ि[1] पन[2] यह न गुनिजै ॥
सुनि कापुरुष कपूत अयानैं।
छाड़ि[3] टेक को छत्री जानै ॥६५३॥
फिर हमीर सुज्जन सों पूछी[5]।
तेरी बात लगत मुहिं छूछी[6] ॥
जैंग भौंग खास सु दोई।
कैसैं निवरै जानत सोई ॥६५४॥
कहै साह यह तो है छानी।
प्रगट देखि निज नैनन जानी ॥
पाथर[8] डारि खास मैं जोई।
सुनिए स्रवण सह[10] सब कोई ॥६५५॥

दोहरा छंद

पाथर[11] डारयौ खास मह, खुड़क्यौ चाँम[12] अपार[13]।
जिंस सब्ब[14] नीचे रही, राव यहै[15] निरधार ॥६५६॥
खुड़क्यौ[16] सुनि दुव[17] खास को, चढ़यौ सोच उर राव।
तब महिमा हम्मीर सों, कहै बचन गहि पाँव ॥६५७॥

छप्पय छंद

कहै[18] जु महिमा सेख राव मुहिं हुकुम सु दीजै[19]।
मिलौ साह को जाय फिकर इतनो नहिं कीजै[20] ॥

१ छंडि। २ प्रन। ३ छंडि। ४ नहिं। ५ पुच्छी। ६ छुच्छी। ७ नहिं। ८ पत्थर। ९ सोई। १० सब्द। ११ पत्थर। १२ चर्म्म। १३ अधार। १४ सबै। १५ येह। १६ खुड़को। १७ दोउ। १८ कह महिमा तब सेख। १९ दिज्जै, दिजिय। २० किज्जै, किजिय।

चौपाई छंद

रांणी कहै सुनो महरावं।
ऐसे वचन उचित नहिं भावं॥
या तन वचन सार स्रुति भाखे[1]।
तन मन धन दे वचन जु राखे[2]॥६६७॥
तन धन भ्रात पुत्र अरु नारी।
हरि चिधृ त्यागि वचन प्रतिपारी॥
राज पाट अनित्य[3] सु जानो।
रहै नित्य इक सुजस बखानो॥६६८॥
केकइ ध्वज अधविग्रह दीनो।
विद्या भवन जाति जस लीनो॥
अब जो कही सत्य वह जानो
और न होय कोटि बुधि ठानो॥६६९॥

दोहरा छंद

कब हठ करै अलावदी, रणतभवर गढ़ आहि।
कबै सेख सरणे रहै, बहुरो[4] महिमा माहि॥६७०॥
सूर सोच मन मैं करो[5], पदवी[6] लहो न फेरि।
जो हठ छंडो राव तुम, उतन लजै अजमेरि॥६७१॥
सरण राखि सेख न तजो, तजो सीस गढ़ देस।
राणी राव हमीर को[7], यह दीन्हो उपदेस॥६७२॥

छप्पय छंद

कहाँ पवार जगदेव सीस आपन कर कट्यो।
कहाँ भोज विक्रम सु राव जिन पर दुख मिट्यो॥

१ भक्खे। २ रक्खे। ३ अनित्त (त्य)। ४ बहुरयो। ५ करे।
६ पदई। ७ की।

सवाभार नित करन[1] कनक विप्रन कौं दीनौं[3]।
रह्यौ न रहिए[4] कोय देव नर नाग मुर्चानौं॥
यह बात[5] राव हम्मीर सूं राणी इम आसा कही।
जो भए चक्कवै मंडली सुनों राव दीखै नहीं[7] ॥६७३॥

दोहरा छंद

धन जोबन नर की दसा, सदा न एक बिहाय।
पाख[8] पाँच ससि की कला, घटत घटत बढ़ि जाय* ॥ ६७४ ॥
राखि सरण सेख न तजो, तजो सीस गढ़ बेगि।
हठ न तजो पतसाह सों, गहि कर तजो न तेगि ॥ ६७५ ॥
जितो ईस तुम्ह वर दियों, अब फिर चाहत काय।
करो जंग पतसाह सों, सनमुख सार समाय ॥ ६७६ ॥
जीवन[10] मरन संजोग जग[11], कौन मिटावै ताहि।
जो जन्मे संसार मैं अमर[12] रहे नहि आहि ॥ ६७७ ॥
कोउ सदा नहि थिर रहे, नर तरु गिरवर ग्रॉम।
करयो राज रणथंभ को[13], अपना[14] तन परमॉन ॥ ६७८ ॥
कहाँ जैन कहं सूर कह, कह सोमेस्वर राण।
कहाँ गए प्रथिराज जे, जीति साह दल आण ॥ ६७९ ॥
कहाँ जैत कह सूर प्रथि, जिन गहे गोरी साह।
होतब मिटै न जगत मैं, किजिय[15] चिंता काह ॥ ६८० ॥
होतब मिटै न जगत मैं, कीजे चिंता कोहि।
आसा कहै हमीर सों, अब चूको मति सोहि ॥६८१॥

१ प्रतिथ। २ कहं। ३ दिन्नव। ४ रहिहैं। ५ बत्त। ६ कहो। ७ कहीं। ८ पख, पक्ख, पाखि। ९ बढ़त। १० जाँमण। ११ जे। १२ अमर न कोई आहि। अमर न कोउ रहाहि। १३ गढ़। १४ इम अपनै (अप्पन) तप नॉम। १५ कीजे।

* पाखि पाखि ससि कला ज्यों घटत बहुरि बढ़ि जाय।

बिछुरन मिलन सँजोग जग, सब मैं यह विधि सोह।
आसा कहै हमीर सह, हम तुम भया बिछोह ॥६८२॥
धन्य वंस जिहिं जन्म तव, राव सराहत ताहिं।
और कौन तुम बिन त्रिया, वचन कहै समुझाय ॥६८३॥
धन्नि पतिव्रता नारि तू, राव सराहत आप।
अवर कौन तुम बिन त्रिया, कहै वचन बिन पाप ॥६८४॥
राखि सेख सरणै तजों, कुल लाजै चहुवांण।
तुम साको गढ़[1] कीजियौ[2], निरखि साह नीसाण ॥६८५॥
लीन[3] परिच्छा बहुत मैं, तू छत्री कुल बाल।
तुव[4] मत मै देख्यौ[5] सुदृढ़, यही बात यहि काल ॥६८६॥
सुनें राव के बचन तब, परी धरनि[6] मुरझाय।
निठुर बचन मुख तैं जु कहि, तजि रणवास रिसाय ॥६८७॥
हम पतिभरता पुरुष बिन, कौन दिसा चित को धरैं।
आसा कहै हमीर सौं, तुम पहला साको करैं ॥६८८॥

छप्पय छंद

खोलि सकल भंडार तुरत[8] जाचिक सु बुलाए[9]।
विप्र भली विधि पूजि[10] दिये बंदी मन भाए॥
भवन तिरिया[11] गढ़ ग्राँम तजे हम्मीर मोह बिन।
मन क्रम बचन सु त्यागि भए निज धर्म्म लीन खिन॥
ततकाल राव रणवास तजि सभा आय दरबार किय।
आये जु मित्र[12] मंत्री सु बुध सूर वीर आदर सुदिय ॥६८९॥
कहै राव हम्मीर सुणों चतुरंग सदा बर।
तुम्हैं रतन की लाज जुद्ध[13] हम करें नियम करि॥

---

१ गढ़ मैं करो। २ किज्जियौ। ३ लिन्न। ४ तुम मन। ५ दिख्यौ। ६ बत्त। ७ भुम्मि मुज्झाय। ८ सबै, सब्ब। ९ बुल्लाए। १० पुज्जय। ११ त्रिया। १२ मंत्र। १३ बुद्ध।

तुम सब बात समत्थ[१] करो जैसी तुम भावै।
रणतभँवर[२] को लोग तहाँ कछु दुःख न[३] पावै॥
गढ़ सजो जाय चित्तोड़[४] को प्रजापालि सुख दिज्जिये।
सब साँम दाँम दंडह सहित भेद नित्य[५] सब्ब किज्जिये॥६९०॥
कहत तबै[६] चतुरंग उचित[७] यह हम कौं नाहीं।
आप[८] रहो हम[९] रहैं लरैं हम जस कै ताहीं॥
कहै राव यह प्रजा सकल चित्तोड़[१०] समावै।
यह परिकर सब जितो राखि[११] आपन[१२] जु सुहावै॥
चतुरंग राव ले रतन को गढ़ चित्तोड़[१३] सुचल्लिये।
प्रथम जाय अल्हण सुपुर कम्णाजुत डेरा किये॥६९१॥

दोहरा छंद

पंच सहस चतुरंग लै, चले[१४] रतन के साथ।
तब हमीर दरबार किय, कही सबन यह गाथ[१५]॥६९२॥
जीवै सो घर भुग्गिवै[१६], जुझ्झै[१७] सुरपुर बास।
दोऊ जस कित्ती[१८] अमर, तजो मोह जग आस॥६९३॥
जीवन चाहत जो कोऊ ते सुखेन घर जाहु।
कहै राव सबके सुनत, हम सँग मरन उछाह॥६९४॥

छप्पय छंद

सुनत बचन ये सेख भवन अपने को आए[१९]।
कुटम[२०] सेख करि खेम करद लै अदल पठाए॥

१ समर्थ। २ यह परिकर सब जितो, राखि आपन जु सुहावै। ३ दुख नहि। ४ चीतोड़। ५ नीति। ६ तब्ब। ७ उदित। ८ अप्प। ९ सब। १० चीतोड़। ११ रक्खि। १२ अप्पन। १३ चीतोड़। १४ चलिय, चल्यउ। १५ सत्थ, गत्थ अत्यानुप्रास। १६ भोगिवै। १७ जूझै। १८ कीरति। १९ कै धायौ। २० कुटम खेसि सब सेख।

कहै राव सों बचन नैन जल सों भरि आए।
सुख संपति रणथंभ त्यागि करिये मन भाए॥
सुर नर कायर[1] सूरमा कहै सेख थिर नहिं कोइ।
हम्मीर राव चहुवाँन[2] अब करै साहि सों जंग सोइ॥६९५॥

दोहरा छंद

जीवन कों[3] सब कोउ कहै, मरन कहै नहिं कोय।
सती सूरमा पुरुष कों, मरतहिं मंगल होय॥६९६॥

छप्पय छंद

केसर सौंधे बसन सकल उमरावन सज्जैं।
अलादीन पतिस्याह फेरि कहि कय कब गज्जैं॥
सहस राऊ करि दौंन राव सिर मौर सु बंध्यौ।
करखव[4] जुद्ध कौ साज छत्र कुल सुजस सु संध्यौ॥
निस्सौंन[5] पाँन बज्जे सु घन हर्ष[6] बीर बानै पढ़ै।
चहुवाँन राव हम्मीर तब जुद्ध काज यौंरै चढ़ै[7]॥६९७॥

दोहरा छंद

पंच सहस रतनेस संग, गढ़ चीतोड़[8] पठाय।
पंच सहस रणथंभ गढ़, द्रढ़ रावत रह आय॥६९८॥
असी सहस सेना सकल, चढ़ी राव के संग।
माया मोह विरक्त मन, जुरन साह सों जंग॥६९९॥

छप्पय छंद

कमध्वज कूरम गौड़ तँवर परिहार[9] अमानो।
पौरच वैस पुंडीर बीर चहुवाँन सु जानो॥
जदव[10] गोहिल धीर चढ़ै गहिलोत गरूरं।
सैंगर और पँवार भिल्ल[11] इक भोज मरूरं॥

---

१ कातर। २ पतिहास सों करो जंग अद्भुत सोइ। ३ कं। ४ करिख। ५ नीसाँन। ६ हरषि। ७ कढ़े। ८ चित्तोड़। ९ पड़िहार। १० जादम। ११ भील।

छत्तीस वंस छत्री चढ़ै जिम पावस बद्दल[1] बढ़ै।
हम्मीर[2] राव चहुवाँन तव जंग कज्ज[3] चौरै कढ़ै ॥७००॥
जेठ मास बुधवार सप्तमिय पक्ख[4] अध्यारी।
करि सूरज कौ नमन राव कर खग्ग[5] सम्हारी ॥
हरषे सुर तेतीस और हरषे जु कपाली।
नारद सारद हरषि बीर बावन जुत काली ॥
हरषी जु हरषि[6] अच्छर[7] हरषि[8] जुग्गिन बृंद सु नच्चियव।
जंबुक कराल गिद्धनि हरषि सूर हरषि हिय रच्चियव ॥७०१॥

हनूफाल छंद

सजि सूर राव हमीर। बिरदाय बीर सु धीर ॥
जनु छत्र कुल की लाज। रन सिंधु की मनु पाज ॥७०२॥
दातार सूर सु अंग। निस द्यौस जुट्टत जंग ॥
धरि स्वामि धर्म्म सुरंग। बढ़ि[10] रहै तिल तिल अंग ॥७०३॥
गढ़ कोट ओटत एक। तोरंत करि करि टेक ॥
सिर खौरि चंदन सोह। रबि बंदि बंदि सुलोह ॥७०४॥
गति उद्ध[11] कुद्दत भट्ट। ज्यौं[12] खेलत उतरै नट्ट ॥
अँग बर्म्म चर्म्म सु कीन। सिर टोप ओप सु दीन[13] ॥७०५॥
दस्ताँन रच्चि सु हत्थ। करि चहै गत्थ[14] अकत्थ[15] ॥
बहु न्हाँन दाँन सु कीन। गो स्वर्ण बिप्रन दीन[16] ॥७०६॥
रबि संभु बिष्णु सुपुज्जि[17]। मन साह सैं करि दुज्जि[18] ॥

---

१ बादल। २ दल हरषि राव हम्मीर कै साह जीव अचरिज बढ़ै। ३ काज। ४ पाख। ५ तेग। ६ हूर। ७ अच्छरि। ८ सकल। ९ रन। बिरदार। १० गहिव। ११ उर्ध। १२ जिम खेल खिल्लिउ। १३ किन्न, दिन्न अंत्यानुप्रास। १४ गत्थ। १५ अगथ्थ। १६ किन्न, दिन्न अंत्यानुप्रास। १७ पूजि। १८ दूजि।

आचार भार फबंत। दोउ पच्छ सुद्ध सुभंत ॥७०७॥
बहु बंदि बिरदत जाय। बढ़ि द्वंद हर्प सु आय[1] ॥
असमाँन लग्गि[2] सु सीस। झलहलै तेज सु दीस ॥७०८॥
सँग चह्यव[3] बंस छतीस। संग्रॉम अचल सु दीस ॥७०९॥

दोहरा छंद

स्वामि धर्म्म धारै[4] सदा, माया मोह बिरक्त ॥
दाँन कृपाँन उदार मति, अचल अद्रि हरभक्त ॥७१०॥
साजत साज सुबाजि सजि, कीन[5] बनाव सु सेन ॥
चंचल चपल बिचित्र गति, राग बाग लखि सैन ॥७११॥

छंद हनूफाल

तब[6] साहनी नृप बोलि। हय सहस सोलह खोलि ॥
सब बंस उच्च सु बाज[7]। लखि[8] रूप सोहत राज[9] ॥७१२॥
मनु उच्चस्रव के बंधु। आवर्त्त चक्र सु कंधु ॥
तुरकी हजार स पाँच। सग चलत करत सु नाच[10] ॥७१३॥
ताजी हजार सु रुद्र। गुन सील रूप समुद्र ॥
सब बीर ताजि[11] कुलीन। नृप बंटि[12] बाजि सु दीन ॥७१४॥
बनि जीन जटित जराव। नग हीर पन्न सुहाव ॥
सिर बनिय कलंगिय सेन। मनु सजे बाजि सु मैन ॥७१५॥
गजगाह बाह अथाह। जो करै[13] जल पर राह ॥
नग मुक्त माल सुयाल। गुम्फी[14] सु रचि[15] बहु काल ॥७१६॥
मखमलिय सिंगार साज। मनु[16] सबै रवि को[17] बाजि ॥
जिन परिय पक्खरि अंग। लख भ्रमत दिट्ठि[18] अभंग ॥ ७१७॥

१ जाहिं आहिं, अंत्यानुप्रास। २ लग्गिय। ३ चढ़े। ४ धारहिं। ५ किन्न। ६ तब साह लिय नृप बुल्लि। ७ बाजि। ८ लख। ९ राजि। १० पच्च, नच्च अंत्यानुप्रास। ११ धीर। १२ बाँटि। १३ करहि। १४ गूँथी। १५ सरचि। १६ सब्ब। १७ कै। १८ दीठि।

बहु सिरी सीसन सोहि। उड़ि चलैं भौंर जो कोहि[1] ॥
गति चलैं[2] चंचल गमि। जिनि पवन पहुँचे केमि ॥७१८॥
धर धरत सुम यों मांनि। मनु जरत अग्गि[3] सु जांनि ॥
जल चलैं थल जिमि वट्ट[4]। लखि उड़ैं औघट घट्ट[5] ॥७१९॥
मृग गहत डार कमाँन। नहिं पच्छि पावहिं[6] जाँन ॥
गति पवन देखि लजात। जनु मुकुर क्रांति सगात[7] ॥७२०॥
दोउ वंस सुद्ध प्रकास। बड़ि डील पील सु जास ॥
यहिं बिधि सु लिन्ने[8] मोलि। नग हेम सर भर तौलि ॥७२१॥
कोउ वने कच्छिय ऐन। सब[9] उड़े पच्छिय गैन[10] ॥
ऐराक वंस सुसील। गुन भरे झलकत डील ॥७२२॥
खंधार उपजि स सुद्ध। जनु लखत रूप सु उद्ध ॥
काबलिय डील अनूप। तिहिं देखि[11] मोहत भूप ॥७२३॥
अरू चीन के जु नवीन। ताजी सगुन गन लीन ॥
बर[12] वीर अनक जु डील। जो लिये साटैं[13] पील ॥७२४॥
रँग रंग अंग बनाव। सो लिये पंकति[14] दाव ॥
सिरगा सुरंग समंद। संजाफ सुरख अमंद ॥७२५॥
कुम्मेत कुमद कल्याँन। मोती सु मगसी आँन ॥
सब्जारु[15] सब रंग भौंर। चंपा सु चीनिय चौंर ॥७२६॥
अबलख सु गरड़ा रंग। लक्खी जु अतिहि[16] उमंग ॥
हंसा हरेई बाजि। तीतुरिय ताँबी साजि ॥७२७॥
भिन्न भिन्न टुकड़ी साजि। चढ़ि चलिय गावत गाजि ॥
चहुवाँन राव हमीर। रँग रंग रचन सुधीर[17] ॥७२८॥

१ सोह, कोह अंत्यानुप्रास। २ चलहि। ३ अग्नि। ४ बाट। ५ घाट। ६ पावैं। ७ सतात। ८ लीने। ९ सँग। १० औन, गौन. अंत्यानुप्रास। ११ दिक्खि, पिक्खि। १२ अब्बिय (अरबिय) अनोखे डील। १३ सट्टैं। १४ लगे पंकज। १५ सु। १६ ऐरि। १७ रण रंग रच्चन धीर।

छंद त्रोटक

गजराज सबै मत पंच सजे।
गिरगात[1] मनो बन भद्र गजे ॥
सु महावत जंत्रन मंत्र रजे।
करि बंधन[2] पीर सुधीर कजे ॥७२९॥
परि पाँय सजाय निकट्ट खरे।
पग[3] खोलि जँजीर सुवीर अरे[4] ॥
बिरदाय भले मन हत्थ कियं।
असनाँन कराय सिंगार लियं ॥७३०॥
तन तेल सिंदूरन चित्र कियं।
सिर चंद अमंद सुरंग दियं ॥
जनु कज्जल बद्दल पावसयं।
तड़िता घन[5] चंद कि मावसयं ॥७३१॥
सजि डंबर अंबर सो लगियं।
घन घोर घटा सु पटा गिनियं[6] ॥
कसियं हवदा ध्वज धार वली।
मनु पंगति पब्वय की जु चली ॥७३२॥
बर्षा घन घोर सु जानि परै।
कबि रूप स्वरूप समाँन करै ॥
बहु बद्दल बारन बूंद बढ़े[7]।
ध्वज बैरख लाल निसाँन कढ़े ॥७३३॥
तड़िता घन मैं दमकंत मनो।
बगपंति सुई गजदंत भनो ॥
गरजै बहु गाज सु गाज मनं।

१ गिरगात। २ बंदन। ३ पदपाय सुजाय। ४ खुल्लि। ५ धनु।
६ गजिय। ७ चढ़े।

मिलियो ससि सूरज गोन भनं ॥७३४॥
बर्षै हद मद सुभद्द सदा।
सु बहै बहु भाँति सुभद[1] सुदा॥
सिर ढाल ढलक्कत एसि लसै।
ससि जीव धरासुत एक बसै॥७३५॥
अधधुंध चले मग उम्मगयं।
मन काल कराल उठे जगयं॥
चरखी बहु बाँग जु नेज लियं।
धरि सेन सुअग्र[2] सुभाय कियं॥७३६॥
पद लंगर ओर जंजीर[3] जुटे।
नहिं खुल्लत आदुव न्याय तुटे[4]॥
बल रासि अमाँन[5] सुकोह भरे।
नन चालत[6] मग्ग अमग्ग अरे॥७३७॥
बहु दुंदुभि घोर सुनै स्रवनं[7]।
बिरदाय सुनंत करै गमनं॥
सिर चौंर दुरंत इसे दरसै।
तम दाबि[8] दिनेस मरीचि लसै॥७३८॥
चतुरंगनि राव हमीर तनी।
सब भाँतिन सोभ अनंत बनी॥
सब रावत आय जुहार कियं।
चहुवाँन सबै सिर भार दियं॥७३९॥
धरि अग्र[9] सु पिल्लन[10] डिल्ल[11] पिले।
बहु चंचल बाजिन लाज[12] खिले॥

---

१ नद्द। २ अग्ग। ३ जंजिर जोर जटे। ४ लुटे। ५ अमाबन। ६ चल्लत। ७ स्रवनं। ८ दब्बि। ९ अग्ग। १० पीलन। ११ डील। १२ साज।

बहु दुंदुभि बाजत[1] घोर घनं।
पट गोमुख भेरि सु चंग मनं[2] ॥७४०॥
सहनाइय सिंधुर राग ररं।
बिरदावत बंदि कबिंद भरं॥
उमगे चहुवाँन बिकट्ट दलं।
अप अप्प सु बीर कराय हलं॥७४१॥
चहु ओर कितेक सु पुंगल के।
करिहा[3] सजि संग चले बलके॥
तिनकी सज मानव चित्र रचे।
धरि दूर नजीक करै सु रचै॥७४२॥
असवारिय सज्ज बनी तिनतैं।
खबरैं बहु लेत घने बन तैं॥
बहु तोप जलेबिन[4] अग्र बनी।
सब सिंदुर लेप करी जु घनी॥७४३॥
तिन ऊपर बैरख बृंद सजी।
जम की मनु जीभ अनेक गजी॥
बलि देत चले अरिबृंद भखै।
मद बक्कर भक्खर[5] कोप धखै॥७४४॥
हथनारि जंबूर सु चद्दरयं।
छुटिया तुबकै बहु अद्दरियं॥
धरि अग्र सबै चहुवाँन चढ़े।
बहु बंदि कबिंद सुछंद पढ़ै॥७४५॥
इहिं भांति उभै दल कोप कियं।
हरखे बर बीर सुधीर हियं॥७४६॥

१ बज्जत। २ हनं। ३ करहा (ऊँट)। ४ जलेवय, अग्ग।
५ भक्खत।

दोहरा छंद

स्रवण सुनै बर बीर रस, सिंधव राग अपार।
हरखि उठे दोउ तिहिं समें, मिलन बीर स्रिंगार॥७४७॥

छंद हनूफाल

मिलनै सुबीर स्रिंगार। दुहु हरष हिये अपार॥
बर बीर हरखेउ अंग। उत अच्छरी[1] सु उमंग॥७४८॥
तन उभै मज्जन कीन। भये दोंन मॉनस लीन॥
तहाँ कौच बीर नवीन। रचि बाल बसन प्रबीन॥७४९॥
इत टोप बीरन सीस। कसि कंचुकी तिय रीस॥
बहु अस्त्र बंधि सु बीर। अच्छरि सु भूषण हीर॥७५०॥
इत सूर खड्ग सु लीन। उत बाल अंजन दीन॥
इत ढाल बीरन बंधि। ताटंक श्रवणनि संधि॥७५१॥
सामंत बंधि कटार। अच्छरी तिलक सुढार॥
मुख पॉन ज्वॉन सुभाव। तिय चंप दंत जराव॥७५२॥
इत कसी सूर कमॉन। द्रग बाम चमक निदॉन॥
धरि बीर कर दस्तॉन। अच्छरिय महदी पॉन॥७५३॥
बरच्छी सु लीनिय सूर। बर माल कीनिय हूर॥
सिरपेच सूर जराव। तिय सीस फूल सुहाव॥७५४॥
इत तबल तौरा नेत। तिय हाव भाव समेत॥
रचि सूर सेलिय अंग। अच्छरिय हार उमंग॥७५५॥
कसि तून बीर स जंग। अच्छरिय नैन अपंग॥
कर केहरी नख सूर। उत पानि पानि सहूर॥७५६॥
लिय बीर तुलसिय माल। बर माल लीन स बाल॥
कसि सूर मोजा पॉय। नूपूर सु बाल सुहाय॥७५७॥
कसि सूर बाजि सु तंग। बिस्मॉन बाल उमंग॥
इहि भाँति सूर सबाल। उतकंठ मिलन तिकाल॥७५८॥

१ अपछरा।

उमगि उमगि हम्मीर भट, चले सकल करि चाव।
च्यारि अनी चतुरंग की, चढ़े संभरी राव॥७५६॥
उतै साह के मीर भर, ख्याँन और उमराव।
रणतभंवर छिक्किय[1] हरषि, नाना करिव बनाव॥७६०॥
च्यारि दरा घाटी जिती, कीने घाटारोह।
काल रूप कोपे[2] तुरक, वाँन बिकट जंसोह॥७६१॥

भुजंगप्रयात छंद

चढ़े बीर कोपे दुहूँ ओर धाए।
मनो काल के दूत अद्भुत्त आए॥
इतै राव हम्मीर के बीर छुट्टे।
उतै मीर धीरं गहीरं सु जुट्टे॥७६२॥
उड़ी रैन सैनं न दीखंत भाँनं।
दुहूँ ओर घोरं सु बज्जे निसाँनं॥
छुटें, तोप वाँनं दुहूँ ओर जोरं।
धरा अंमरं बीच मच्चे सु सोरं॥७६३॥
उठी ज्वाल माला धरा पै उपट्टे।
धुवाँ धार घोरं सु जोरं प्रगट्टे॥
मनो दोय सिंधू तजैं आय वेला।
प्रलैकाल के काल कीनो समेला॥७६४॥
दुहूँ ओर घोरं सु गोलं वरक्खैं।
मनो मोघ[3] बोला अतोलं[4] करक्खैं॥
उड़े अग्रपब्बय ढहैं गड्ढ कोटं।
परैं गज्ज बाजं धरा धूरि लोटं॥७६५॥
प्रलै पावकं जानि उट्ठी लपट्टैं।
जरं उज्झरं सूझरं[5] यों झपट्टैं॥

१ छकिय, छिक्यउ। २ कुप्पिय। ३ मेघ। ४ अतुल्लं। ५ सुज्झरं।

लगे गोल मैं गोल गोला सु गज्जैं ।
भए वारपारं उपम्मा सु रज्जै[1] ॥७६६॥
मनो स्याँम के बाम ह्वै वारपारं[2] ।
चहूँ ओर राजंत है चारु वारं ॥
रहे गिद्ध तामैं घनं बैठि अद्रं ।
करै ध्याँन बैठ गुफा मैं मुनिंद्रं ॥७६७॥
उड़ै साथि गोलाँन के वीर ऐसैं ।
मनो फाटिका[3] तैं उड़ै नट्ट जैसैं ॥
चलै तोप जोरं करैं सोर भारी ।
परै बिज्जुरी सी घनं[4] एक बारी ॥७६८॥
छुटै एक वारैं[5] घनी चादरं[6] यों ।
मनो भार भूजै बनै यों चनै यों ॥
बँदूकैं हजारं चलैं एमि गाजैं ।
मनो मेघ गोला परैं भूमि गाजैं ॥७६९॥
चलैं बाँन वेगं मचै सोर भारी ।
मनो आतसंबाज खेलंत कारी ॥
छुटैं बाँन कम्माँन ज्यों मेघ धारा[7] ।
लगैं वाज गज्जं हुवै वारपारा ॥७७०॥
मनो नाग छोना उड़ैं होड मंडी ।
डसैं अंग अंगं करैं[8] सेन खंडी ॥
बहैं तोमरं सेल औ सक्ति ऐनं ।
करैं वार पारं बहैं[9] उच्च बैनं ॥७७१॥
बहैं खड्ग[10] बेहद्द देखंत सूरं ।

१ सज्जै । २ आरपारं । ३ फाटिकं । ४ घनी । ५ चारं ।
६ चद्दरे । ७ धारं, पारं अंत्यानुप्रास । ८ अरी सेन । ९ बकैं । १० खग्ग ।

करैं दोय टूकं सभुक्कै समूरं ॥
वहैं तेग कंधं परैं गज्जराजं ।
लगे आयुधं यों भरं सब्ब साजं ॥७७२॥
कटैं कंगलं अंग ओ जीन बाजी ।
तबै सूर रीझै करैं मालसाजी ॥
कटारी वहै वारपारं निहारैं ।
मनो स्याँम उर माँझ कौस्तुभ सम्हारैं ॥७७३॥
कहूँ पंजरं पिंजरं बेगि फारं ।
मनो हाथ वाला अहारी निकारं ॥
छुरी हत्थ जोरं करैं सूर हाँकैं ।
कहूँ मल्ल युद्धं करं बीर खाँकैं ॥७७४॥
परैं सीस भूमैं उठैं रुंड घोरं ।
दुहू सेन देखंत कौतुक्क जोरं ॥
किती अंत उरझंत लटकंत भूमैं ।
कित घायलं घाव लग्गे सु झूमैं ॥७७५॥
भरे योगनी पत्र पीवंत पूरं ।
परैं ज्यों मलेच्छं बरैं आय हूरं ॥
किलक्कैं जु काली हसैं वार बारं ।
करैं भैरवं घोर सोरं अपारं ॥७७६॥
भगी साह की सेन देखंत दोई ।
कहै बैन कोपं बकं सीस सोई ॥
किते भागि जैहो अरे मूढ़ आजं ।
जिते बीर चहुवाँन हम्मीर गाजं ॥७७७॥

१ टूकैं सु झुकैं, टुक्कं सु झक्कं । २ शंभु रीझैं । ३ बिहारैं । ४ भुम्भी । ५ सीस । ६ लरकंत । ७ घूमैं । ८ जुग्गनी । ९ जितैं चाहुवाँनं हमीरं सुगाजं ।

भम्यौ साह संग तज्यौ जंग भारी।
कहै साह उज्जीर सौं जो हंकारी ॥७७८॥

दोहरा छंद

कहा राव हम्मीर कै, सूर वीर बलवाँन।
सबै[1] सु खाय हमारिये, जग समै प्रिय प्राँन ॥७७९॥

छप्पय छंद

कहै साह उज्जीर सुनो आपन[2] मन लाई।
जिते राव के वीर सबै[3] छत्री ध्रन[4] पाई॥
लरत भिरत नहिं टरत करत अद्भुत रन सीतो[5]।
करत जंग अनभंग अंग छिन भंग है नीतो[6]॥
नहि सहत मीर आपण[7] सपन[8] सबै मीर उमराव सर।
किज्जे सु कौन मत तंत अब कहो बुद्धि आपन्न[9] समर ॥७८०॥
कहै उजीर[10] कर जोरि सुनो हजरत यह किज्जे।
च्यारि सेन चतुरंग संग नामी कर[11] दिज्जे॥
एक[12] सेन दिवान्न[13] एक बकसी भड़ बंके।
एक[14] गोल मोहि जानि आप[15] एकन कर हंके॥
यह भाँति सेन चतुरंग कै अनी च्यारि करि जुट्टिए।
हम्मीर राव चहुवाँन[16] तै फते आप लहि हट्टिए[17] ॥७८१॥

दोहरा छंद

करि करि मंत्र उजीर[18] तब, चढ़ संग लै मीर।
च्यारि अनी करि साहि दल, जुरे जंग सब[19] वीर ॥७८२॥

---

१ सर्बसु। २ अप्पन। ३ धर्म। ४ पन। ५ जीते, जित्ते, सीत्ता। ६ नित्ते, जित्तो। ७ अप्पन। ८ सयन। ९ अप्पन। १० कह वजीर। ११ नर। १२ इक्का। १३ दीवाण, दिब्बॉन। १४ इक्क। १५ अप्पन इक्कन करि हंक्के। १६ के। १७ खुट्टिए। १८ वजीर। १९ फिरि।

त्रिभंगी छंद

करि मंत्र असेसं सूर सु देसं, बंके बेसं सज्जायं ।
हय गय[1] चढ़ि बीरं फिरे सुमीरं, धरि धरि धीरं लज्जायं ॥
गजराजन सज्जे अग्गी रज्जे, बीर गज्ज लखि लज्जें ।
नीसाँन[2] फरक्के धीर धरक्के, हर हर बक्के गलगज्जे ॥७८३॥
दोउ[3] ओर उमग्गैं[4] समर सु रट्टैं[5], बढ़ि बढ़ि तडे नख खंडै[6] ।
बहु तोपन छुट्टै बीर अहुट्टै, फिरि फिरि जुट्टै बल चंडैं ॥
बाजे बहु बज्जैं जनु घनु गज्जैं, सूर समज्जै बल रज्जे ।
पद रुथ्थ[7] पतालं अरि उर सालं, उद्दल[8] भालं रण सज्जैं ॥७८४॥
छुट्टै बहु बाँनं संधि कमाँनं, अरि उर प्राँनं बहु कड्ढैं ।
लग्गैं उर सेलं अरि दल पेलं, बिग्रह झेलं बल ठड्ढैं ॥
किरवाँन दुधारं हय गय पारं, सूर सहारं उर फारं ।
करि जोर कुठारं बहुत[10] करारं, भिरत जुझारं नरभारं ॥७८५॥
गिद्धिय[11] पल भक्खैं रत[12] बहु चक्खैं, जंबू अक्खैं हिय हर्षैं ।

... ...

बहु पत्र भरावैं मिलि मिलि गावैं, धरि धरि धावैं मन भावैं ।
पल अस्ति चचोरैं बसन निचोरैं, लुथ्थि टटोरैं गुन गावैं ॥७८६॥

दोहरा छंद

यहि बिधि दुहूँ दल आहुरे, भिरे[13] दोउ दल गैन ।
रहे अहल चहुवान हू, खाँन सकल हठि सैन ॥७८७॥
अबदल मीर जु साहि के, परे खेत में[14] धाय ।
पकरै राव हमीर कौ, पकरै[15] अस पति पाय ॥७८८॥

---

१ गज । २ निस्साँन । ३ दुहूँ । ४ उमड्डैं । ५ डट्टै । ६ तडैतन खंडैं । ७ रूथ, रुप्पि । ८ उद्दत । ९ संगि । १० बहत । ११ गिद्धनि । १२ रत्तहु । १३ भिरग, भिरिउ । १४ पै । १५ परसे ।

ल्याऊँ गहि हम्मीर कौ, रीझ दीज्जिए मोहि।
जितनो हिंदू को वतन, पाऊ अब कर जोहिं ॥७८९॥
बीस सहस अबदल पिले, इत हमीर के बीर।
आप[1] आप जय स्वामि की, चाहत मंगल धीर ॥७९०॥

छंद रसवाल

मीर पिल्ले तवै, बीर अबदुल जवै।
कहै बैन बाहं, सुनो आप साहं ॥७९१॥
गहूँ राव ल्याऊं, रणत्थंभ पाऊं।
कमाँनम्मुर्थावं, गरे डारि जीवं ॥७९२॥
लगू साह पग्गें, उठे कोपि जग्गें।
हजारं सु बीसं, नमाए सु सीसं ॥७९३॥
गजं साज[2] तीसं, करै जीव रीसं।
उतै राव कोपे,[3] पिले बीर ओपे ॥७९४॥
उठी बंक मुच्छं, लगी जाय चच्छं।
मनो बीर मग्गं, अकासं सु लग्गं ॥७९५॥
मिले बीर दोऊ, करै जोर सोऊ।
भिरै गज्जि गज्जं, बजे बीर बज्जं ॥७९६॥
तुरंगं तुरंगं, मचे जोर जंगं।
पयद्दं पयद्दं, बके कोप बद्दं ॥७९७॥
भभक्कंत बाँनं, उड़े लग्गि ज्वाँनं।
लगे तेग सीसं, उभै फाँक दीसं ॥७९८॥
लगे जम्म दड्ढं, करै पाँन गड्ढं[4]।
परी लुत्थि जुत्थं, करी जो अकत्थं ॥७९९॥
करी जूह लोटैं, पवै जानि कोटैं[5]।
तुरंगं धरन्नी, सु लड्डै बरन्नी ॥८००॥

---

१ अप्प अप्प। २ सज्ज। ३ कुप्पे। ४ दाढं, गाढं। ५ लुट्टै, कुट्टै।

नचैं रुंड[1] वीरं, धरन्नी सरीरं[2] ।
सिरं हक्क[3] मारें, धरैं अत्र धारैं ॥८०१॥
उरज्झंत अंतं, मनो ग्राह तंतं ।
गहैं अंत चिल्ली[4], अकासं सामिल्ली ॥८०२॥
मनो बाल मट्टी[5], उड़ावंत गुड्डी ।
उड़ैं[6] स्रोण छिच्छं, फुवारे[7] सु अच्छं ॥८०३॥
बहै स्रोण नद्दं, मनो नीर भद्दं ।
झरैं पग्ग हथ्थं, तरब्बूज मथ्थं ॥८०४॥
पलक्की चमक्की, उठैं वीर नक्की ।
कियौ अट्टहासं, सुकाली प्रकासं ॥८०५॥
जहाँ खेत्रपालं, गुहै संभु मालं ।
भखैं गिद्ध बोटी, फटै तासु पोटी ॥८०६॥
पटं सहस सूरं, वरे जाय हूरं ।
गजं तीस पारे, पहारं करारे ॥८०७॥
सतं दोय बाजी, परे खेत साजी ।
तहाँ पद्म सैनं, रहे देखि[8] नैनं ॥८०८॥
तबै सेख सीसं, नवाए सरीसं ।
हमीरं सुरावं, कहै बैन चावं ॥८०९॥
दुहूँ सैन मध्ये, महिम्मा सु बध्ये ।
कहै उच्च वाचं, सुनो राव साचं ॥८१०॥
लखो हथ्थ मेरे, वदै बैन टेरे ।
सुनो साहि बैनं, लखो अप्प[9] नैनं ॥८११॥
खरो मैं जु खूनी, रहै क्यों ज सूनी ।
गहौ क्यों न अब्बं, कहै बैन तब्बं ॥८१२॥

१ रुद्र । २ सुजोरं । ३ हाका । ४ चिल्ही, सिल्ही अंत्यानुप्रास । ५ उड्डी । ६ उठैं । ७ फुहरें, फुहारें । ८ दिखिख, पिक्खि । ९ आप ।

यहीं सेस सीसं, रह्यो मैं जु दीसं।
करो सत्य बाचं, ततो आप साचं ॥८१३॥
तबै पातसाहं, खुरासाँन नाहं।
करे[1] कोप पिल्लं, तहाँ सेख मिल्लं ॥८१४॥
कहै साह बैनं, सुनो सर्ब सैनं[2]।
गहै सेख ल्यावै, इतो हम्म पावै ॥८१५॥
जु बारा हजारं, मनं[3] सब्ब भारं।
नोबति निसाँनं, अरू तेग माँनं ॥८१६॥
सुने बैन ऐसे, खुरासाँन रेसे।
हजारं सतीसं, निवाए[4] सु सीसं ॥८१७॥
मदक्की जवाँनं, पिले सेख पानं।
तबै सेख धाए, राव कौ सीस नाए ॥८१८॥

दोहरा छंद

करि सलाँम हम्मीर कौं, सेख लई बड़ बग्ग।
दुहूँ[5] सेन देखत[6] नयन, रिस करि कढ्ढे[7] खग्ग ॥८१९॥

चौपाई छंद

कहे साहि सुनि मदकी बैनं।
यह कुट्टन[8] कौ गहो सु ऐनं ॥
जीवत पकरि याहिं अब लीजै[9]।
मनसब द्वादस सहस करीजै[10] ॥८२०॥
सद्दकि[11] संग मीर खुरसानी।
तीस सहस चढ़ि चले अमानी ॥
गहन सेख महिमा कै काजै।
कुप्पिय[12] मीर खेत चढ़ि बाजै ॥८२१॥

---

१ करी कुप्पि। २ एनं। ३ मनो। ४ नमाए। ५ दोउ। ६ दिक्खत, पिक्खत। ७ कढ्ढिय, कढ्ढे। ८ कुट्टम। ९ लिज्जिय। १० करिज्जिय, सुकिज्जिय। ११ सदकी। १२ कोपे।

इतै सुसेख राव पद बंदे।
गहै तेग मन माहिं अनंदे ॥
इतै सेख सदकी उत आए।
आप[1] आप जय सद्द सुनाए ॥८२२॥
कहै[2] सदकि सुनि साह सुजाँनं।
ठठा भखर बसि करिए पाँनं ॥
कहा सेख हम्मीर सु रावं।
उठे युद्ध कौं करि जिय चावं ॥८२३॥

छप्पय छंद

जुटे बीर दुहुँ जंग अंग अनभंग महाबल।
चढ़े जाँन आमाँन बढ़े निस्साँन[3] बरद्दल ॥
करि कमाँन करि पाँन काँन लौं करिखह रक्खि।
धरि नराच गुन राखि धाव करि बेगि बरक्खि ॥
निज संग बीर सत पंचजुत सेख भखरौ यह धरिव।
उत खुरासाँन पट सहस ले सदकी सद हाँकी करिव ॥८२४॥
तेग बेग बहु कढ़ी मनो पावक्क लपट्टी।
करी बाज नर जुट्टि[4] कटे सिर पाप उपट्टी ॥
परे धरनि धर नचै उदर कटि अंत भभक्के।
चली रक्त धर धार लुत्थ परि लुत्थ धधक्के ॥
पट सहस खिसे पुरसाँन दल लिय निसाँन बाने सुबर।
किए नजर राव हम्मीर के फत्ती फते महिमा समर ॥८२५॥
आइ सेख सिर नाय राव कूं बचन सुनाए।
धनि छत्री चहुवाँन सरन पन जग जस छाए ॥

---

१ अप्प अप्प। २ कहै सदक्की साह सुजाँनं। ३ नीसाँन। ४ जुट्टि कट्टि।

तेज राज धन धाँम तात तिय हठ नहिं छंडे ।
राखि[1] धर्म्म द्रढ़ सत्य कीर्ति जस जुग जुग मंडे ॥
भरि नीर नैन महिमा कहै अब जननी कब जन्म दे ।
जब मिलों राव हम्मीर तुम बहुरि समै ह्वैहै कदे ॥८२६॥
कहै राव हम्मीर धीर नहिं हीन उचारो ।
सूर न करै सनेह देह छिन भंग बिचारो ॥
बिछुरन मिलन संजोग आदि एसी चलि आई ।
ज्यों जीवन[2] त्यों मरन सकल[3] बेदन यह[4] गाई ॥
कीजे[5] न भम[6] अनभंग चित मिलैं सूर के लोक सब ।
हम तुम जु साह बहुरों[7] तिया ह्वैहि एक[8] तन तजि सुअब ॥८२७॥
तज्जब स्वारथ लोभ मोह काहू नहिं करिये ।
देह धरे परवाँन[9] स्वामि का[10] कारज सरिए ॥
को इतसों ले जात कहा उतसा ले आयो ।
रहै अमर कीरत्ति पाप नरदेह सु गायो ॥
सुनि सेख देखि थिर नाहिं कछु तन मट्टी मिलि जाइये ।
का सोच मरन जीवन तना यह लाभ सुजस सों पाइये ॥८२८॥
सुनि हमीर के वचन साह पर सनमुख धाए ।
मीर गाभरू बीर आनि तिन[11] सीस नवाए ॥
अलादीन पतिसाह इतै सिर ऊपरि[12] राजै ।
तुम सिर राव हमीर स्वामि आपन[13] कुल लाजै ॥
नन तजो नौन की सरत दोउ यह तन तिल तिल खंडिये ।
मिलिये जु भिस्ति[14] मैं जाय अब धर्म न अपना छंडिये ॥८२९॥

---

१ रक्खि । २ ज्यामन, जाँमन । ३ चऊ । ४ मैं, बिचि । ५ किज्जे । ६ भंग । ७ गवरू, गभरू । ८ इक्क । ९ परमाँन । १० जो । ११ रिस । १२ उप्पर । १३ अप्पनि । १४ बिहस्त ।

हँसि अलावदी साह सेख कौ बचन सुनाए[१]।
दिली छाड़ि करि सीस बहुरि मुझकौं नहिं[२] नाए॥
मिलो मुझे तजि रोस हुरम मैं तुमकौं दीनी।
अर गौरखपुर देस देहुँ तुम कौ सत चीन्ही[३]॥
मुसकाय साहि महिमा कहै[४] बचन यादि वै किज्जिये।
जननी जनमे फिरि आनि भव जबै मिलन गन लिज्जिये॥८३०॥

दोहरा छंद

जब[५] जननी जनमै बहुरि, धरूँ देह कहुँ आनि।
तऊ न तजों हमीर सँग, सत्य बचन मम जानि॥८३१॥
तब सु राव हम्मीर सुनि, कीनी[६] मदति सु सेख।
हजरति महिमा साह कौ, बात लगावत देखि॥८३२॥
कहै हमीर यह बचन पर, गही साह सों तेग[७]।
लोभ न करिये[८] जीव का, गहो[९] साह सो बेग॥८३३॥

चौपाई छंद

कहै मीर गभरू ये बातैं।
गहे[१०] सार नहिं करिये घातैं॥
हुकम धनी के कौ प्रतिपालो।
आइ अदल्लि सीस पर चालो[११]॥८३४॥
सुनि गभरू के बचन सुभाए।
महिमा फूलि खेत मैं आए॥
सनमुख सार सम्हाय सु बढ्ढै।
माया[१२] मोह त्यागि खग कढ्ढै॥८३५॥

---

१ सुभाए। २ न नवाए। ३ अरु गौरखपुर औधि देस दीनो (दिन्नो) सति चीन्हीं (चिन्हीं)। ४ कही। ५ अब। ६ कीन्ही। ७ तेक। ८ किज्जिय। ९ तो रहै हमारी टेक। १० गहौ सार रन कौ रचि घातैं। ११ प्रतिपालहु, भालहु अंत्यानुप्रास। १२ महिमा।

दोहरा छंद

दोऊ बंधु रिसाइ कै, लई बाग[1] इमि संग।
उतरि खेत मैं मिलि उभै, कीनौ हरष उमंग ॥८३६॥
मीर गाभरू पाँय परि, हुकम माँगि कर जोरि।
स्वामि काज तन खंडिये, लगै[2] न कबहूँ खोरि ॥८३७॥

हनूफाल छंद

मिलि बंधु दोऊ ध्याय। बहु हरष कीन[3] सुभाय।
अब स्वामि धर्म सुधारि। दोउ उठे बीर हँकारि ॥८३८॥
असमाँन[4] लग्गिय सीस। मनो उभै काल स दीस॥
इत कोप महिमा कीन्ह। हम्मीर नौन सु चीन्ह ॥८३९॥
उत मीर गभरू आय। मिलि सेख कै परि पाँय॥
कर तेग बेग समाहि। रहे दुहूँ सेन सचाहि ॥८४०॥
कम्माँन लीन सु हत्थ। जनु[5] सार कार सुपत्थ॥
धरि स्वामि काज[6] समत्थ। दोउ[7] उभै जुद्ध सपत्थ ॥८४१॥
दुहुँ द्वंद जुद्ध सुकीन। मनु जुटे मल्ल नवीन॥
तरवारि बज्जिय ताय। मनु लगी ग्रीषम लाय ॥८४२॥
कटि चरण सीसरु हत्थ। परि लुत्थ जुत्थ सु तत्थ॥
घमसाँन थाँन सु धीर। धर धरण (नि) खेलत बीर ॥८४३॥
गजराज लुट्टत भुम्मि। बहु तुरंग परत सु झुम्मि॥
बिव बीर बज्जिय सार। तरवारि बरसहु[8] धार ॥८४४॥
दोउ भ्रात स्वामि सकाँम। जग मै किये अति नाँम॥
दोहुँ बीर देखत हूर। चढ़ि गए मुख अति नूर॥

---

१ बग्ग। २ लपकत कबहूँ खोरि। ३ कियउ। ४ असमाँन सीस (मत्थ) सुलग्ग (लग्गि)। मनु उभै काल सुजग्ग। ५ बर सार धार सुपत्थ। ६ कज्ज धम्र्म। ७ मनु उठ्यो। ८ फरसहु।

दल दोय दिक्खत बीर। पहुँचे विहस्त गहीर ॥८४५॥

दोहरा छंद

तिल तिल भे[1] अँग दोहुँन के, हने बाजि गजराज।
हजरत राव हमीर के, सबै सँवारे काज ॥८४६॥
मुसलमाँन हिंदवाँन[2] को, चले सेख सिर नाय।
चढ़ि बिमाँन दोऊ तहाँ, बिहस्त पहुँचे जाय ॥८४७॥

छप्पय छंद

कहै साह मुख बचन[3] सुनो हम्मीर महाबल।
अब न गहो तुम सार फिरै हम सकल दिली दल ॥
तुम्हैं माफ तकसीर राज रणथंभ करो थिर।
हम तुम बीच कुरॉन मुहिम नहिं करो दिलीसुर ॥
परगनें पाँच[4] दीनें अवर रणतभँवर भुगतो सदा।
जब लग सुराज हमरो रहै तुम सु राज राजो तदा ॥८४८॥

चौपाई छंद

कहै राव हम्मीर सु बानी।
सुनि दिल्लीस सत्य जिय जानी ॥
जाकी अदलि होय किमि मिट्टै।
नर तैं होनहार किमि घट्टै ॥८४९॥
तुम्हरो दयो राज किन पायो।
तुम्ह को राज कहो किन घायो ॥
बेर बेर कहा मुखे[5] उचारो।
कोटि म्याँनपन क्यों न बिचारो ॥८५०॥
कीरति अमर अमर नहिं कोई।
दुर्योधन दसकंध सु जोई[6] ॥

---

१ भए अंग। २ हितवाँन। ३ बच्च, बैन। ४ पंच दिन्निय।
५ मुक्ख। ६ कोउ, जोउ अंत्यानुप्रास।

काको गढ़ काकी यह दिल्ली।
हरि की दई हमैं तुम मिल्ली ॥८५१॥
हम तुम अंस एक उपजाए।
आदि पदम रिपि अंग उपाए॥
देव दोप उर धर भए न्यारे।
हम हिंदू तुम यवन हँकारे ॥८५२॥
तजिये भोग भूमि कै सबहीं।
चलिये सुरपुर बसिये अबहीं॥
संग हमारो पहुँच्यो जाई।
हम तुम रहैं सबहिं पहुँचाई ॥८५३॥
गहो हथ्यार राज सब छंडो।
राखो जस तन खंडि बिहंडो॥
अबै चालि सुरपुर सुख मंडो।
मृत्युलोक[1] के भोग सु छंडो ॥८५४॥

छंद त्रोटक

यह बात[2] कही चहुँवान तबै।
सुनि साह सबै भर पेलि जबै॥
करि साज सबै रण मंडि महा।
तिन भारथ पारथ जुद्ध सुहा ॥८५५॥
दल संग चढ़े सब सूर असी।
सब तोप सु बाँन कमाँन कसी॥
गजराज अनेक बनाय घने।
मनो पावस बद्दल मेघ तने ॥८५६॥
हय कंद अमंद सु पोन मनो।
बहु दाँमनि सार चमंकि भनो॥

---
१ मर्त्यलोक। २ बत्त।

घन गौर[१] सदायन देखतयं।
ध्वज बैरख मंडल लूरतयं ॥८५७॥
बिरदावत बृंद कविंद घने।
मनो चातक मोर अनंद बने॥
बगपंति सुदंति अनंत रजे।
धुरवा करि सुंड छुटे भरजे॥८५८॥
बहै[२] धार अपार जुधार बही।
घन घोर सु नौबति नाद वही[३]॥
कर सोर समोर नकीब चले।
यह भाँति दोउ दिस[४] बीर[५] मिले॥८५९॥
करिये हंकार सुबीर चले।
... ...॥
कह मीर सिकंदर नेम कियं॥
सिर नाय सुभाय हुकम्म लियं॥८६०॥
पहलै पुर जाय सु बीर भगं।
रणथंभ कहा हजरत्ति अगं॥
तुम सेर करथौ वह आप जथा।
अब देखहु मोर सुहाथ जथा॥८६१॥
सु जमीति खधार लई सबही।
अरु मीर सिकंदर आय[६] सही॥
करि कोप सिकंदर मीर चढ़े।
तब राव हमीर कै भील कढ़े॥८६२॥
तब भोज कही अब मोहिं कहो।
इतने अब हत्थ हमार लहो॥

१ घन घोर। २ वह सार अपार सु धार हुई। ३ जुई। ४ दल।
५ बोर। ६ आ पठई।

तब राव कही रणथम्भ अगै ।
दुइ(रहु) जैत अगै सिर भील तगै ॥८६३॥
अर जैत सरन्नि सुराखि तबै ।
सरि कौन करै तुम्हरी जु अबै ॥
तुम संग रतन्न चितोर गढ़ं ।
चढ़ि जाहु हमार जु काज बढ़ं ॥८६४॥
सुनि भोज इसे कहि बैन तबै ।
यह सीस तुम्हार निमित्त[1] अबै ॥
रणथंभहिं हेतु जु सीस दिवै ।
अब और कहा बिन राव जिवै ॥८६५॥
यह औसर फेरि बनै कबहीं ।
हजरत्ति हमीर मिलै जबहीं ॥
कहि बत्त इती जु सलाँम करी ।
अपनी सब लीन जमीन[2] खरी ॥८६६॥
सब भील कसे हथियार जबै ।
निकसे कढ़ि भोज अमाँन तबै ॥
कमठा[3] कर तीर सम्हार उठे ।
उत मीर सिकंदर आय जुटे[4] ॥८६७॥
बजि घोर निसाँन प्रमाँन[5] मिले ।
दल कोप करे बहु तोप चले ॥
घमसाँन जुबाँन कियौ तबहीं ।
दुहु सैन सुगेन बने जबहीं ॥८६८॥
गजराज हरौल करे बलयं ।
उत सार अपार कढ़े दलयं ॥

१ निमत्त, निमत्य । २ जमीति । ३ कमठार कुठार । ४ उठे, बुठे । ५ अमाँन ।

सजि भील अनी सुघनी हलकौ।
कसि गातिय[1] कोप कियौ बलकौ ॥८६९॥
कमठा कर धार अपार बलं।
तब भोज मिल्यौ तहँ साह दलं॥
नट कूदत[2] जानि सु ढोल सुरं।
बहै[3] तीर अमीर सुजानि छुरं ॥८७०॥
करि कोप तबै गजदंत कढ़े।
मुरि मूरिय धूरि उपारि बढ़े॥
सब भीलन[4] मत्त सुकोप कियं।
जनु भाल बली मुख लंक लियं ॥८७१॥
जनु मार अपार कटार चलैं।
बहु मीर अमीर रु भील मिलैं॥
हजरत्ति मराहत भोज बलं।
जनु मानव रिच्छ भिरत्त दलं ॥८७२॥
दोउ भोज सिकंदर मीर जुटे।
मुख बानिय मीर अमीर रटे॥
जब भोज कहै करि वार तुहीं।
कहै मीर सिकंदर बूढ़ तुहीं ॥८७३॥
अब तोपर वार कहा करिये।
सब लोक अलोक महा भरिये॥
तब भोज स कोप कियौ रण मैं।
करि कोप कटार दियौ तन मैं ॥८७४॥
तन कंगल भेदि धरन्नि परयौ[5]।
किरवाँन चलाय स मीर हरयौ[6]॥

१ कागति। २ कुद्दत। ३ बहु। ४ भिल्लन। ५ धँस्यौ। ६ हँस्यौ।

सिर भोज परयौ धरनी[1] तल मैं।
धर धावत रुंड लरै[2] बल मैं ॥८७५॥
उत मीर सिकंदर भूमि परे[3]।
वर हूर[4] सुदूर सुआनि वरे॥
परि खेत खधार अपार सबै।
बिन सीस पराक्रम भोज अबै ॥८७६॥
भजि साह अनी तजि खेत तबै।
परि भोज समाज सबीर सबै॥
कसमीर अमीर सहस्र पची।
सुमिले[5] धर धूर अली सु सची ॥८७७॥
तहाँ भोज स साथि हजार भले।
वरि बाल सबै सुर लोक चले ॥८७८॥

दोहरा छंद

परे भोज सँग भील भर, सहस दोइ इक ठौर।
सहस पचीस कसमीर के, अरुपधार भर मौर[6] ॥८७९॥
सहस तीस पंधार के, और सिकंदर मीर।
अली सयद[7] के संग भट, परे मीर[8] दस भीर ॥८८०॥
भजी फौज पतसाह की, बिकल सकल उमराव।
दोय सहस भट भोज सँग, रहे खेत करि चाव ॥८८१॥

चौपाई छंद

राव हमीर भोज ढिग आए।
देखि[9] सु भोज नैन जल छाए॥

---

१ धरनिथल। २ भुम्मि लरै चल मैं। ३ भुम्मि गिरे। ४ हूरन। ५ उलटी भइ सेन दिलीस बची। ६ और। ७ सैद। ८ पीर। ९ देखि भोज भरि द्रग जल छाए।

तुम सब अमर भए कलि माहीं।
स्वामि काँम सब देह सराहीं ॥८८२॥
जो न सिकंदर साह जु आए।
राव हमीर कै सनमुख धाए॥
देखि साह आपन दल भज्जै।
हजरति देखि हमीरह लज्जै ॥८८३॥
राव हमीर खेत महिं ठाढ़े।
हजरति अंग कोप अति बाढ़े॥
कहै साह तब कोप सु बैनं।
फिरे सकल नीचे कर नैनं ॥८८४॥
सर्बसु भूमि[1] भोग कर नीके।
जंग समय लालच कर जीके॥
भगे जात जीवत माहिं अबहीं।
गई बात[2] बीरन की सबहीं ॥८८५॥
सुन ये बैन बीर खिसयाने।
राव हमीर सु जुद्धहिं ठाने॥
जैन सिकंदर साह अमानो।
अरु पंधार भीरु[3] सब जानो ॥८८६॥
यह हम्मीर राव चहुवाँन।
जुरे जुद्ध मनु काल समाँन॥
तोप तुपक चद्दर सब दग्गिय[4]।
कर कृपाँन चहुवाँन सु जग्गिय[5] ॥८८७॥

भुजंगप्रयात छंद

परे दोय हज्जार भीलं[6] समत्थं।
तहाँ च्यारि ओरं गिरे खेत सत्थं॥

१ भुम्मि। २ बूड़ि। ३ मीर। ४ दागी, त्यागी। ५ जागी। ६ भिल्लं।

परे कासमीरं सहस्त्रं पचीसं।
अली सेर मीरं परे संग दीसं॥८८८॥
तबै साह कोपं किये बैन रीसं।
फिरे बीर लज्जा समेतं सुदीसं॥
तबै राव हम्मीर कोपे सुजाँनं।
चले[2] संग चहुवाँन बलवाँन राँनं॥८८९॥
लिये सेन पंधार दो लक्ख जामी।
जबै जैन साहं सिकंदर सु नामी॥
इतै राव हम्मीर कम्माँन लीनी।
मनो पत्थ भारत्थ सारत्थ कीनी॥८९०॥
लगैं तीर अंगं हुवे पार गज्जैं।
परैं पील भुम्मी[2] सु घुम्मैं गरज्जैं॥
कहूँ पक्खरं[3] बाजि फूटैं[4] सरीरं।
छुटैं प्राण बाँन सु लागंत तीरं।[5]॥८९१॥
जुरे जंग मीरं अमीरं सु चौजं।
इतै राव हम्मीर उतं[6] साह फौजं॥
चढ़े[7] राव के रावतं जो अमानै।
बने कंगलं अंग जंगं सु ठानैं॥८९२॥
करैं रंग के अंग बाने अनेकं।
घने केसरं साज लीने सु तेकं॥
किते बीर तोरा तबल्लं बनाए।
घने नेत बंधं गजं गाह लाए॥८९३॥
किते मौर बंधं सजे केसराँनं।
किते बीर बाँके चढ़े चाहुवाँनं॥

१ चढ़े। २ भूमैं सु चक्कार भज्जैं। ३ पाक्खरं। ४ फुट्टैं। ५ मनो मेघ पावस्स बूँदंत नीरं। इसे राव के हत्थ लागंत तीरं। ६ तैं। ७ बढ़े।

पढ़ैं पाहि[1] बंदीजनं बृंद भारे।
मनो राति जोरंत टूटंत तारे ॥८६४॥
उठी उद्ध मोचं लगी नैन आई।
उठे रोम अंगं सुजंगं मचाई ॥
उते साह कीने[2] घने गज्ज अग्गैं।
मनो पाय चल्लैं पहारं सु मग्गैं ॥
तिन्हैं उप्परैं साह के बीर धाए।
गही तेग हथ्थं उरं कोप छाए ॥८६५॥
इते राव चहुवाँन के बीर कोपे।
मनो आजही साह के बीर लोपे ॥
गजैं सो हमीरं लखे खेत राजैं।
सबै सूर बीरं निसाँनं सु बाजैं ॥८६६॥
किते चाहुवाँनं पिले डील पीलं।
उठावंत मारंत पारंत डीलं ॥
कहूँ सुंडि पे तेग बाहंत ऐसी।
मनो रंभ पंभं कढ़ैं तेग जैसी ॥८६७॥
कटैं दंत मातंग भाजंत[3] जेते।
गहैं पुच्छ सुड्डं पटक्कंत केते ॥
परैं पील पब्बय मनो खेत भारी।
बहैं रक्त[4] घावं मनो घाव कारी ॥८६८॥
तिहीं काल कबिराज उप्पम बिचारी।
बहैं स्यौंम पब्बै सु गेरू पनारी ॥
किते बाजि गाजं पटक्कंत भूमैं।
भए अंग भंगं खरे घाव घूमैं ॥८६९॥
कढ़ी तेग बेगं लपट्टं सु जानो।
मनो ग्रीपमं लाय लग्गी सुमानो ॥

१ ताहिं। २ कीनं। ३ भजंत। ४ रत्त।

जुटे बीस बीरं गहीरं सु गज्जैं ।
भजे कायरं[1] खेत छंडे सु लज्जैं ॥६००॥
कटे सीस बाहू कहूँ पाव ऐसे ।
बहैं तेग बेगं मनो डार जैसे ॥
लगैं कंध ग्रीवा तबै सीस टूटैं[2] ।
परैं सीस धरनी तबै रुंड फूटैं[3] ॥६०१॥
घने सीस तर्बूज से भुम्मि डारैं ।
लरैं रुंड खेतं सिरं हक्क[4] मारैं ॥
बहैं बाँन किरवाँन[5] बज्जन्त[6] सारैं ।
मनो काठ काटंत[7] कट्टे कुहारैं ॥६०२॥
बहैं सील अंगं परैं पार होई ।
मनो रुंड मैं नाग लपटंत सोई ॥
कटारी लगैं अंग दीसंत पारं ।
मनो नारि मुग्धा कढ्यौ पानि वारं ॥६०३॥
छुरी वार सूरं करैं जार ऐसे ।
मनो सर्पनी पुच्छ दीखंत जैसे ॥
लगैं जोर सों यों बिषाणं जवाँनं ।
हुवे अंग पारं जुटैं जार बाँनं ॥६०४॥
भए लथ्थ बथ्थं दुहूँ सेन ऐसे ।
मनो यों अपार भिरे मल्ल जैसे ॥
पछारैं उखारैं भुजा सीस सूरं ।
उछारैं[8] हंकारैं उठैं[9] बीर नूरं ॥६०५॥
मची मांस मेदं धरा कीच भारी ।
चली फुट्टि खेतं नदी मैं[10] अकारी ॥

१ कातरं । २ टुट्टैं । ३ फुट्टैं । ४ हाँक । ५ कम्माँन । ६ बाजंत ।
७ कट्टू, कट्टूंत । ८ उछल्लैं, हकल्लैं । ९ उड्डैं । १० वह ।

बनैं कूल पीलं सुडीलं सु बज्जी।
बहै बीचि[१] लोहू जलं धार गज्जी ॥६०६॥
रथं चक्र आवर्त्त सो भौंर मानो।
घनं पंस बेला कुलं रूप मानो ॥
नरौ ग्राह पावं करं खर्प जैसे।
बनी अंगुरी मीन झींगा सु तैसे ॥६०७॥
बहैं सीस इंदीबरं जानि फूले[२]।
खुले नैन यों चंचरीकं सु भूले ॥
सिवालं सु केसं सुबेसं बिराजैं।
बने घाट बीसों खरे सूर गाजैं ॥६०८॥
भरैं जुग्गनी खप्परे सूर लोही।
मनो ग्राँम बामा पनीहार सोही ॥
करैं केलि भैरव हरं संग काली।
मनो न्हात बैसाष कात्तिकवाली ॥६०६॥
इसे घाट ओघाट[३] किन्ने[४] हमीरं।
डरैं कायरं[५] साह कै मीर पीरं ॥
भजी साह सेना सबै लाज डारी।
भिरे खेत चहुवाँन गज्जंत[६] भारी ॥६१०॥
किते गिद्ध जंबू करालं सु चिल्ली।
बगं[७] हंस केते बिहंगं सु मिल्ली ॥
परे खेत साहं सिकंदर सु नामी।
सवा लक्ख खंधार कै मीर बामी ॥६११॥
गिरे खेत हथ्थी[८] सतं पौन ऐसे।
मनो पर्वतं[९] अंग दीखंत जैसे ॥

---

१ बिचि। २ फुल्ले, भुल्ले अंत्यानुप्रास। ३ घट्ट औघट्ट। ४ कीने। ५ कातरं। ६ गाजंत। ७ बकं। ८ हाथी। ६ पव्रुयं।

कसे साठि[1] हौदा परे खेत माहीं ।
जरावं जरं कंचनं के सुमाहीं ।।६१२।।
परे डंबरं सो कई गज्जराजं ।
कई प्राणहीनं कई मो समाजं ।।
परे मत्त पंचं निसानन्नवारे ।
किते गज्जराजं परे खेत भारे ।।६१३।।
सवा लक्ख वाजी परे जे अमाँनं ।
परं खेत साहं सिकंदर सुजाँनं ।।
तिने साह[2] लक्खं पचासं सवायं ।
परे एक[3] लक्खं दिलीसं सुपायं ।।६१४।।
दुहूँ इक्क[4] मीरं परे खेत नामी ।
कहूँ नाँम ताके परैं खेत वामी ।।
परे दूसरे मीर सिर खाँन भारी ।
रहे खेत महरम्म खाँनं सुधारी ।।६१५।।
परे जोमआदिन से मीर नामी ।
मोहोवत्त मुदफ्फर परे इक्क ठामी ।।
परे नूर मीरं अफरस्स धीरं ।
बली इक्क निज्जाँम दीनं सु पीरं ।।६१६।।
परे मीर एते दुहूँ खेत सूरं ।
बहै नीर ज्यों रत्त[5] वाहंत कूरं[6] ।।
नची जुग्गनी और भैरव सु नच्चैं ।
भखैं गिद्ध आमिप्प जंबू सु रच्चैं ।।६१७।।
थके सूर रथ्थं सु जाँमं सवायं ।
महावीर घायं स घूमंत तायं ।।

---

१ सद्वि । २ सात । ३ इक्क । ४ एक । ५ रक्त । ६ सूरं, पूरं ।

बरैं अच्छरी सूर[1] बीरं सु अच्छे ।
खुले मोक्ष[2] द्वारं प्रबेसंत गच्छे ॥६१८॥
भयौ मंडलं कुंडलं भाँन नद्दं ।
कढ़े सूर बीरं सु धीरं उपद्दं ॥
महा रौद्र भो खेत देखंत जानो ।
कियौ अद्भुतं देव सो जुद्ध मानो[3] ॥६१९॥
परे खेत खंधार मीरं सु राते ।
इके लक्ख हज्जार पंचास[4] जाते ॥
इते सूर हम्मीर के सहस च्यारं ।
सु तो बीर धीरं खुले मोक्ष द्वारं ॥६२०॥

दोहरा छंद

तब हमीर हर ध्याँन करि, हर हर हर उच्चारि ।
गज निज सनमुख[5] पेलि कै, जुरे[6] साह सों रारि ॥६२१॥

त्रोटक छंद

गजराज हमीर सु पेलि[7] बरं ।
मुख तें उचरंत स भाव हरं ॥
किरवाँन[8] कढ़ी बलवाँन हथं ।
सनमुक्ख सु साहि सु बोलि[9] जथं ॥६२२॥
सुनिये सु अलावदि बैन अयं ।
करि द्वंद सु उद्ध सु जुद्ध धयं ॥
सब सेन कहा करिहैं सु सुधं ।
हम आपन[10] इक्क[11] करैं सु जुधं ॥६२३॥
दुहुँ ओर उछाह अथाह सजे ।

१ आय । २ मोच्छि । ३ जानों । ४ पच्चीस । ५ सम्मुख पिल्लि के । ६ जुरिग, जुरिउ । ७ पिल्लि । ८ कम्माँन चढ़ी । ९ बुल्लि गथं । १० अप्पन । ११ एक ।

हजरत्ति सु कोप अकथ्थ[1] रजे ॥
सनमुक्ख हमीर सु आय[2] जुटे।
सब सथ्थ जथारथ बेग[3] हटे ॥६२४॥
तिहिं खेत[4] खरे[5] चहुवाँन नरं।
पतिसाह सबै दल भज्जि[6] भरं ॥
रहे मीर उजीर कछूक तबै।
चहुवाँनन कै दल देखि[7] जबै ॥६२५॥
पतिसाह कही यह कौन बनी।
सब सैन बड़ी[8] चहुवाँन तनी ॥
तब मंत्र वजीर सु एँम कह्यौ[9]।
तुम मित्र सदा गुन जानि लह्यौ ॥६२६॥
सुनिराव सु दूत पठाय दयौ।
चहुवाँनन सों हित जानि ठयौ ॥
अब[10] बिग्रह छाड़ि[11] सु संधि करो।
चहुवाँनन सों हित जानि डरो[12] ॥
अपराध हमैं सब दूरि करो।
तुम होहु अभै हम कूच धरो ॥६२७॥
नृप सों चर जाय कही तबहीं[13]।
सुनि राव यहै मुख बत्त[14] कही ॥
अब खेत चढ़े कछु संधि नहीं।
यह बत्त हमारि सुजानि सही ॥६२८॥
रिपु तैं बिनती[15] सुइ कातरता।

---

१ अगत्थ। २ आनि। ३ देखि। ४ अत्त, अत्थ, अर्थ। ५ अरे। ६ भाजि। ७ दिक्खि, पिक्खि। ८ बढ़ी। ९ कियौ, लियौ अंत्यानुप्रास। १० व्यग्रह। ११ छंडि। १२ दुहुँ ओर महा सुख भूरि भगे। १३ जबहीं। १४ बात। १५ बिन्नति।

अब[1] बृत्त कहे छल चातुरता ॥
अब जाहु यहाँ हम सेन सर्जी ।
बिन साह को जुद्ध करंत लजी ॥६२६॥

वचनिका

अब राव हम्मीर दूत कौं नीति सहित[2] उत्तर दियौ अरु युद्ध को उच्छाह कियो आपणां उमरावों सों कही आयुध[3] छत्तीस[4] सों च्यारि आवधां सूं युद्ध कीजे[5] अर जग मैं अमर जस लीजे ॥ तोप, बाण, चादरि, हथनालि, जंबूर, बंदूक, तमंचा, कमाँन, सेल इन[6] नै त्यागो । अरु आयुध च्यारि लीजे । तरवारि, छुरी, कटारी, बिपाण, मल्ल युद्ध करि हजरति नै हाथ दिखावो तो सायुज्य मुक्ति पावो ॥ पातसाह की ज्यान बखसीस करो और अच्छरी[7] बरो यह हम्मीर की आज्ञा माथै धरि राव हम्मीर कै उमरावाँ केसरिया साज बणाया अरु सेहरा बाँधि पातसाह की फौज परि हाँको[8] कियौ ॥

त्रोटक छंद

कछु जंत्र न तोप न कंत[9] नहीं ।
तजि चापन चक्रन बाँन जिहीं ॥
किरवाँन[10] लई कर बाजि चढ़े ।
चहुवाँन अमाँन सुखेत बढ़े ॥६३०॥
उत मीर बजीर रु साहि निजं ।
करि कोप तबै पतिसाह सजं ॥
तरवारि दुधार अपार बहै ।
सब माहि सु सैन समूह दहै ॥६३१॥

---

१ अरु बृत्थ (व्यर्थ) । २ संजुक्त । ३ आवुध । ४ छः तीस मैं । ५ किजिये । ६ यन । ७ अप्छरा । ८ हल्लो । ६ रुकंत । १० कम्माँन ।

कटि ग्रीव भुजा धर यों बिफरे[1]।
मनु काटि करे रस कुत्त हरे ॥
उड़ि मथ्थ परे धर रुंड उठे।
[2]चहुवाँन धरासह धार उठे ॥६३२॥
सिर मारत हाँक[3] परे धर मैं।
धर जुज्झत जुद्ध करै अरमैं ॥
कर जोर कटार सु अंग बहैं।
बहु खंजर पंजर देह दहैं ॥६३३॥
बहु रंचक[4] मुष्ठ कबथ्थ परैं[5]।
मल्ल जुद्ध समुद्ध सुबीर करैं ॥
पच रंग अनग्गिय खेत बन्यो।
[6]बकसी तब साह सों बैन भन्यो ॥६३४॥
भयभीत सु साह की फौज[7] भगी।
घमसाँन मसाँन सु ज्योति जगी ॥
परियो बकसी लखि नैन तबै।
उलटो गज कीन[8] सु साह जबै ॥६३५॥
इक संग उजीर[9] न और नरं।
फिरि रोकिय[10] साह अनंत भरं ॥
चहुवाँन धरम्म सु जानि कहै।
यह मारत साहि सु पाप अहै ॥६३६॥
अभिषेक लिलाट कियो इन कै।
महि ईस कहावत है तिन कै[11] ॥

१ बिहरे। २ बहु श्रोण धरा जु अपार उठे। ३ हक्क। ४ रंजक। ५ भरैं। ६ बकसी नृप साहि कौ आप हन्यो। ७ सैन। ८ किन्न। ९ वजीर। १० रुक्किय। ११ बिनके।

धरि अग्र[1] सु साह को पील जबै।
जहँ राव हमीर सु लाय पगै ॥६३७॥
अब साहि सु राव कही तबहीं।
तुम जाहु दिली न डरो अबहीं ॥
लखि साह को लोग मुरक्कि चल्यौ।
नृप आप हमीर सु खेत मिल्यौ ॥६३८॥

वचनिका

राव हम्मीर का उमरावाँ तरवारि कटारियाँ सों जुद्ध कियौ[2] पातसाह का अमीर उमरावाँ सूं मल्ल जुद्ध कर्‌यौ[3] तदि[4] पातसाह की फौज[5] बिकल होकर पातस्याह तैं छोड़ छोड़ भागी हम्मीर की रावताँ पातस्याह ने हाथी सुद्धां घेरि ल्यायो ॥ हम्मीर कै आगे ल्या खड़ो करय्यो। राव हम्मीर पातसाह ने देखि आपणाँ रावताँ सों कही याने छोड़ देओ यह ने पृथ्वीस कहै छै या अदंड छै॥ यह सुनि पातसाह ने छोड़ दियौ[6]। पातसाह ने उह की फौज में पहुँचाय दियौ। पातसाह वहाँ से खेत छोड़ कूच कियौ[7] ॥

दोहरा छंद

छाड़ि खेत पतसाह तब, परे[8] कोस द्वै जाय।
हसम सकल चहुवाँन न, लीनौ[9] तबै छिनाय ॥६३६॥
लिये साह नीसाँन तब, बाना जिते बनाय।
और सम्हारि सु खेत को, घायल सोधि उठाय ॥६४०॥
सब कै जतन कराय कै, देस काल सम आय।
राव जीति गढ़ को चले, हर्ष न हृदय समाय ॥६४१॥

---

१ अग्ग। २ कीधौ। ३ बादसाह का अमीर उमरावाँ सूँ मल्ल जुद्ध करि छुरी कटारी सों रंजका कौ प्रहार कर्‌यौ। ४ सज्जीभूत। ५ सेन। ६ दीधौ। ७ कीधौ। ८ परिय। ९ लिन्नौ।

बिन जाने नृप हर्ष मैं, गए भूलि[1] यह बात।
साह निसाँन सु अग्र[2] करि, चले भवन हर्षात ॥६४२॥

पद्धरी छंद

भगि साह सेन जुत उलट आय।
तजि विविध भाँति बाना[3] जु ताहिं ॥
सब साह हसम लीनी छिनाय।
नृप सकल खेत सोधो कराय ॥६४३॥
बजि दुंदुभि जय जय धुनि सु आय।
सब घायल नृप लीने उठाय[4] ॥
करि अग्ग[5] साह नीसाँन भुल्लि।
लखि भूप हसम हर कह्यौ फुल्लि ॥६४४॥
सब राज लोक तिय जिती जानि।
सब सार परस्पर हरी[6] आनि[7] ॥
चहुवाँन दुग्ग किन्नौ प्रवेस।
यह सुनिय राव तिय मरन सेस ॥६४५॥
चहुवाँन आनि देख्यौ सु गेह।
सिव बचन यादि कीनौ सु येह ॥
नृप सकल संग को सीख दीन।
रावत्त राण मंत्री प्रवीन ॥६४६॥
तुम जाहु जहाँ रतनेस आय।
किज्जे न सोच नृपता बनाय ॥
चहुवाँन राय हम्मीर आय।
हर मँदिर महँ प्रबिसंत जाय ॥६४७॥
करि पूजन भव[8] गणपति मनाय।
बहु धूप दीप आरति बनाय ॥

---

१ भुल्लि। २ अग्ग। ३ नाना। ४ उचाय। ५ अग्र। ६ हनी। ७ पानि। ८ बहु।

हो गिरजा गणपति सु मम देव ।
तुम जाँनत हो मम सकल भेव ॥६४८॥
अपवर्ग देहु तुम नाथ सिद्धि ।
तन छत्र धर्म्म दीजे[1] प्रसिद्धि ॥
करि ध्याँन संभु निज सीस हथ्थ[2] ।
नृप तोरि कमल ज्यों किय अकथ्थ ॥६४६॥
यह सुनिय साह निज स्रवण बात ।
चलि हर मंदिर कौ साह आत ॥
जलधार नैन लखि राव कर्म्म ।
कहि साहि मोहि दीनौ न मर्म ॥६५०॥
कछु दियौ हमें उपदेस नाहिं ।
तुम चले आप बैकुंठ माहिं ॥
तुम अभय बाँह दीनी जु सेप ।
जुग जुग नाँम राख्यो बिसेष ॥६५१॥
अरु महादानि तुम भए भूप ।
इच्छा सदाँन दीनं अनूप ॥
जगदेव मोरध्वज तैं बिसेष ।
जस लयौ लोक तुम रक्खि सेख ॥६५२॥

वचनिका*

......आगै (अग्गै) साह कै नीसान देखि राणी आसमती आपणा परिवार समेति परस्पर प्रहार करि खंग (खग्ग) प्रहार कर्यौ । जोहर करि देह त्यागी । सो राव हम्मीर ब्यौरो सुन्यौ और सिव कै वचन यादि कर्यौ । और यह निस्चय

१ दिज्जिय । २ मत्थ । * हस्तलेख में एक पन्ने के न होने के कारण पूरी वचनिका नहीं दी जा सकी ।—सम्पादक

जानी कि वर्ष चौदह १४ पूरे भए गढ़ की अवधि पूर्ण हुई तातैं यह सरीर राखनो (रक्खनो) उपहास्य है और छिन भंग सरीर को राखनो आछ्यौ नहीं। यह बिचारि सिव कै मंदिर गए और आप एक सेवग कने राखि सिव कौं षोड़स प्रकार पूजन करयौ और यह वर्दान माँग्यौ कि हे सिव तुम ईस्वर हो। सेवक हृदय के जाननहारे हो और सबके प्रेरक हो तातैं हम्मीर (हमरी) यह प्रार्थना है मुक्ति दीजे तो सायुज्ज्य दीजे। जन्म जन्म विषैं छत्रीकुल मैं जन्म पाऊँ यह कहि के खंग (खग्ग) आप हाथ ले के सीस उतारयौ सिव पिंडी पै चढ़ाय दियौ। तब सदासिवजी प्रसन्न होय के आसीर्बाद दियो तिहारे कुल की जय होय॥

दोहरा छंद

साह कहत हम्मीर सौं, लेहु मोहि अब संग।
धर्म रीति जानो सु तुम, सूर उदार अभंग॥६५३॥

पद्धरी छंद

मुसकाय सीस बोल्यौ सु बानि।
तुम करो साह मम वचन कानि॥
हम तुम सु एक जानो न और।
तजि मोह देह त्यागो सु तौर॥६५४॥
लीजे[१] सुभ्भाँफ सागर सु जाय।
तब मिले आप अप्पै[२] सु आय॥
यह कहिस सीस मुख मूँदि होत।
तब साहि ग्याँन हृद भो उदोत॥६५५॥
उठि साह सीस बदन सु कीन।
करि प्रणाम संभु को ध्यान लीन॥

१ लिज्जिय। २ अप्प।

हजरत्त[1] आय डेरै सु तब्ब।
उज्जीर मीर बोले[2] सु सब्ब ॥६५६॥
तुम जाहु सकल दिल्ली सथाँन।
अलबृतहिं राज दीजे सु आँन॥
नहिं करो मोर अज्ञा सु भंग।
सेवक्क धर्म्म यह है अभंग॥६५७॥

दोहरा छंद

आयसु पाय सु साह की, चढ़े सकल सजि सेन।
महरम खाँ उज्जीर तब, आए[3] दिली सु ऐन॥६५८॥
दयौ राज सिर छत्र धरि, अलाबृत्त तिहिं काल।
घरि घरि अति आनंद जुत, यह बिधि प्रजा सुपाल॥६५९॥
रणतभँवर के खेत कौ, कीनौ सकल प्रमाँन।
प्रथम हने रणधीर ने, बहुरि सेन परिवाँन॥६६०॥
दोय लक्ख रूमी परे, दोऊ कुँवर उदार।
सेन आरबी[4] की जिती, हनी जु असी हजार॥६६१॥
हने मीर द्वै सत सतरि, और सिकंदर साह।
अट्ठ[5] लक्ख खंधार के, हने मीर निज आह॥६६२॥
सवा सहस गजराज[6] परे, दोय लख बाजि प्रसिद्ध।
द्वादस लख सेना प्रबल, हनी हमीर सुसिद्ध॥६६३॥
मस्तक राव हमीर कौ, किय[7] सुमेर हर आप।
मुक्ति[8] द्वार सबई खुले, बिद्या बर्प सुथाप॥९६४॥

छप्पय छंद

बिदा कीन[9] उज्जीर कूँच[10] दिल्ली कौ कीनौ[11]।

---

१ हजरत्ति। २ बुल्ले। ३ आयउ दिल्लिय एेन। ४ अरब्बिय। ५ अट्ठ। ६ गजमत्त। ७ कियौ। ८ मोक्खि द्वार सब खुल्लिये। ९ कियउ। १० कुच्च। ११ किन्नव, लिन्नव अंत्यानुप्रास।

तब सुसाह तजि संग बचन हजरत को लीनौ ॥
सेतबंद पर जाय पूजि रामेस्वर नीकै ।
परे सिंधु मैं जाय करे मन भाते जी कै ॥
उर्बसी साह हम्मीर नृप सेख मीर सब नाक गय ।
करि लोकपाल आदर अखिल जय जय जय हम्मीर कय ॥६६५॥
मिले स्वर्ग मैं जाय साह हम्मीर हरक्खे ।
महिमा मीररु बाल त्रिबिध मिलि सुमन बरक्खे ॥
जय जय जय हम्मीर सकल देवन मुख गाए ।
लोक अमर कीरत्ति मुक्ति परलोक सुपाए ॥
माणिक[1] राव चहुवाँन कुल दैन खंग[2] दोऊ[3] धरत ।
कहि जोधराज यह बंस मैं ननकारी नाहिंन करत ॥६६६॥

दोहरा छंद

सुनत राव हम्मीर जस, प्रीति सहित नृप चंद ।
मनसा बाचा कर्मना, हरे जोध कै द्वंद ॥६६७॥
चंद्र नाग बसु पंच गिनि, संवत माधव मास ।
सुक्क सु त्रतिया जीव जुत, ता दिन ग्रंथ प्रकास ॥६६८॥
भूपति नीवागढ़ प्रगट, चद्रभाँन चहुवाँन ।
साम दाँम अरु भेद जुत, दंडहिं करत खलाँन ॥६६९॥

इति श्रीमन्महाराजाधिराज-राजराजेंद्र-श्रीमदखिल-चाहुवाँन-
कुल-तिलक नीमराना-अधिपति श्रीमहाराजा चंद्र-
भाँनजी-देवाज्ञया कवि जोधराज विर-
चितं यवनेश अलावद्दीन प्रति
हम्मीरजुद्धं समाप्तम्

---

१ माणक्य । २ खग्ग । ३ उद्धरत ।